आधुनिक कविता : प्रयोग से समकालीन तक

Course Code: M23HD11DC

Discipline Core Course
Postgraduate Programme in
Hindi Language and Literature

Self Learning Material

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University of Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

Vision

To increase access of potential learners of all categories to higher education, research and training, and ensure equity through delivery of high quality processes and outcomes fostering inclusive educational empowerment for social advancement.

Mission

To be benchmarked as a model for conservation and dissemination of knowledge and skill on blended and virtual mode in education, training and research for normal, continuing, and adult learners.

Pathway

Access and Quality define Equity.

SGOU

आधुनिक कविता : प्रयोग से समकालीन तक

Course Code: M23HD11DC

Semester-IV

SGOU

Discipline Core Course
MA Hindi Language and Literature
Self Learning Material
(with Model Question Paper Sets)

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

आधुनिक कविता : प्रयोग से समकालीन तक

Course Code: M23HD11DC
Semester- IV
Discipline Core Course
MA Hindi Language and Literature
for PG Programmes

Academic Committee

Prof. Dr. K. Ajitha
Dr. Jayachandran R.
Dr. R. Sethunath
Dr. Sunitha GopalaKrishnan
Dr. Herman P.J.
Dr. T. A. Anand
Dr. Praneetha P.
Dr. P.G. Sasikala
Dr. C. Balasubramanian

Development of Content

Christina Sherin Rose K.J.

Review and Edit

Dr. Anagha A.S.

Linguistics

Dr. Veena J.

Scrutiny

Christina Sherin Rose K.J.
Dr. Sudha T.
Dr. Indu G. Das
Dr. Krishna Preethy A.R.

Design Control

Azeem Babu T.A.

Cover Design

Lisha S.

Co-ordination

Director, MDDC :
Dr. I.G. Shibi
Asst. Director, MDDC :
Dr. Sajeevkumar G.
Coordinator, Development:
Dr. Anfal M.
Coordinator, Distribution:
Dr. Sanitha K.K.

Scan this QR Code for reading the SLM on a digital device.

Edition:
October 2025

Copyright:
© Sreenarayanaguru Open University 2025

ISBN 978-81-990686-8-1

9 788199 068681

All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from Sreenarayanaguru Open University. Printed and published on behalf of Sreenarayanaguru Open University by Registrar, SGOU, Kollam.

www.sgou.ac.m

Visit and Subscribe our Social Media Platforms

MESSAGE FROM VICE CHANCELLOR

Dear learner,

I extend my heartfelt greetings and profound enthusiasm as I warmly welcome you to Sreenarayanaguru Open University. Established in September 2020 as a state-led endeavour to promote higher education through open and distance learning modes, our institution was shaped by the guiding principle that access and quality are the cornerstones of equity. We have firmly resolved to uphold the highest standards of education, setting the benchmark and charting the course.

The courses offered by the Sreenarayanaguru Open University aim to strike a quality balance, ensuring students are equipped for both personal growth and professional excellence. The University embraces the widely acclaimed "blended format," a practical framework that harmoniously integrates Self-Learning Materials, Classroom Counseling, and Virtual modes, fostering a dynamic and enriching experience for both learners and instructors.

The university aims to offer you an engaging and thought-provoking educational journey. Major universities across the country typically employ a format that serves as the foundation for the PG programme in Hindi Language and Literature. Given Hindi's status as a widely spoken language throughout India, its pedagogy necessitates a particular focus on language skills and comprehension. To address this, the University has implemented an integrated curriculum that bridges linguistic and literary elements. The learner's priorities determine the endorsed proportion of these elements. Both the Self Learning Materials and virtual modules are designed to fulfil these requirements.

Rest assured, the university's student support services will be at your disposal throughout your academic journey, readily available to address any concerns or grievances you may encounter. We encourage you to reach out to us freely regarding any matter about your academic programme. It is our sincere wish that you achieve the utmost success.

Regards,
Dr. Jagathy Raj V. P.

01-08-2025

SGOU

Contents

BLOCK 01 प्रयोगवादी काव्य परंपरा..... 1

इकाई 1 : प्रयोगवाद - स्वरूप, विकास एवं प्रवृत्तियाँ..... 2

इकाई 2 : तार सप्तक की भूमिका..... 13

इकाई 3 : प्रमुख कवि - अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल..... 20

इकाई 4 : अज्ञेय - कलगी बाजरे की मुक्तिबोध - मुझे कदम कदम पर गिरिजा कुमार माथुर - पंद्रह अगस्त..... 29

BLOCK 02 नई कविता..... 45

इकाई 1 : नई कविता : अवधारणा और स्वरूप, प्रयोगवाद से संसक्ति और विरक्ति,
दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक की भूमिका 46

इकाई 2 : नई कविता की प्रवृत्तियाँ और उपलब्धियाँ, प्रयोगवादिता के स्थान पर प्रयोगशीलता,
नई कविता एवं अन्य काव्य आंदोलन - जनवादी कविता, अकविता, बीट कविता,
नवगीत परंपरा, नकेनवाद, काव्य भाषा का जनवादी रूप..... 56

इकाई 3 : प्रमुख कवि - धर्मवीर भारती, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह,
रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना..... 73

इकाई 4 : धर्मवीर भारती - टूटा पहिया
केदारनाथ सिंह - अकाल में दूब
सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - पोस्टर और आदमी
शमशेर बहादुर सिंह - काल, तुझसे होड़ है मेरी
रघुवीर सहाय - कोई और एक मतदाता
नरेश मेहता - घर की ओर..... 85

BLOCK 03 समकालीन कविता..... 102

इकाई 1 : समकालीन कविता की पृष्ठभूमि, समकालीन परिस्थितियाँ..... 103

इकाई 2 : साठोत्तरी कविता, साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका, आम आदमी कविता के केंद्र में..... 109

इकाई 3 : समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ..... 115

इकाई 4 : समकालीन हिन्दी कविता के प्रमुख कवि - धूमिल, विजयदेव नारायण साही,
लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, श्रीकांत वर्मा
धूमिल - मोचीराम
लीलाधर जगूड़ी - एक रात की ज़िंदगी
विजयदेवनारायण साही - मेरे साथ कौन कौन आता है
रामदरश मिश्र - मैं तो यहाँ हूँ..... 126

SGOU

BLOCK 04 हिन्दी कविता का वर्तमान परिदृश्य..... 152

इकाई 1 : अस्सी के बाद की हिन्दी कविता, परिवेश और स्वरूप, भूमंडलीकरण का प्रभाव, कथ्य और शिल्प की नई प्रवृत्तियाँ, प्रमुख कवि..... 153

इकाई 2 : कविता का प्रतिरोधात्मक स्वर - दलित, आदिवासी, किन्नर, स्त्री दलित - बस्स बहुत हो चुका - ओमप्रकाश वाल्मीकि आदिवासी - हरिराम मीणा - एकलव्य पुनर्पाठ किन्नर - अनीता मिश्रा - किन्नर स्त्री - अनामिका - स्त्री कवियों की जहालतें..... 178

इकाई 3 : अस्मितामूलक विमर्श के अन्य रूप - पारिस्थितिक, प्रवासी, बाल, वृद्ध ज्ञानेन्द्रपती - नदी और साबुन तेजेन्द्र शर्मा - मेरे पासपोर्ट का रंग अंजना संधीर - वे चाहती हैं लौटना..... 211

SGOU

BLOCK 01

प्रयोगवादी काव्य परंपरा

Unit 1: प्रयोगवाद - स्वरूप, विकास एवं प्रवृत्तियाँ

Unit 2: तार सप्तक की भूमिका

Unit 3: प्रमुख कवि - अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल

Unit 4: अज्ञेय - कलगी बाजरे की, मुक्तिबोध - मुझे कदम कदम पर, गिरिजा कुमार माथुर - पंद्रह अगस्त

SGOU

इकाई 1

प्रयोगवाद - स्वरूप, विकास एवं प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- प्रयोगवाद का मतलब समझता है
- प्रयोगवाद का स्वरूप से परिचय प्राप्त करता है
- प्रयोगवाद की विकास के बारे में जानकारी हाजिल करता है
- प्रयोगवाद की प्रमुख प्रवृत्तियों के बारे में जान सकता है

Background / पृष्ठभूमि

आधुनिक हिन्दी काव्य का शुभारम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में होता है। यह वह काल था जब हिन्दी साहित्य, विशेष रूप से काव्य, अपनी परम्परागत सीमाओं को छोड़कर नवीन भावभूमि पर प्रवेश कर रहा था। इस युग का आरंभ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है, जिन्होंने न केवल विषय-वस्तु में नवीनता लाने का प्रयास किया, अपितु अभिव्यक्ति की शैली को भी नया रूप देने की चेष्टा की।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1850 ई.) को आधुनिक हिन्दी कविता का जनक माना जाता है। उन्होंने रीतिकालीन परंपरा से हटकर नवयुग का उद्घोष किया। यद्यपि उस समय गद्य लेखन के लिए खड़ी बोली का प्रयोग आरम्भ हो चुका था, किन्तु पद्य की भाषा अब भी ब्रजभाषा ही बनी रही। इस कारण उनके नवाचारों की नवीनता पूर्णतः स्पष्ट नहीं हो पाई। फिर भी, भारतेन्दु ने हिन्दी कविता में सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना का बीजारोपण किया।

भारतेन्दु युग के पश्चात हिन्दी कविता के क्षेत्र में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का आगमन एक युग-निर्माता के रूप में हुआ। उन्होंने खड़ी बोली को काव्य की प्रमुख भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया और भाषा को अर्थवत्ता तथा भावप्रवणता से समृद्ध किया। विषय-वस्तु की दृष्टि से भी उन्होंने काव्य को ऐतिहासिक, नैतिक और सामाजिक सरोकारों से जोड़ा। इस युग में अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, श्रीधर पाठक तथा रामनरेश त्रिपाठी जैसे कवियों ने साहित्य को समृद्ध किया। 'प्रिय प्रवास', 'साकेत', 'यशोधरा', 'ऊजड़ ग्राम' जैसी रचनाओं ने इस युग को गौरव प्रदान किया।

द्विवेदी युग (1901-1920) के पश्चात हिन्दी काव्य में छायावादी युग (1921-1936) का उदय हुआ। यह युग द्विवेदी युग की शुष्क, इतिवृत्तात्मक शैली से भिन्न, भावात्मक, कल्पनाशील और वैयक्तिक अनुभूति से प्रेरित था। इस युग में कवि आत्मानुभूति, सौन्दर्यबोध और रहस्यवादी प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर विशिष्ट अनुभवों को चित्रित करते

हैं। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' तथा महादेवी वर्मा इस युग के प्रमुख स्तंभ थे।

सन् 1936 में लखनऊ में मुंशी प्रेमचन्द की अध्यक्षता में अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ का गठन हुआ, जिससे हिन्दी साहित्य में प्रगतिवादी युग की शुरुआत हुई। यह काव्यधारा समाज के यथार्थ, दलित वर्ग की पीड़ा, देशप्रेम और समकालीन सामाजिक समस्याओं के प्रति सजगता को अभिव्यक्त करती है। इस युग की प्रमुख प्रवृत्तियाँ थीं - यथार्थवाद, सामाजिक चेतना, दलितों के प्रति सहानुभूति, काव्य रूप तत्व की उपेक्षा तथा व्यंग्य और बौद्धिकता का प्रचलन। प्रगतिवाद ने कविता को जन-जीवन से जोड़ा और साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया।

प्रगतिवाद के पश्चात हिन्दी काव्य में 'प्रयोगवाद' नामक नवीन काव्यधारा का उदय हुआ। यह धारा पूर्ववर्ती परंपराओं की प्रतिक्रिया में उत्पन्न हुई। इसमें भाषा, शिल्प और विषय-वस्तु में निरंतर प्रयोग की प्रवृत्ति देखी गई। यह काव्यधारा व्यक्ति की आंतरिक उलझनों, मानसिक संघर्षों और आधुनिक जीवन की विडंबनाओं को एक नये रूप में प्रस्तुत करती है। प्रयोगवादी कवियों ने कविता को परम्परा से मुक्त कर स्वतंत्र और विविध प्रयोगों का मंच बनाया।

आधुनिक हिन्दी काव्य अनेक युगों और धाराओं से होकर गुज़रा है। भारतेन्दु युग से लेकर प्रयोगवाद तक हिन्दी कविता ने भाव, भाषा और दृष्टिकोण में आश्चर्यजनक विकास किया है। यह काव्य परम्परा अब भी गतिशील है, और समय के साथ बदलती सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुसार अपने को निरंतर नया रूप दे रही है। आधुनिक हिन्दी काव्य न केवल साहित्यिक विकास की कहानी है, बल्कि भारतीय समाज की बदलती चेतना का भी प्रमाण है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

प्रयोगवाद, अहंवादी, व्यक्तिगत, नग्न-यथार्थवाद, बौद्धिकता, निराशावाद

Discussion / चर्चा

1.1.1 प्रयोगवाद

▶ नई दिशा में अन्वेषण का प्रयास

प्रयोग शब्द का सामान्य अर्थ है, 'नई दिशा में अन्वेषण का प्रयास'। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रयोग निरंतर चलते रहते हैं। काव्य के क्षेत्र में भी पूर्ववर्ती युग की प्रतिक्रिया स्वरूप या नवीन युग-सापेक्ष चेतना की अभिव्यक्ति हेतु प्रयोग होते रहे हैं। सभी जागरूक कवियों में रूढ़ियों को तोड़कर या सृजित पथ को छोड़ कर नवीन पगडंडियों पर चलने की प्रवृत्ति न्यूनाधिक मात्रा में दिखाई पड़ती है। चाहे यह पगडंडी राजपथ का रूप ग्रहण न कर सके।

प्रयोगवाद का जन्म 'छायावाद' और 'प्रगतिवाद' की रूढ़ियों की प्रतिक्रिया में हुआ। डॉ. नगेन्द्र प्रयोगवाद के उत्थान के विषय में लिखते हैं, - "भाव क्षेत्र में छायावाद की अतिन्द्रियता और वायवी सौंदर्य चेतना के विरूद्ध एक वस्तुगत, मूर्त और ऐन्द्रिय चेतना का विकास हुआ और सौंदर्य की परिधि में केवल मसृण और मधुर के अतिरिक्त परुष, अनगढ़, भदेश का समावेश हुआ। छायावादी कविता में व्यक्तिगत तो थी, किंतु उस व्यक्तिगत में उदात्त भावना थी। इसके विपरीत प्रगतिवाद में यथार्थ का चित्रण तो था, किंतु उसका प्रतिपाद्य विषय पूर्णतः सामाजिक समस्याओं पर आधारित था और उसमें राजनीति की बू थी। अतः इन दोनों की प्रतिक्रिया स्वरूप प्रयोगवाद का उद्भव हुआ।

▶ रूढ़ियों की प्रतिक्रिया स्वरूप जन्म

1.1.2 प्रयोगवाद - स्वरूप एवं विकास

सन् 1943 या इससे भी पाँच-छः वर्ष पूर्व हिन्दी कविता में प्रयोगवादी कही जाने वाली कविता की पग-ध्वनि सुनाई देने लगी थी। कुछ लोगों का मानना है कि 1939 में नरोत्तम नागर के संपादकत्व में निकलने वाली पत्रिका 'उच्छृंखल' में इस प्रकार की कविताएँ छपने लगी थी जिसमें 'अस्वीकार', 'आत्यंतिक विच्छेद' और व्यापक 'मूर्ति-भंजन' का स्वर मुखर था तो कुछ लोग निराला की 'नये पत्ते', 'बेला' और 'कुकुरमुत्ता' में इस नवीन काव्य-धारा के लक्षण देखते हैं। लेकिन 1943 में अज्ञेय के संपादन में 'तार सप्तक' के प्रकाशन से प्रयोगवादी कविता का आकार स्पष्ट होने लगा और दूसरे तार सप्तक के प्रकाशन वर्ष 1951 तक यह स्पष्ट हो गया।

▶ 1943 में अज्ञेय के संपादन में 'तार सप्तक'

'छायावाद' और 'प्रगतिवाद' की प्रतिक्रिया स्वरूप प्रयोगवाद का उद्भव हुआ, जो घोर अहंवादी, व्यक्तिगत एवं नग्न-यथार्थवाद को लेकर चला। श्री लक्ष्मी कांत वर्मा के शब्दों में, प्रथम तो छायावाद ने अपने शब्दाडम्बर में बहुत से शब्दों और बिम्बों के गतिशील तत्त्वों को नष्ट कर दिया था। दूसरे, प्रगतिवाद ने सामाजिकता के नाम पर विभिन्न भाव-स्तरों एवं शब्द-संस्कार को अभिधात्मक बना दिया था। ऐसी स्थिति में नए भाव-बोध को व्यक्त करने के लिए न तो शब्दों में सामर्थ्य था और न परम्परा से मिली हुई शैली में। परिणामस्वरूप उन कवियों को जो इनसे पृथक थे, सर्वथा नया स्वर और नये माध्यमों का प्रयोग करना पड़ा। ऐसा इसलिए और भी करना पड़ा, क्योंकि भाव-स्तर की नई अनुभूतियाँ विषय और संदर्भ में इन दोनों से सर्वथा भिन्न थी।

▶ घोर अहंवादी, व्यक्तिगत एवं नग्न-यथार्थवाद

प्रयोगवाद नाम तारसप्तक में अज्ञेय के इस वक्तव्य से लिया गया- "प्रयोग सभी कालों के कवियों ने किए हैं। किंतु कवि क्रमशः अनुभव करता आया है कि जिन क्षेत्रों में प्रयोग हुए हैं, आगे बढ़कर अब उन क्षेत्रों का अन्वेषण करना चाहिए जिन्हें अभी छुआ नहीं गया था जिनको अभेद्य मान लिया गया है।"

इन अन्वेषणकर्ता कवियों में अज्ञेय ने तार सप्तक में ऐसे सात-सात कवियों को अपनाया "जो किसी एक स्कूल के नहीं हैं, किसी एक विचारधारा के नहीं हैं, किसी मंजिल पर पहूँचे हुए नहीं हैं, अभी राही हैं- राही नहीं, राहों के अन्वेषी। काव्य के प्रति एक अन्वेषी का दृष्टिकोण उन्हें समानता के सूत्र में बाँधता है।" प्रयोगवादी कवियों

▶ राहों के अन्वेषी

का नए के प्रति यह आग्रह ही इन्हें प्रयोगवादी बनाता है। प्रयोगवाद के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए इस धारा के कवियों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं:- अज्ञेय की प्रयोगशील कविता में नए सत्यों, नई यथार्थताओं का जीवित बोध भी है, उन सत्यों के साथ नए रागात्मक संबंध भी और उनको पाठक या सहृदय तक पहूँचाने यानी साधारणीकरण की शक्ति भी है।

▶ सप्तकों की संख्या चार है

प्रयोगवाद को आकार देने में जहाँ सप्तकों की भूमिका रही वहीं अनेक पत्रिकाओं ने भी इसकी राह को सरल बनाया। तार सप्तकों की संख्या चार है। पहला सप्तक 1943 में, दूसरा 1951 में, तीसरा 1959 में और चौथा सप्तक 1979 में प्रकाशित हुआ। पत्रिकाओं में 'प्रतीक', 'पाटल', 'दृष्टिकोण', 'कल्पना', 'अजंता', 'राष्ट्रवाणी', 'धर्मयुग', 'नई कविता', 'निकष', 'ज्ञानोदय', 'कृति', 'लहर', 'निष्ठा', 'शताब्दी', 'ज्योत्स्ना', 'आजकल', 'कल्पना' आदि हैं।

▶ प्रयोगवाद को 'प्रतीकवाद' नाम से भी अभिहित किया गया

प्रयोगवाद को प्रतीकों की प्रधानता और नवीन प्रतीकों को अपनाने के कारण 'प्रतीकवाद' नाम से भी अभिहित किया गया। प्रयोगवाद से कुछ लोगों का अभिप्राय 'रूपवाद' अथवा 'फार्मलिज्म' तक सीमित है। लेकिन रूपवाद प्रयोगवाद की शाखा-मात्र है। क्योंकि प्रयोगवादी केवल रूप-विधान या तकनीक पर ही ध्यान नहीं देते उसमें अन्य तत्व भी मौजूद हैं।

▶ नकेनवादी - तीन कवि

प्रयोगवाद के भीतर ही 'प्रपद्यवाद' या 'नकेनवाद' भी पनपा, लेकिन वह प्रयोगवाद की एक छोटी शाखा-मात्र बन कर रह गया। नकेनवाद बिहार में प्रचलित हुआ। 'नलिन विलोचन शर्मा', 'केसरीकुमार' और 'नरेश' नामों के प्रथम अक्षर से बना है नकेन। नकेनवादी तीनों कवियों ने प्रयोग-दशसूत्री में प्रयोगवाद और प्रयोगशीलता में अंतर स्पष्ट किया है। ये प्रयोग को ही काव्य का एकमात्र लक्ष्य मानते हैं।

▶ 1954 में 'नई कविता'

प्रयोगवादी कविता जब काव्य जगत में स्वीकृत हो गई तो उसे नई कविता के नाम से अभिहित किया गया। डॉ. जगदीश चंद्र गुप्त और श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी ने 1954 में 'नई कविता' नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन शुरु किया। इसने प्रयोगवादी कविता को नई कविता का नाम दिया। कुछ आलोचक नई कविता और प्रयोगवाद में कोई अंतर नहीं मानते जबकि कुछ का मानना है कि दोनों को एक समझने की भूल नहीं करनी चाहिए। अध्ययन की सुविधा केलिए हम इसे अलग अलग रखकर ही विचार करते हैं।

1.1.3 प्रयोगवादी कविता की मूल प्रवृत्तियाँ

▶ सत्य की खोज, साधारणीकरण

प्रयोगवाद के कुछ प्रमुख मन्तव्य हैं। जैसे- सत्य की खोज, साधारणीकरण - (सत्य को पाठकों तक सम्पूर्णता में पहुँचाना), परम्पराओं को हूबहू स्वीकार न करते हुए नई संभावनाओं और अनुभूतियों को नए प्रयोग द्वारा काव्य में व्यक्त करना, भाषा का परिमार्जन एवं संस्करण और नए प्रतीकों व उपमानों का खुलकर प्रयोग। प्रयोगवाद की कुछ मुख्य प्रवृत्तियाँ निम्न प्रकार हैं -

SGOU

1.1.3.1 व्यक्तिवादी दृष्टिकोण

▶ व्यक्तिवाद

घोर व्यक्तिवाद प्रयोगवाद की प्रमुख प्रवृत्ति है। प्रयोगवादी कवि व्यापक जन-जीवन के अंकन के फेर में न पड़कर अपने जीवन के जिए हुए विभिन्न दर्दों, अनुभवों को अंकित करना पसंद करता है। यह पीड़ा-बोध इन कवियों में उतना गहरा है कि वे इस पीड़ा को चिरन्तन सत्य के रूप में स्थापित करते हैं -

'दुःख सबको मांजता है।
और
चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना, वह न जाने, किन्तु
जिसको मांजता है
उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखे।'

- अज्ञेय

प्रयोगवादी कवियों ने 'स्व' की आड़ में आत्म-विज्ञापन का प्रयास किया है -

'साधारण नगर के
एक साधारण घर में
मेरा जन्म हुआ
बचपन बीता अति साधारण
और साधारण खान-पान
साधारण वस्त्र वास' *-भारत भूषण अग्रवाल*

▶ अहंवादी व्यक्तिवाद

व्यक्तिवाद की प्रधानता भारतेन्दु, द्विवेदी, छायावादी युग में भी रही परन्तु प्रयोगवादी कवियों का अहंवादी व्यक्तिवाद न होकर उसमें उदात्त लोक व्यापक भावना से अभिभूत था। अज्ञेय की 'नदी के द्वीप' और 'यह दीप अकेला' रचनाओं में अहंवादी व्यक्तिवादी तत्व स्पष्ट परिलक्षित है। अज्ञेय इसके प्रमुख वक्ता हैं। प्रयोगवाद के धुरंधर कवि अज्ञेय के काव्य में व्यक्तिवाद की प्रधानता देखने को मिलती है। उन्होंने व्यक्ति के अहं को समाज के समक्ष रख कर व्यक्त किया।

1.1.3.2 अश्लील, अस्त्रचिकर, असभ्य विषयों का चित्रण

▶ मन की कुंठाओं का मुक्त अभिव्यक्ति

ऐसी कोई भी दूषित प्रवृत्ति नहीं है जिसका चित्रण इन प्रयोगवादी कवियों ने न किया हो। ये कवि अपने मन की कुंठाओं को मुक्त अभिव्यक्ति प्रदान करना चाहते हैं। इनकी इन कुंठाओं का समाज पर क्या प्रभाव पड़ेगा इसकी इन्हें तनिक भी परवाह नहीं।

1.1.3.3 यथार्थवादी

▶ यथार्थवादिता

प्रयोगवादी कवि यथार्थवादी है। वह भावुकता के स्थान पर ठोस बौद्धिकता को स्वीकारता है। मध्य वर्गीय जीवन की सम्पूर्ण जड़ता, अनास्था, कुण्ठा, हार, मानसिक संघर्ष की सच्चाई को बड़ी चतुराई और बौद्धिकता के साथ ये कवि अभिव्यक्त करते हैं। कल्पना शीलता के स्थान पर यथार्थ की प्राधान्यता इस काव्य की विशिष्ट प्रवृति है। दृष्टि की नवीनता प्रयोगवाद का आधार है। मौलिकता, नए विचारों का महत्व, सत्य

की चाहत आदि प्रयोगवादी कविता की विशिष्टता है। यों तो मध्य वर्गीय जन-जीवन की पीड़ा के अनेक स्तर इन कविताओं में उभरे हैं किन्तु दमित काम वासना का प्राधान्य अधिक परिलक्षित होता है।

1.1.3.4 ठोस बौद्धिकता व शुष्कता

▶ सरसता और रागात्मकता का अभाव

प्रयोगवादी कविता में सरसता और रागात्मकता का अभाव है, बौद्धिकता को अधिक महत्व दिया गया है। अति बौद्धिकता की यह कविता पाठकों के हृदय को छूती नहीं बल्कि उनकी बुद्धि को परेशान ज़रूर करती है। अत्यधिक विचारात्मकता के कारण इसमें साधारणीकरण का अभाव प्रतीत होता है। डॉ. धर्मवीर भारती के शब्दों में प्रयोगवादी कविता में भावना है किन्तु हर भावना के सामने प्रश्नचिह्न लगा है। इसी प्रश्न चिह्न को आप बौद्धिकता कह सकते हैं।'

अज्ञेय की 'हरी घास पर क्षण भर' कविता में भावुकता की जगह बौद्धिकता ही अधिक परिलक्षित होती है-

'चलो उठें अब
अब तक हम थे बंधु
सैर को आए
और रहे बैठे तो
लोग कहेंगे
धुँधले में दुबके दो प्रेमी बैठे हैं।
वह हम हों भी तो यह हरी घास ही जाने।'

इसमें कवि ने स्वयं अपनी ही स्थिति को स्पष्ट करते हुए समाज की शंका को व्यक्त किया है क्योंकि वह धुँधलके में छिप कर किसी के साथ बैठा है।

लोक मर्यादाओं की उपेक्षा प्रयोगवादी कवियों का वर्ण्य विषय रहा है। उदाहरणार्थ -

'मेरे मन की अंधियारी कोठरी में
अतृप्त आकांक्षा की वेश्या बुरी तरह खांस रही है।'

- अनंत कुमार

▶ अश्लील प्रवृत्तियों का नग्न रूप

प्रेम का कोई उदात्त रूप उक्त पंक्तियों में नहीं दिखाई पड़ता है किन्तु अश्लील प्रवृत्तियों का नग्न रूप स्पष्ट परिलक्षित होता है। 'तार सप्तक' में अज्ञेय का कथन है कि आधुनिक युग का साधारण व्यक्ति सेक्स सम्बन्धी भावनाओं से आक्रांत है। उसका मस्तिष्क दमन की गई सेक्स की भावनाओं से भरा हुआ है। इसीलिए कविता में इस प्रकार की बात आई है। छायावादी कवियों ने कल्पना लोक में नारी के साथ साहचर्य स्थापित कर अपनी प्यास बुझाई किन्तु यथार्थ आग्रही कवियों के लिए यह संभव न था इन कवियों ने दमित यौन भावनाओं के नग्न रूप को स्पष्ट कर दिया। फ्रायड का काम सिद्धान्त इनके जीवन का दर्शन बन गया। अज्ञेय, शमशेर सिंह, गिरिजा कुमार माथुर और भारती के नाम इसी संदर्भ में लिए जा सकते हैं।

1.1.3.5 निराशावाद

► निराशा से ग्रस्त

प्रयोगवादी कवि निराशा से पूरी तरह घिरा हुआ है। उसकी नज़र केवल वर्तमान पर टिकी है। उसके लिए ये संसार क्षणिक है। कल का उसकी दृष्टि में कोई महत्व नहीं है। प्रयोगवादी कविता ह्रासोन्मुख मध्यम वर्गीय समाज के जीवन का चित्र है। इनके कवियों ने जिस नए सत्य के शोध और प्रेषण के नए माध्यम की खोज की घोषणा की थी वह सच इसी मध्यम वर्गीय समाज के व्यक्ति का सत्य था। इसी यथार्थ सत्य को कवि ने अभिव्यक्ति दी जिसे वह स्वयं भोगता आया है। वर्तमान क्षण में वह सब कुछ पा लेना चाहता है

'आओ हम उस अतीत को भूलें
और आज की अपनी रग रग की अन्तर को छू लें
छूलें इसी क्षण
क्योंकि कल वे नहीं रहेंगे।
क्योंकि कल हम भी नहीं रहेंगे।'

जीवन की बड़ी बड़ी सैद्धान्तिक बातें और नैतिकता के बड़े बड़े फलसफे ज्ञान - विज्ञान के क्षेत्र में भले ही उनकी उपयोगिता हो किन्तु कला के क्षेत्र में कवि की 'स्व' की आंच में खपे बिना न तो वह खप सकते है और न ही उपयोगी हो सकते हैं। इसीलिए प्रयोगवादी कवि इन बड़ी बड़ी बातों से अपने को दूर ही रखता आया है।

1.1.3.6 वैचित्र्य चित्रण व्यापक सौन्दर्य भावना

► वैचित्र्य चित्रण

प्रयोगवादी अधिसंख्य कवि वैचित्र्य चित्रण की प्रकृति को साथ लेकर चले हैं। विलक्षणता, कौतूहल, आश्चर्य, दुरूहता से अपनी नवीनता व्यक्त करना इन कवियों का लक्ष्य रहा है। इनके लिए काव्य कला वैचित्र्य प्रदर्शन का माध्यम भी रही है। यथा -

'अगर कहीं मैं तोता होता!
तो क्या होता
तो क्या होता'
या
'ई से ईश्वर
उ से उल्लू
नहीं जी वही पंछी
जो देखता है रात भर'

प्रयोगवादी काव्य में सौन्दर्य बोध के मानदण्ड बदले हैं, प्रयोगवादी कवि ने आगे बढ़ कर सौन्दर्य की भावना को व्यापक विस्तार दिया -

'चूड़ी का टुकड़ा,
गरम पकौड़ी
बांस की टूटी हुई तड़ी,
फटी ओढ़नी की दो चार चिंधियाँ भी'

▶ तुच्छ वस्तु में भी सौन्दर्य

प्रयोगवादी कवियों की सौन्दर्य भावना इन्हीं वस्तुओं में अटक गई। फटी ओढ़नी की दो चार चिंधियों में कवि को सौन्दर्य दिखाई देता है। इन कवियों की यह अवधारणा है कि कोई भी वस्तु निन्दनीय या उपेक्षणीय नहीं है। तुच्छ वस्तु में भी कवि सौन्दर्य के दर्शन करता है। अति उपेक्षित वस्तु का सुन्दरतापूर्ण वर्णन करना इन कवियों की विशेषता है। एक उदाहरण दृष्टव्य है-

'हवा चली
छिपकली की टांग
मकड़ी के जाले में फंसी रही फंसी रही।'

- मेघराज इन्द्र की हवा चली कविता

1.1.3.7 उपमानों की नूतनता

▶ नवीन उपमान

प्रयोगवादी कवियों ने नवीन उपमानों को अपने काव्य में स्थान दिया। घिसे पिटे पुराने उपमानों को त्याग दिया क्योंकि वे यांत्रिक युग की जटिलताओं के अनुकूल नहीं थे - कवि कहने को मजबूर हो गए कि -

'ये उपमान मैले हो गए हैं
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।'

रूढ़ उपमानों का त्याग कर नवीन उपमा को कवियों ने स्थान दिया है। जैसे -

'चांदनी उस स्पए सी है कि जिसमें
चमक है पर खनक गायब है।'

या

'ये फूल कचनार के
प्रतीक तेरे प्यार के'

- अज्ञेय

नवीन उपमानों के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं -

- 'पूर्व दिसि में हड्डी के रंग का बादल लेटा है।'
- 'बासी ककड़ी सी अलसाई।'
- 'मेरे सपने इस तरह टूट गए जैसे भुजा हुआ पापड़'
- 'प्यार का बल्ब फ्यूज हो गया।'
- 'एक रेकार्ड सी बनती हुई ज़िन्दगी'
- 'सड़ा हुआ नारियल सा खाली मस्तिष्क तुम्हारा'

1.1.3.8 शैलीगत या शिल्पगत विशेषता

विलक्षण स्वच्छन्दता नवीन उपमानों के प्रयोग एवं पाण्डित्य प्रदर्शन के कारण प्रयोगवादी कविता में भाषा की दुरूहता - जटिलता एवं खड़ी बोली के व्याकरण रूप

▶ दुरूह, जटिल भाषा

की उपेक्षा हुई है। किन्तु कहीं कहीं कवियों ने भाषा के अच्छे प्रयोग भी किए हैं। नवीन प्रयोगों के कारण इन्होंने अपनी भाषा में दर्शन, मनोविज्ञान, भूगोल, विज्ञान तथा बाजारू बोली का भी जम कर प्रयोग किया है।

▶ असाहित्यिक

कविता में विलक्षणता को स्थान देने के कारण भाषा, शैली व छन्द के क्षेत्र में सम्पन्ना की जगह आधुनिक सांस्कृतिक शब्दों का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित है। भाषा एवं भाव की दृष्टि से प्रयोगवादी कविताएँ असाहित्यिक अधिक प्रतीत होती हैं। इन कवियों ने खिचड़ी भाषा का प्रयोग किया है। उक्त विवेचन से यह अर्थ नहीं निकालना चाहिए कि प्रयोगवादी कवियों ने कुछ साहित्य सृजन किया ही नहीं या वह अनुपयोगी व निरर्थक है। बात ऐसी नहीं हैं उसमें साहित्य की प्रगति उत्कृष्टता के बीज विद्यमान हैं अज्ञेय जी का तो स्पष्ट कहना है "प्रयोगशील कविता में नए सत्यों या नई यथार्थताओं का बोध है। उन सत्यों के साथ नए रागात्मक सम्बन्ध भी हैं और उनको पाठक या सहृदय तक पहुँचाने की शक्ति यानी साधारणीकरण भी है।"

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

वादों के विरुद्ध प्रतिक्रिया स्वरूप हिन्दी साहित्य जगत में प्रयोगवाद का जन्म हुआ। प्रयोग के क्षेत्र में नवीन उपलब्धियों केलिए यह काव्यधारा जाना जाता है। डॉ. राम स्वरूप चतुर्वेदी का कहना है "प्रयोगवाद प्रमुखतः कविता का आन्दोलन था जो बाद में नई कविता के रूप में परिणत हो गया।" डॉ. शिवदान सिंह चौहान प्रयोगवाद को 'त्रिशंकुओं का साहित्य' कहते हैं। भिन्न भिन्न साहित्यकारों ने अलग अलग दृष्टिकोण से प्रयोगवादी कविता को आंका है। किन्तु यह सच है कि यथार्थ मानव की रचना के लिए उसके जटिल परिवेश को वर्णित करना कवि का धर्म है। प्रयोगवादी कविता ने मानव की समस्त हीनता और महत्ता के सन्दर्भ में सहानुभूतिमय दृष्टि से सोचने के लिए एक नया मार्ग प्रशस्त किया।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. प्रयोगवाद से क्या तात्पर्य है?
2. प्रयोगवाद की स्वरूप और विकास पर टिप्पणी लिखिए।
3. प्रयोगवाद और अज्ञेय पर टिप्पणी लिखिए।
4. प्रयोगवाद की प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।
5. प्रयोग की दृष्टि से प्रयोगवादी कविताओं की मूल्यांकन कीजिए।
6. तार सप्तक में संकलित कवियों की विशेषताएँ क्या क्या हैं?

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 2

तार सप्तक की भूमिका

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- तार सप्तक के बारे में जानकारी प्राप्त करता है
- प्रयोगवाद एवं तार सप्तक की संबंध समझता है
- प्रयोगवाद में तार सप्तक की भूमिका समझता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के इतिहास में वर्ष 1943 में एक अविस्मरणीय घटना घटी जिसने साहित्य के इतिहास को एक नया मोड़ प्रदान किया। 1943 में अज्ञेय के संपादन में 'तार सप्तक' नामक काव्य संग्रह का प्रकाशन हुआ जिसके लोकप्रियता ने यह संकेत किया कि परिवर्तन अपनी सत्यता के अनुसार आकार ग्रहण करने को आतुर है।

तार सप्तक में सात कवियों की कविताएँ संकलित थीं जो पूर्णतः नवीन भाव बोध की पृष्ठभूमि पर आधारित थीं। तार सप्तक की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं "संग्रहित कवि सभी कविता को प्रयोग का विषय जानते हैं, जो यह दावा नहीं करते कि उन्होंने काव्य का सत्य पा लिया है केवल अन्वेषी ही अपने को पाते हैं।" अज्ञेय के इन कथनों से साहित्य में प्रयोगशीलता जैसे शब्दों की चर्चा होने लगी थी तथा प्रयोगवाद अपना आकार ग्रहण करने लगा था।

प्रयोगवाद के साथ अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक की चर्चा अत्यंत स्वभाविक विषय है। एक के बिना जैसे दूसरे का अस्तित्व ही नहीं है। 'तार सप्तक' के संपादकीय में अज्ञेय कहते हैं कि "इसमें संग्रहित कवि सभी ऐसे होंगे जो कविता को प्रयोग का विषय मानते हैं। इनके तो एकत्र होने का कारण ही यही है कि वे किसी एक स्कूल के नहीं है किसी मंजिल पर पहूँचे हुए नहीं है, अभी राही हैं - राही नहीं, राहों के अन्वेषी हैं।"

परन्तु इससे यह अर्थ कदापि न था कि तार सप्तक के कवि मात्र प्रयोग को ही आखिरी सत्य मानते हैं। प्रयोग के लिए प्रयोग को अज्ञेय ने स्वीकार नहीं किया। वरन सप्तककार प्रयोग को सत्यान्वेषण का माध्यम स्वीकार करते हैं। तार सप्तक में कवियों ने काव्य रचना की पुरातन रूढ़ियों को तोड़ने के साथ अर्थात शिल्प के साथ-साथ अंतर्वस्तु के भी नवीन प्रतिमान गढ़े थे। नए कवि काव्य की सीमित दायरों को तोड़कर युगीन सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त करने के लिए एक नवीन दिशा में नवीन शिल्प, कथ्य, प्रतीक, उपमान तलाशने के लिए बेचैन थे।

Keywords / मुख्य बिन्दु

तारसप्तक, प्रयोगवाद, राही, अन्वेषी, दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक, चौथा सप्तक

Discussion / चर्चा

1.2.1 तारसप्तक और प्रयोगवाद का समारंभ

▶ सात कवियों का एक संकलन

जिस समय प्रगतिवादी काव्य धारा अपने विकास की ऊँची-नीची पगडंडियों को पार कर रही थी, उसी समय सन् 1943 ई. में अज्ञेय के सम्पादन में 'तार सप्तक' नामक सात कवियों का एक संकलन प्रकाशित हुआ। इस संकलन में छपे सम्पादक-कवि, अज्ञेय की भूमिका तथा वक्तव्य में एवं अन्य छः कवियों के वक्तव्यों में काव्यगत प्रयोगों की जो विस्तृत चर्चा की गई, उससे कालान्तर में इन कवियों की प्रयोगशील काव्य प्रवृत्ति को 'प्रयोगवाद' की संज्ञा दी गई।

संग्रह की 'विकृति और पुनरावृति' शीर्षक भूमिका में कवि एवं सम्पादक अज्ञेय ने लिखा था - "मूल सिद्धान्त यह था कि संगृहीत सभी कवि ऐसे है जो कविता को प्रयोग का विषय मानते हैं- जो यह दावा नहीं करते कि काव्य का सत्य उन्होंने पा लिया है के वल अन्वेषी ही अपने को मानते हैं।" इसी आधार पर संग्रह को व्यावहारिक रूप दिया गया और वह प्रकाश में आया।

▶ राही नहीं, राहों के अन्वेषी

अज्ञेय ने फिर आगे लिखा 'तारसप्तक' में सात कवि संगृहीत हैं। सातों एक दूसरे से परिचित हैं। बिना इसके इस ढंग का सहयोग कैसे होता? किन्तु इससे यह परिणाम न निकाला जाय कि वे कविता के किसी एक स्कूल के कवि हैं या साहित्य -जगत के किसी गुट अथवा दल के सदस्य वा समर्थक हैं। बल्कि उनके एकत्र होने का कारण यही है कि वे किसी एक स्कूल के नहीं है, किसी मंजिल पर पहुँचे नहीं हैं, अभी राही हैं- राही नहीं राहों के अन्वेषी। उनमें मतैक्य नहीं है, सभी महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी राय अलग है - जीवन के विषय में, समाज और धर्म और राजनीति के विषय में, वस्तु और शैली के, छन्द और तुक के, कवि के दायित्वों के प्रत्येक विषय में उनका आपस में मतभेद है। यहाँ तक कि हमारे जगत के ऐसे सर्वमान्य और स्वयं सिद्ध मौलिक सत्यों को भी वे समान रूप से स्वीकार नहीं करते, जैसे लोकतन्त्र की आवश्यकता, उद्योगों का समाजीकरण, यान्त्रिक युद्ध की उपयोगिता, वनस्पति घी की बुराई, अथवा काननवाला और सहगल के गानों की उत्कृष्टता इत्यादि। वे सब परस्पर एक दूसरे पर, एक दूसरे की जीवन - परिपाटी पर और यहाँ तक कि एक-दूसरे के मित्रों और कुत्तों पर भी हँसते हैं।"

▶ अन्वेषी का दृष्टिकोण

काव्य के प्रति एक अन्वेषी का दृष्टिकोण उन्हें समानता के सूत्र में बाँधता है। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि प्रस्तुत संग्रह की सब रचनाएँ प्रयोगशीलता के नमूने हैं या कि इन कवियों की रचनाएँ रूढि से अछूती हैं, या कि यही केवल प्रयोगशील हैं। दावा केवल इतना है कि ये सातों अन्वेषी हैं।

अज्ञेय के अतिरिक्त गजानन माधव मुक्तिबोध, गिरिजाकुमार माथुर तथा प्रभाकर माचवे ने अपने वक्तव्यों में प्रगतिशीलता पर ज़ोर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि आलोचकों ने इस नवीन काव्य प्रवृत्ति को 'प्रयोगवाद' नाम देकर विस्तृत चर्चा और परिचर्चा का विषय बना दिया। इस संकलन में अज्ञेय के अतिरिक्त अन्य छः कवि सर्वश्री –

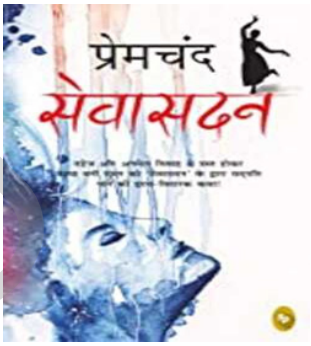

▶ तार सप्तक के कवि

1. नेमिचन्द्र जैन
2. गजानन माधव मुक्तिबोध
3. भारतभूषण अग्रवाल
4. प्रभाकर माचवे
5. गिरिजाकुमार माथुर
6. रामविलास शर्मा

इसके बाद तीन और सप्तक प्रकाशित हुए। इन्होंने प्रयोगवाद की हिन्दी काव्य - जगत् में पूर्ण प्रतिष्ठा कर दी। तीनों सप्तकों का विवरण निम्न प्रकार है -

1. **दूसरा सप्तक** (1951)

कवि

▶ दूसरा सप्तक के कवि

1. भवानी प्रसाद मिश्र
2. शकुन्त माथुर
3. हरिनारायण व्यास
4. शमशेर बहादुर सिंह
5. नरेश मेहता
6. रघुवीर सहाय
7. धर्मवीर भारती

SGOU

2. **तीसरा सप्तक** (1959)

कवि

1. प्रयागनारायण त्रिपाठी
2. कीर्ति चौधरी
3. मदन वात्स्यायन
4. केदारनाथ सिंह
5. कुँवरनारायण
6. विजयदेव नारायण साही
7. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

▶ तीसरा सप्तक के कवि

3. **चौथा सप्तक** (1978)

कवि

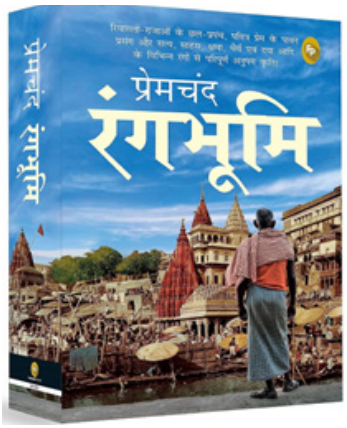

1. अवधेश कुमार
2. राजकुमार कुंभज
3. स्वदेश भारती
4. नंदकिशोर आचार्य
5. सुमन राजे
6. श्रीराम शर्मा
7. राजेन्द्र किशोर

▶ चौथे सप्तक के कवि

1.2.2 प्रयोगवाद का प्रवर्तक कौन?

प्रयोगवाद का प्रवर्तक कौन हैं? इस पर भी विस्तार से विवाद हुआ है। परस्पर विरोधी दावे किये गये हैं और काव्य प्रयोगों की बात लेकर प्रसाद, पन्त और निराला आदि तक को इसका प्रवर्तक माना गया है। परन्तु इन लोगों में से किसी ने भी प्रयोगों के नाम पर किसी साहित्यिक प्रवृत्ति को संगठित रूप से लोगों के सामने लाने का प्रयत्न नहीं किया। इसलिए इनका नाम इस वाद के प्रवर्तक के रूप में नहीं लिया जा सकता। प्रयोगशीलता और प्रयोगवाद की चर्चा चूंकि 'तारसप्तक' से ही प्रारम्भ हुई और उसके प्रस्तुतकर्ता तथा सम्पादक अज्ञेय ही थे, इसलिये बहुमत ने उन्हें इस वाद का प्रवर्तक स्वीकार कर लिया। यद्यपि अज्ञेय ने इस वाद की सत्ता से सदा इनकार किया है। उनका कहना है कि प्रयोग

▶ अज्ञेय

SGOU

कोई साध्य नहीं है। ठीक इसी तरह कविता का भी कोई वाद नहीं है। हम वादी नहीं रहे, न ही हैं। उद्योग अपने आप में इष्ट या साध्य नहीं है। ठीक इसी तरह कविता का भी कोई वाद नहीं है। कविता भी अपने आप में इष्ट या साध्य नहीं है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

हिन्दी साहित्य की इतिहास में तारसप्तक का प्रकाशन एक स्वर्णिम घटना के रूप में अंकित है। सप्तक चतुष्टय न केवल प्रयोगवाद बल्कि हिन्दी साहित्य के इतिहास को एक नवीन दिशा एवं उमंग प्रदान किया है। निष्कर्ष रूप में हम देखें तो लगता है हिन्दी साहित्य का इतिहास में सबसे बड़ा योगदान वाद विशेष से मुक्ति है हालांकि आलोचकों ने वाद विशेष से मुक्ति को ही एक वाद का प्रतीक माना है। वस्तुतः तार सप्तक में मार्क्सवादी, समाजवादी, गाँधीवादी, अस्तित्ववादी, क्षणवादी जैसे सभी विचारधाराओं के कवि शामिल हुए। तार सप्तक ने न केवल प्रयोगवाद वरन हिन्दी साहित्य की दिशा और दशा में क्रांतिकारी परिवर्तन किए थे। फिर चाहे वस्तु स्तर पर क्षण का महत्व हो, लघु मानव की स्थापना हो, निजी व्यक्तित्व का चित्रण हो, शिल्प में मुक्त छंद का प्रयोग हो, सरल सहज भाषा का प्रयोग, काव्य की अलंकरण से मुक्ति आदि। तार सप्तक नई राहों का अन्वेषण था, अज्ञेय के अनुसार अभेद्य की ओर प्रसरण था और इन्हीं राहों से आगे बढ़कर प्रयोगवाद ने स्वरूप धारण किया था निश्चित रूप से यह कह सकते हैं कि तार सप्तक प्रयोगवाद का प्रस्थान बिंदु था।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. प्रयोगवाद की उद्‌भव एवं विकास में 'तार सप्तक' की भूमिका क्या है?
2. 'तार सप्तक' में शामिल प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
3. प्रयोगवाद के प्रवर्तक अज्ञेय जी का प्रयोग के संबंध में और 'तार सप्तक' में सम्मिलित कवियों के संबंध में क्या राय है?
4. चारों सप्तकों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी

6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

प्रमुख कवि - अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- प्रयोगवाद के प्रमुख कवियों की परिचय प्राप्त करता है
- अज्ञेय का जीवन परिचय प्राप्त करता है
- मुक्तिबोध से परिचय प्राप्त करता है
- गिरिजा कुमार माथुर के संबंध में जानकारी प्राप्त होता है
- प्रभाकर माचवे के बारे में समझता है
- भारतभूषण अग्रवाल के बारे में जानता है

Background / पृष्ठभूमि

किसी भी साहित्य धारा को अच्छी तरह से समझने केलिए उससे जुड़े साहित्यकारों एवं उनकी विशेषताओं को समझना आवश्यक है। तभी किसी साहित्यधारा का सम्यक ज्ञान हमें प्राप्त हो सकता है। प्रत्येक साहित्य धारा एवं काव्य धारा का अपना अलग एवं विशेष वैशिष्ट्य होता है। उस समय के कवियों में इन विशेषताओं का झलक हम देख सकते हैं। इसी प्रकार हिन्दी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल में प्रयोगवादी कवियों का परिचय प्राप्त करने से उस काव्य धारा के सम्यक परिचय प्राप्त किया जा सकता है। प्रयोगवादी कवियों में प्रमुख एवं तार सप्तक में शामिल कवि हैं - अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल आदि। इनका संक्षिप्त परिचय आगे दिया जा रहा है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल

SGOU

Discussion / चर्चा

1.3.1 प्रयोगवाद के प्रमुख कवि

1.3.1.1 सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' (7 मार्च 1911 ई. - 1987 ई.)

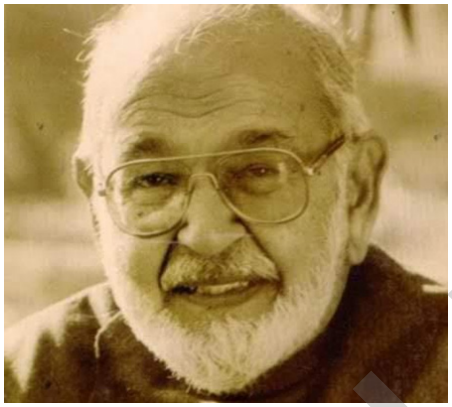

अज्ञेय का जन्म उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के प्रसिद्ध बौद्धस्थल कसया के पास एक पुरातत्व शिविर में हुआ था। मैट्रिक तक की शिक्षा घर पर हुई। बी. एस-सी. तक शिक्षा पाने के बाद इन्होंने अंग्रेज़ी तथा हिन्दी-साहित्य का स्वाध्याय किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया। इण्टरमीडिएट और बी. एस-सी. करके क्रान्तिकारी सगंठन में शामिल हो गए और गुप्त कारखाने में बम बनाने का काम करने लगे। पुलिस ने गिरफ्तारी के लिए 500 रुपये का पुरस्कार घोषित कर रखा था। अमृतसर में पकड़े गए। बाद में आज़ाद हिन्द फौज में शामिल हुए। अज्ञेय का जीवन यायावरी और क्रांतिकारी रहा है। इसीलिए ये किसी व्यवस्था से बंध कर नहीं रह सके। 1943 से 1946 तक इन्होंने सेना में नौकरी की। कई बार ये सांस्कृतिक कार्यों के लिए अमेरिका गये। कुछ दिनों तक ये जोधपुर विश्वविद्यालय में भी कार्यरत रहे। 'सैनिक', 'विशाल भारत', 'प्रतीक', 'वाक' 'दिनमान', 'एवरीमैन' और 'नव भारत टाइम्स' के सम्पादक रहे। देश-विदेश के विविध विश्वविद्यालयों में संस्कृति, कला और साहित्य के अतिथि अध्यापक रहे। कवि के साथ-साथ ये प्रख्यात कथाकार, समीक्षक और चिंतक-विचारक भी हैं। यायावरी उनके स्वभाव में थी। साहित्य अकादमी और भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कारों से सम्मानित वात्स्यायन अनेक शिल्पों और कलाओं के अच्छे जानकार भी थे।

▶ अज्ञेय का जीवन यायावरी और क्रांतिकारी रहा है

रचनाएँ हैं- सदानीरा भाग 1, 2 कविताएँ; छोड़ा हुआ रास्ता और लौटती पगडंडियाँ (सम्पूर्ण) कहानियाँ; 'शेखर एक जीवनी' भाग 1, 2, 'नदी के द्वीप', 'अपने-अपने अजनबी' उपन्यास; अरे यायावर रहेगा याद, 'एक बूँद सहसा उछली' यात्रावृत्तान्त; 'स्मृतिलेखा' संस्मरण; 'त्रिशंकु', 'आत्मनेपद', 'आलबाल', 'सोत सेतु', 'सम्वत्सर', 'अद्यतन', आदि आलोचना ग्रन्थ; 'भवन्ती', 'अन्तरा', 'शाश्वती' अन्तप्रक्रियाएँ तथा 'तारसप्तक', 'दूसरा सप्तक', 'तीसरा सप्तक' आदि सम्पादित काव्य संकलन।

▶ प्रमुख रचनाएँ

अज्ञेय हिन्दी साहित्य में आधुनिकता और परम्परा के अनुशीलन के महत्वपूर्ण प्रवक्ता रहे हैं। जिस विधा में उन्होने लिखा उसे उनकी कृतियों ने सम्पन्न किया है। उनकी कविताओं के कलात्मक अनुशासन, शब्द चेतना, बौद्धिक सघनता, आत्मस्थ

▶ व्यष्टि और समष्टि की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार करता है

SGOU

चिन्तनशीलता ने हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। व्यापक मानवीयता, स्वाधीनता और सृजनशीलता में अटूट विश्वास अज्ञेय की रचना का वैशिष्ट्य है। व्यष्टि और समष्टि की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार करते हुए अज्ञेय व्यक्ति को मूल्य और सृजन का केन्द्र मानते हैं। अर्थ देते चलना उनके अनुसार मनुष्य का ही गुण है। कविता को वे स्वायत्त मानते हैं। काव्य वस्तु के समान काव्य शिल्प के प्रति भी अज्ञेय अत्यंत जागरूक रहे। हिन्दी कविता को नए-नए अर्थ संदर्भों और अभिव्यक्ति रूपों की ओर ले जाने में वे सदैव उदार एवं अग्रणी रहे।

'तार सप्तक' की कविताओं के साथ अज्ञेय की नयी काव्य-यात्रा प्रारंभ होती है, जो बाद में 'इत्यलम्' में संगृहीत दिखायी पड़ती है। अज्ञेय में संवेदना के साथ एक सजग बौद्धिकता है। यह बौद्धिकता उनकी संवेदना को नियंत्रित तो करती ही है, साथ ही कभी नवीन सूक्तियों के रूप में (जैसे 'दुःख सब को मांजता है' या 'अच्छा खंडित सत्य सुघर नीरंध्र मृषा से' आदि कविताओं में), कभी व्यंग्य के रूप में (जैसे 'सांप'), कभी युग-चिंतन और बोध के बिंब-विधान के रूप में व्यक्त होती है। अज्ञेय की छोटी-छोटी कविताएँ सौंदर्य और प्रभाव की सृष्टि की दृष्टि से विशिष्ट और सक्षम हैं, वे चाहे व्यंग्य करती हों, चाहे कोई सौंदर्य या अनुभव जगाती हों, चाहे रूप की अभिव्यक्ति करती हों। दो कविताएँ देखें :

▶ बौद्धिक

अ) *उड़ गयी चिड़िया*
कांपी फिर
थिर
हो गयी पत्ती।
(आ) *वह चुकीं बहकी हवाएँ चैत की*
कट गयीं पूलें हमारे खेत की
कोठरी में लौ बढ़ा कर दीप की
गिन रहा होगा महाजन सेंत की।

1.3.1.2 गिरिजाकुमार माथुर (1919-1994):

इनका जन्म अशोकनगर (मध्यप्रदेश) में हुआ। एम.ए. (अंग्रेज़ी), एल.एल.बी. तक शिक्षा पाने के बाद इन्होंने प्रारंभ में वकालत और फिर दिल्ली सेक्रेटेरिएट में नौकरी की। उसके बाद ये आकाशवाणी तथा दूरदर्शन में उपमहानिदेशक रहे। आप 'गगनांचल' के संपादक भी रहे। माथुर में प्रयोग और संवेदना का बहुत सुंदर सामंजस्य है, अर्थात प्रयोग कहीं भी बौद्धिक भंगिमा या फ़ैशन के वशीभूत हो कर नहीं आया है, वह उनकी अनुभूतियों और संवेदनाओं के सूक्ष्म कोणों, रंगों और

▶ प्रयोग और संवेदना का बहुत सुंदर सामंजस्य

प्रभावों को व्यक्त करने की आकुलता से जुड़ा हुआ है। कवि ने छंद, भाषा और बिंब-विधान सभी में प्रयोग किये हैं। छंद तो प्रायः सर्वत्र लययुक्त हैं, नवीनता इसमें है कि कवि ने कहीं-कहीं सवैया को तोड़ कर नया छंदरूप दिया है। उनके काव्य के दो स्वरूप हैं। 'मंजीर' और 'तार सप्तक' में उनकी व्यक्तिगत अनुभूतियाँ हैं, किंतु 'नाश और निर्माण' 'धूप के धान' तथा 'शिलापंख चमकीले' में सामाजिक जीवन की अनुभूतियाँ और यथार्थ उभरते गये हैं। 'तार सप्तक' में जीवन-यथार्थ के नये आयाम उद्घाटित नहीं किया गया और यथार्थ परिवेश के जीवन-सत्यों से भी जुड़े नहीं प्रतीत होते, उनकी संवेदना अत्यंत रूमानी प्रतीत होती है। प्रकृति की रंगमयता, उसकी उदासी, सौंदर्य-प्यास, प्रेम-प्रसंगों की स्मृतियों का दंश, सुंदर वातावरण मैं साथीविहीन अकेलेपन का बोध आदि इनके अनुभव और संवेदना के अंग हैं। इनके रचना-लोक मैं विभिन्न रूप-रंगों में, ध्वनियों, गंधों और स्पर्शों में इन्हीं के दर्शन होते हैं।

सेमल की गरमीली हल्की रूई समान
जाड़ों की धूप खिली नीले आसमान में
झाड़ी-झुरमुटों से उठे लंबे मैदान में।
रूखे पतझर-भरे जंगल के टीलों पर
काँप कर चलती समीर हेमंत की
लंबी लहर-सी।

(तार सप्तक)

इन सीमित जीवन-अनुभवों को ले कर भी माथुर एक विशिष्ट कवि हैं, क्योंकि वे इन अनुभवों की बहुत गहरी और सूक्ष्म छायाओं को पहचानते हैं।

▶ समाजवादी चेतना का प्रसार

'नाश और निर्माण' में 'तार सप्तक' वाली कविताएँ तो संगृहीत हैं ही, साथ ही ऐसी कविताएँ भी हैं, जो सामाजिक चेतना से अनुप्राणित हैं। इन तथा अन्य परवर्ती कविताओं में शक्ति, उल्लास और सामाजिक जीवन का स्पंदन है, पूंजीवाद और साम्राज्यवाद के रूप और विषम परिणामों का तीव्र अहसास तथा उनके विरुद्ध समाजवादी चेतना का प्रसार है।

1.3.1.3 गजानन माधव मुक्तिबोध (13 नवम्बर 1917 ई. -11 अगस्त 1964 ई.):

मुक्तिबोध का जन्म मध्य प्रदेश के ग्वालियर जिले के श्योपुर कस्बे के एक मराठी ब्राह्मण परिवार में हुआ। पिता माधव मुक्तिबोध, जो उज्जैन में इंस्पेक्टर के पद से सेवानिवृत हुए, अच्छी फारसी बोलते थे। अपनी आन पर जीने वाले पिता की तरह फाकेमस्त और गरबीली गरीबी वाले गजानन मुक्तिबोध भी थे। प्रारंभिक शिक्षा उज्जैन में हुई। पारिवारिक विपन्नता के दबाव से होलकर कालेज से बी. ए. करने के बाद, उज्जैन के मार्डन स्कूल में अध्यापक हो गये। गहन

▶ रूसी साहित्य का काफी गहन अध्ययन

विद्या व्यसनी, आत्मचेतस और विश्वचेतस मुक्तिबोध मार्क्सवाद से प्रभावित हुए। पश्चिमी और रूसी साहित्य का काफी गहन अध्ययन किया। शुजातपुर में ही एक तरह से तारसप्तक की भूमिका बनी। 'हंस' और 'शारदा' पत्रिकाओं के सम्पादन से सम्बद्ध रहे। नागपुर रेडियो में समाचार संपादक भी रहे। सन् 1940 में एम. ए. किया। राजनाँदगाँव के दिग्विजय कालेज में नौकरी मिल गयी। 'ब्रह्मराक्षस' और 'अंधेरे में' कविताएँ यही लिखी गयीं। 7 फरवरी 1964 को पक्षाघात हुआ और फिर क्रमशः बीमारी ने अनेक रूप बदले और अन्ततः दिल्ली में मृत्यु। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', और 'भूरी-भूरी खाक धूल' मुक्तिबोध के प्रसिद्ध काव्य संग्रह है।

▶ मार्क्सवादी चेतनादृष्टि से प्रभावित

मुक्तिबोध हिन्दी के एकमात्र कवि हैं जिनकी कविता में कवि और उसका जीवन तथा सामान्य जनता, दोनों ही विषय हैं। मार्क्सवादी चेतनादृष्टि से प्रभावित अँधेरे और उजाले का संघर्ष उनकी कविताओं में मिलता है। उनकी कविताओं में आधुनिक मानव सभ्यता के वर्गवादी विश्लेषण और निम्न मध्यम वर्गीय व्यक्तियों, बुद्धिजीवियों की विवशता और अन्तःसंघर्ष भी मिलता है। 'लाल कनेर', 'चकमक चिनगारियाँ', 'काला लबादा ओढ़े व्यक्ति', 'सूर्य का लाल गोला', 'मानव शिशु', 'रक्तकमल', 'ब्रह्मराक्षस', 'घुग्घू', 'साँप', 'पिशाच', 'खंडहर की वीरानी', 'गुफायें', 'बावड़ी' आदि उनके प्रसिद्ध प्रतीक हैं जो अन्तरात्माधर्मी क्रान्ति-विचार, सफलता के आकांक्षी, कैरियरियस्ट और अवसरवादी, अन्तःकरण, अवचेतक और अचेतन आदि के अर्थ में उनकी लम्बी कविताओं की स्वप्नकथाओं में मिलते हैं। 'अंधेरे में', 'ब्रह्मराक्षस', 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'चकमक चिनगारियाँ', 'चम्बल की घाटियों में' उनकी प्रसिद्ध कवितायें हैं, जिनमे दुनिया को बेहतर बनाने की उनकी आकांक्षा मनुपुत्रों पर उनके अडिग विश्वास के तर्क से बढ़ती ही जाती है। उनका रचना संसार खतरनाक विचारों और इरादों का रचना संसार है जिसमें फूल की जगह बन्दूक का सहसा कन्धे पर आ जाना सृजन के लिए संहार को अनिवार्य मानने का परिणाम है।

मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर में चमकता हीरा है
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है
प्रत्येक सुस्मित में विमल सदानीरा है
मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक वाणी में
महाकाव्य-पीड़ा है
पल भर में सबसे गुज़रना चाहता हूँ
इस तरह खुद ही को दिये फिरता हूँ
अजीब है ज़िन्दगी

(मुझे कदम कदम पर)

SGOU

1.3.1.4 प्रभाकर माचवे (26 दिसंबर 1917 - 17 जून 1991)

▶ लघुत्रयी में सम्मिलित

बहुमुखी प्रतिभा के संदर्भ में जैसे प्रसाद, अज्ञेय, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी की बृहत्रयी का स्मरण हो आता है वैसे ही रांगेय राघव, धर्मवीर भारती, प्रभाकर माचवे की लघुत्रयी का आ सकता है- हरफ़नमौला राहुल सांकृत्यायन की अपनी अलग वामपंथी रंगत है ही। कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध, ललितनिबंध, संस्मरण, रेखाचित्र, आलोचना से नाटक, व्यंग्य, यात्रावृत्त, रिपोर्ताज (तात्कालिकी) तक प्रायः असंख्य विधाओं के विविध घाटों का पानी पीने तथा मराठी और अंग्रेज़ी से अनुवाद, अनेक पत्रिकाओं के संपादन को पैज करनेवाले बहुभाषाविद् डॉ. प्रभाकर माचवे ने प्रतिभा की न्यूनता की पूर्ति अध्यवसाय की प्रचुरता से की तो है, किंतु किसी भी विधा पर कोई छाप नहीं छोड़ सके। अनेक साहित्यकार अनेककोणीय-लेखन के व्यूह में फंस जाते हैं। इसका कारण पत्रिकागत, पदगत, अन्य अर्थात् वित्तगत आकर्षण भी हो सकता है। नाम-दाम-काम तीनों मिलकर त्रिदेव का रूप धारण कर सकते हैं।

▶ 'तारसप्तक' के कवि

'तारसप्तक' के एक कवि के रूप में माचवे की याद काफ़ी समय तक की जा सकती हैं, किंतु उनकी कविता में किसी मौलिकता या शिल्प-बंकिमता के दर्शन नहीं होते। 'हिन्दी साहित्य कोश' भाग 2 में रमेशचंद्र शाह ने माचवे की रचनाओं का यह शाहाना विवरण दिया हैः 'तारसप्तक के कवियों में थे। उसके बाद दो कविता संग्रह और प्रकाशित हुए, 'अनुक्षण' (1959) और 'मेपल' (1966)। पहला निबंध संग्रह 'खरगोश के सींग' 1950 में छपा था, दूसरा 'बेरंग' 1955 ई.। समीक्षा-पुस्तकों का विवरण इस प्रकार हैः 'व्यक्ति और वाङ्मय' (1952), 'समीक्षा की समीक्षा' (1953), 'संतुलन' (1954), 'हिन्दी-निबंध (1955), 'मराठी और उसका साहित्य' (1956), 'नाट्य-चर्चा' (1957) 'हिन्दी साहित्य की कहानी (1957)। उपन्यासः 'परंतु' (1951) 'एक तारा' (1952), 'द्वाभा' (1955), 'साँचा'। एक कहानीसंग्रह भी हैः 'संगीनों का साया' जो 1943 में प्रकाशित हुआ था। इसके अलावा कुछ ग्रंथों का संपादन भी किया है। समयसीमा के कारण इस विवरण में 'विश्वकर्मा' खंडकाव्य का उल्लेख नहीं हो पाया जिसमें कथा को नई अर्थवत्ता के साथ प्रस्तुत किया गया है तथा जो उनकी सर्वोत्तम रचना मानी गई है। माचवे 'संदर्भ-भारती' त्रैमासिक (कलकत्ता) के संपादक भी रहे। आकाशवाणी में भी कार्य किया। साहित्य अकादमी के सचिव भी रहे।

▶ ललितनिबंधकार एवं रेखाचित्रकार

प्रभाकर माचवे का स्मरण ललितनिबंधकार एवं रेखाचित्रकार के रूपों में ही किया जाएगा, क्योंकि अन्य विधाओं में सृजन असाधारण नहीं है। डॉ. मास्तिनंदन पाठक ने 'डॉ. प्रभाकर माचवे सौ दृष्टिकोण' ग्रंथ संपादित कर आलोचना एवं संस्मरण का संगम प्रस्तुत किया है।

SGOU

1.3.1.5 भारतभूषण अग्रवाल

आस्थावादी दृष्टिकोण

भारतभूषण अग्रवाल के काव्य-संग्रहों में 'छवि के बंधन', 'जागते रहो' तथा 'मुक्ति-मार्ग' आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये संग्रह उनकी कविता में आने वाले विभिन्न मोड़ बताते हैं इनमें से 'मुक्ति-मार्ग' की रचनाएँ कवि के आस्थावादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति के विचार से विशेष रूप से महत्वपूर्ण कही जा सकती हैं। समाजवादी यथार्थ की प्रवृत्ति के साथ-साथ रूमानी भावना भी समन्वित रूप में उनकी कविता में उपलब्ध होती है। आस्थावादी दृष्टिकोण के विचार से इनकी कविता का एक उदाहरण नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

"आज ही मैं जान पाया हूँ
कि केवल मैं अकेला ही नहीं हूँ दुःखी, चिन्ताग्रस्त
वरन् आज समस्त जीवन-स्रोत
स्रुद्ध हो इस विषम बाधा से
निकल है फूटने पथ खोजने के लिए
व्यस्त है गंभीर जीवन-मरण के संग्राम में,
मुक्ति के इस मार्ग में
हम-तुम अकेले ही नहीं हैं
हमारे साथ लाखों, करोड़ों, अरबों,
असंख्य स्वदेश और विदेश के भाई"

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

प्रयोगवादी कवियों का साहित्य में योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इन कवियों ने पारंपरिक काव्य शैलियों और विषयवस्तु से परे जाकर नए प्रयोग किए और कविता को एक नई दिशा दी। उनके द्वारा किए गए काव्यात्मक प्रयोगों ने न केवल हिन्दी कविता को एक नया रूप दिया, बल्कि उसे आधुनिकता और समकालीन सामाजिक-राजनीतिक संदर्भों से भी जोड़ा। प्रयोगवादी कवि अपने समय के संकटों, संघर्षों, और बदलावों के प्रति अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करते हुए पाठकों के लिए नए विचार और दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। इसलिए, प्रयोगवादी काव्यधारा को हिन्दी साहित्य में एक क्रांतिकारी कदम माना जा सकता है, जो भविष्य में कविता के रूप और उद्देश्यों को नए आयाम देगा।

अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजा कुमार माथुर, प्रभाकर माचवे और भारतभूषण अग्रवाल जैसे प्रयोगवादी कवियों ने हिन्दी साहित्य में गहरे बदलाव और नये दृष्टिकोण की नींव रखी। इन कवियों ने न केवल साहित्यिक शैलियों में प्रयोग किए, बल्कि समाज, राजनीति और व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को कविताओं में अभिव्यक्त किया। अज्ञेय और मुक्तिबोध ने गहरी चिंतनशीलता और अस्तित्ववादी दृष्टिकोण को कविता का हिस्सा बनाया, जबकि गिरिजा

कुमार माथुर और प्रभाकर माचवे ने भी भाषा और रूप के स्तर पर नवीन प्रयोग किए। भारतभूषण अग्रवाल ने अपनी कविताओं के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक मुद्दों को उजागर किया। इन कवियों ने अपने-अपने समय की जटिलताओं और समाज के बदलते हुए रूप को काव्यात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया, जिससे हिन्दी कविता में एक नया विचारधारा, रूप और दृष्टिकोण आया। इनका योगदान हिन्दी कविता को सिर्फ साहित्यिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ में भी अनमोल है। इन कवियों ने कविता को न सिर्फ एक कला रूप, बल्कि समाज की गहरी समझ और बदलाव का माध्यम भी बनाया।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. कवि अज्ञेय का परिचय दीजिए।
2. मुक्तिबोध की काव्य की विशेषताएँ लिखिए।
3. गिरिजा कुमार माथुर की रचनाओं का उल्लेख कीजिए।
4. प्रभाकर माचवे और तार सप्तक विषय पर टिप्पणी लिखिए।
5. भारतभूषण अग्रवाल और उनकी काव्य कला पर पर्चा तैयार कीजिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय- चौथा सप्तक

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

अज्ञेय - कलगी बाजरे की
मुक्तिबोध - मुझे कदम कदम पर
गिरिजा कुमार माथुर - पंद्रह अगस्त

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- अज्ञेय की 'कलगी बाजरे की' नामक कविता समझता है
- मुक्तिबोध की 'मुझे कदम कदम पर' नामक कविता सीखता है
- गिरिजा कुमार माथुर की 'पंद्रह अगस्त' नामक कविता से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

प्रयोगवाद काल की कविताओं का अध्ययन करने से हम उस कालखंड की विशेषताओं को और करीब से जान पाएँगे। इसकेलिए तीन चयनित कविताएँ इस अध्याय में दिए जा रहे हैं। प्रयोगवाद के प्रवर्तक कवि अज्ञेय की कविता 'कलगी बाजरे की' प्रयोग की दृष्टि से सर्वदा नवीन एवं महत्वपूर्ण कविता है। इसमें अपनी प्रेयसी की रूप सौंदर्य को व्यक्त करने केलिए कवि ने नवीन उपमानों का सृजन किया है जिसे सुनकर शायद उनकी प्रेयसी खुश ना हुआ हो तो उन्होंने उन प्रयोगों का वास्तविक अर्थ एवं उन नवीन प्रयोगों की आवश्यकता एवं महत्व को इसी कविता के माध्यम से समझाते हैं।

दूसरी महत्वपूर्ण कविता जो इस अध्याय में दिया जा रहा है, वह है - मुक्तिबोध जी की 'मुझे कदम कदम पर'। इस कविता में कवि एक रचनाकार की दृष्टि से इस समाज को एवं व्यक्तियों को और वस्तुओं को देखते हैं। कवि की सकारात्मकता एवं आशावादिता इस कविता के माध्यम से झलकता है। और कवि यह भी कहता है की साहित्यकार को सरल, सहज, और सादगी से युक्त हृदय का अधिकारी होनी चाहिए।

तीसरा कविता है गिरिजा कुमार माथुर जी की 'पंद्रह अगस्त', जो आज़ादी को बरकरार रखने की आवश्यकता एवं प्राप्त आज़ादी की महत्व और आज़ादी केलिए किया हुआ संघर्षों का याद दिलाते हैं।

Keywords / मुख्य बिन्दु

कलगी, बासन, चौराहे, घबराए प्रतीक, विषयों की बाहुल्य, आज़ादी, सावधान रहना

Discussion / चर्चा

1.4.1 कलगी बाजरे की - अज्ञेय

▶ अज्ञेय की बहुचर्चित कविता

(कलगी बाजरे की)

प्रयोगवाद के प्रवर्तक कवि एवं बहुमुखी प्रतिभा के सम्पन्न साहित्यकार अज्ञेय की बहुचर्चित एवं प्रयोगवाद के प्रतिनिधि कविता है - 'कलगी बाजरे की'। नवीन प्रयोगों से युक्त और अपनी नवीन प्रयोगों की चयन के कारणों को भी व्यक्त करनेवाले इस कविता में कवि अपनी प्रेयसी का रूप चित्रण किया है।

"हरी बिछली घास।
दोलती कलगी छरहरी बाजरे की।
अगर मैं तुम को ललाती साँझ के नभ की अकेली तारिका
अब नहीं कहता,
या शरद के भोर की नीहार न्हाई कुँई,
टटकी कली चम्पे की, वगैरह, तो
नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या सूना है
या कि मेरा प्यार मैला है।
बल्कि केवल यहीं ये उपमान मैले हो गये हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच।"

▶ नवीन उपमानों एवं प्रयोगों का सृजन

हिन्दी साहित्य में कवियों ने अपनी प्रेयसी को अनेक नामों उपनामों से संबोधित किया है। इनमें से अधिकांश उपमान पारंपरिक है। अज्ञेय जी अपनी प्रेयसी के रूप सौंदर्य को व्यक्त करने केलिए इन पारंपरिक उपमानों की सहायता नहीं लिया है। उन्होंने इसकेलिए नवीन उपमानों एवं प्रयोगों का सृजन किया है। इस कविता में कवि अपने प्रेयसी के सौंदर्य अभिव्यक्त करने केलिए उसे हरी कोमल घास और हिलती-डुलती बाजरे की कलगी कहते हैं। इसमें कवि नये-नये बिंबों, प्रतीकों और उपमानों का प्रयोग करते हैं।

कवि आगे कहते हैं, मैं तुमको सांध्यकालीन नभ की अकेली तारिका या शरद काल के प्रभात की नीहार (ओस) में नहाई कुमुदिनी नहीं कहता हूँ। और चम्पे के नई कली भी नहीं कहता हूँ। लेकिन इसका कारण यह नहीं समझो कि मेरा प्यार मैला है। मेरा हृदय शून्य है, ऐसा नहीं समझो। मेरे मन में प्रेयसी के प्रति कोई प्रेम नहीं है, ऐसा मत समझो। मेरे मन में अपनी प्रेयसी के प्रति बहुत अधिक प्यार है। इसका कारण तो यही है कि, ये उपमान मैले हो गये हैं। (शरद काल की नीहार में नहाई कुमुद फूल, चम्पे की कली, साँझ के नभ की अकेली तारिका)। प्रयोग करते-करते ये उपमान मैले

▶ कवि पारंपरिक उपमानों का प्रयोग करना नहीं चाहता

हो गये हैं। यह पारंपरिक उपमान है, लेकिन मैं ऐसे उपमानों का प्रयोग करना नहीं चाहता हूँ। काव्य देवता भी इसकी उपेक्षा की है। इसका अर्थ यह है कि, आज की जटिलताओं को व्यक्त करने केलिए ऐसे-ऐसे उपमान सक्षम नहीं है। पुराने कवि अपनी प्रेयसी के सौंदर्य को व्यक्त करने केलिए ऐसे उपमानों का प्रयोग करते हैं। अज्ञेय जी ऐसे उपमानों का प्रयोग अब नहीं करते। कवि के अनुसार आज के बदलते संदर्भ में ये पुराने प्रतीक उपयुक्त नहीं है। परंपरागत उपमान और प्रतीक अब काव्य को शोभा नहीं देते हैं। इसलिए वर्तमान भावानुभूतियों एवं संवेदनाओं को व्यक्त करने केलिए कवि नये उपमान का प्रयोग किए हैं।

"कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।
मगर क्या तुम नहीं पहचान पाओगी :
तुम्हारे रूप के तुम हो, निकट हो, इसी जादू के-
निजी किस सहज, गहरे बोध से, किस प्यार से मैं कह रहा हूँ-
अगर मैं यह कहूँ-
बिछली घास हो तुम
लहलहाती हवा में कलगी छरहरी बाजरे की?"

▶ पुराने प्रतीक उपयोग से कान्तिहीन हो जाते हैं

कवि आगे कहते हैं कि, बर्तन को अधिक घिसने से उसकी चमक छूट जाती है। कवि यहाँ व्यक्त करते हैं कि, जैसे अधिक घिसने से बर्तन की चमक छूट जाती है वैसे पुराने प्रतीक भी उपयोग से कान्तिहीन हो जाते हैं। और समसामयिक जटिलताओं को व्यक्त करने में सक्षम भी नहीं हो पाते हैं। इसलिए ही कवि नये-नये प्रतीकों का प्रयोग किया है।

▶ मन की असीम प्रेम भावना

कवि आगे अपनी प्रेयसी को संबोधित करते हुए कहते हैं कि, तुम्हारी रूप सौंदर्य, तुम्हारी निकटता या सामीप्य के कारण सहज रूप से गहरे आत्मीयता के बोध से और प्यार में मैं यह कह रहा हूँ कि, तुम हरी बिछली घास हो या बाजरे की कलगी हो। इसलिए ही कवि अपनी प्रेयसी से कहती है कि, तुम्हारी रूप सौंदर्य और सामीप्य के जादू से अभीभूत होकर या आत्मीयता के बोध से अभीभूत होकर मैं तुझे ऐसा संबोधित करता हूँ। यहाँ कवि अपने मन की असीम प्रेम भावना को व्यक्त करते हैं।

"आज हम शहरातियों को
पालतू मालंच पर सँवरी जुही के फूल से
सृष्टि के विस्तार का-ऐश्वर्य का-औदार्य का -
कहीं सच्चा, कहीं प्यारा एक प्रतीक
बिछली घास है,
या शरद की साँझ के सूने गगन की पीठिका पर दोलती कलगी अकेली
बाजरे की।
और सचमुच, इन्हें जब-जब देखता हूँ
यह खुला वीरान संसृति का घना हो सिमट आता है-

और मैं एकान्त होता हूँ समर्पित।
शब्द जादू हैं-
मगर क्या वह यह समर्पण कुछ नहीं है?"

कवि आगे नगरवासियों के संबंध में कहते हैं कि, नगरवासी प्रकृति के सौंदर्य से कट गए हैं। शहर के बगीचों में सजे हुए जुही के फूल की तुलना में सृष्टि के विस्तार का, ऐश्वर्य का और सौंदर्य का प्रतीक है हरी बिजली घास या गगन के नीचे झूलनेवाली बाजरे की कलगी। कवि के अनुसार अपने मन की प्रेमानुभूतियों को, उदारता को व्यक्त करने का सच्चे एवं प्यारे प्रतीक है यह।

▶ नगरवासी प्रकृति के सौंदर्य से कट गए हैं

कवि आगे कहते हैं कि, नगरवासी प्रकृति के सौंदर्य से अलग हो गए हैं। इन्हें देखकर सृष्टि का सूनापन सघन होता हुआ सिमटा आता है। इसलिए कवि बताते हैं- मैं एकान्त प्राकृतिक सुषमा के प्रति समर्पित हो जाता हूँ। इसलिए मैं प्रकृति के इन प्रतीकों का प्रयोग किया है। कवि आगे बताते हैं कि, शब्द जादू है, इसलिए मैंने उन प्रतीकों (उपर्युक्त) का प्रयोग किया है। जो अन्य आलंकारिक चमत्कार से महत्वपूर्ण भी है। यह प्रतीक वक्ता के भावों को अभिव्यक्त करने में सक्षम भी है।

▶ शब्द जादू है

प्रस्तुत कविता में कवि की प्रयोगधर्मिता स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। नए-नए प्रतीकों का प्रयोग किया है। नवीन भाषा शैली का प्रयोग किया है। वर्तमान संवेदनाओं एवं भावानुभूतियों को अभिव्यक्त करने में पुराने प्रतीक या उपमान सक्षम नहीं है। इसलिए उन्होंने अपनी प्रेयसी के सौंदर्य वर्णन केलिए, उसके प्रति अपनी प्रेम भावना और आत्मीयता व्यक्त करने केलिए उन्होंने नये-नये प्रतीकों का प्रयोग किया है। कवि ने सुन्दर ढंग से इन प्रतीकों का प्रयोग किया है।

▶ प्रयोगधर्मिता

1.4.2 मुझे क़दम-क़दम पर - मुक्तिबोध

(चौराहे)

'मुझे कदम कदम पर' हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध लेखक गजानन माधव मुक्तिबोध की सुप्रसिद्ध कविता है। यह उनका काव्य संकलन 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में संकलित है। यह काव्य संग्रह सन् 1967 को प्रकाशित हुआ था। इससे पहले यह कविता सन् 1961 में 'चौराहे' शीर्षक से लहर नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी।

▶ 1967 को प्रकाशित

यह कविता एक कवि या रचनाकार की नज़र से जीवन, समाज और दुनिया को देखने का प्रयास है। कवि महसूस करते हैं कि जीवन बहुत समृद्ध एवं बहुरंगी है। हर कदम पर कोई नया रास्ता, नया विचार और नई घटना, नया चित्र, नया दृश्य या नया सूत्र, नया

▶ जीवन बहुत समृद्ध एवं बहुरंगी है

तथ्य उपस्थित है। हर व्यक्ति के अंदर ऐसी कोई न कोई बात छिपी है जिसपर कुछ न कुछ रचा जा सकता है। साहित्य रचना के लिए बहुत ही ज़्यादा कल्पना या बुद्धिमत्ता की ज़रूरत नहीं है। बल्कि अपने आसपास की परिवेश एवं जनजीवन को देखने, जाँचने, परखने और महसूस करने की जरूरत है। इससे रचनाओं की सार्थकता, उपयोगिता और प्रामाणिकता बढ़ जाती है। समाज में रचनाकार को अनेक ऐसी विषय मिल जाते हैं, जिनपर साहित्य रचा जा सकता है। ज़रूरत है सही विषय को चुनने की और उसे सही ढंग से प्रस्तुत करने की। आइए 'मुझे कदम कदम पर' कविता को समझने की कोशिश करते हैं:-

मुझे क़दम-क़दम पर
चौराहे मिलते हैं
बाँहें फैलाए!!

चौराहे शब्द से बहुत से अर्थ निकलते हैं। इससे तात्पर्य है समाज और जीवन की विविधता, बहुरंगीपन या फिर बहुत से विषय। मुक्तिबोध कहते हैं कि जब भी मैंने अपनी रचनाओं केलिए विषय खोजने निकलता हूँ तो मुझे हर समय बहुत से विषय मिलते हैं - बाँहे फैलाए। मुझे ऐसा महसूस होता है कि यह समाज एवं जीवन की विविधता, यह समृद्धी अपनी बाँहें फैलाए हुए मेरे स्वागत करने को तैयार है। कवि को लगता है कि सभी विषय उन्हें अपनी ओर बुला रहे हैं।

▶ बहुत से विषय

एक पैर रखता हूँ
कि सौ राहें फूटतीं,
व मैं उन सब पर से गुज़रना चाहता हूँ;
बहुत अच्छे लगते हैं
उनके तजुर्बे और अपने सपने...
सब सच्चे लगते हैं;
अजीब-सी अकुलाहट दिल में उभरती है,
मैं कुछ गहरे में उतरना चाहता हूँ,
जाने क्या मिल जाए !!

कवि कहते हैं कि मैं जैसे ही आगे बढ़ता हूँ या कुछ रचने की कोशिश करता हूँ सैकड़ों विचार या भाव मेरे सामने उभर आते हैं। राहें अलग अलग विचारों या भावनाओं का प्रतीक है, जिनको अभिव्यक्त करके कवि संतोष प्राप्त कर सकता है। कवि हर एक विचार या हर एक भावना को महसूस करना चाहते हैं अर्थात वे हर विचार पर कुछ न कुछ लिखना चाहते हैं।

▶ सैकड़ों विचार या भाव उभर आते हैं

कवि आगे कहते हैं कि मुझे दूसरों के अनुभव बहुत अच्छे लगते हैं और अपने सपने सब अच्छे लगते हैं। कवि को लगता है कि दूसरों के अनुभवों को व्यक्त करके में अपने सपनों को साकार कर सकता हूँ। कवि अपने सपनों को दूसरों के अनुभवों से जोड़ता है, क्योंकि कवि के भीतर अभिव्यक्ति के बहुत सारे सपने हैं। और कवि समाज से

▶ कवि अपने सपनों को दूसरों के अनुभवों से जोड़ता है

जुड़कर दूसरे लोगों की अनुभवों को महसूस करके अपने रचनाओं द्वारा अपनी सपनों को साकार करना चाहते हैं। और जब वो समाज से जुड़ता हैं तो उन्हें लगता है कि उन अभिव्यक्ति की सारे सपने अब सच हो जाएँगे।

▶ समाज की और लोगों के व्यक्तित्व को महसूस करना

कवि को अपनी भीतर एक विचित्र सी बेचैनी महसूस होती है। वास्तव में यह बेचैनी हर रचनाकार या कलाकार की भीतर होती है। क्योंकि रचनाकार बहुत कुछ महसूस करना चाहते हैं। इसी कारण वह संतुष्ट नहीं हो पाता। कवि कहता है कि मैं बहुत गहराई से या बहुत निकट से समाज की और लोगों के व्यक्तित्व को महसूस करना चाहता है। न जाने इसतरह समाज एवं लोगों को नज़दीक से देखने पर मुझे कौनसा नया विचार या कीमती अनुभव मिल जाए। इन पंक्तियों पर कवि यह विचार व्यक्त किया है कि मैं किसी एक विषय की खोज में घर से निकलता हूँ और मुझे सैकड़ों विचार या विषय मिल जाते हैं।

मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर में
चमकता हीरा है;
हर-एक छाती में आत्मा अधीरा है,
प्रत्येक सुस्मित से विमल सदानीरा है,
मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक वाणी में
महाकाव्य-पीड़ा है,
पलभर मैं सबमें से गुज़रना चाहता हूँ,
प्रत्येक उर में से तिर आना चाहता हूँ,
इस तरह खुद ही को दिए-दिए फिरता हूँ,
अजीब है ज़िन्दगी !!

▶ रचनाकार की आशावादिता प्रवं गुणग्राहिता

कवि आगे एक रचनाकार की आशावादिता प्रवं गुणग्राहिता को दर्शाते हैं। एक रचनाकार तुच्छ या साधारण समझा जानेवाला वस्तु में भी कुछ ऐसा खोज लेता है जो अनमोल है या महत्वपूर्ण है। कवि के अनुसार हर व्यक्ति अपने आप में विशिष्ट होता है और रचनाकार का यह दायित्व होता है कि वो उसके भीतर के गुणों को और उसकी विशेषताओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त करें।

▶ हर आदमी के भीतर एक आत्मा या चेतना है

कवि कहता है कि मुझे हर बार यह वहम या संदेह होता है कि हर पत्थर को तराशकर हीरा बनाया जा सकता है। या हर साधारण सी वस्तु के भीतर हीर जैसा चमक छुपी है। उसे तलाश किया जा सकता है। हर आदमी के भीतर एक आत्मा या चेतना है जो बेचैन है। हर व्यक्ति अपने विचारों को या अपनी पीड़ाओं को व्यक्त करने केलिए व्याकुल है।

▶ मुस्कान के पीछे भी करुणा की भावनाएँ

कवि को यह महसूस होता है कि हर व्यक्ति की मुस्कुराहट के पीछे करुणा की ऐसी नदी छिपी हुई है जो हमेशा ही स्वच्छ पानी से भरी रहती है। अर्थात यह आवश्यक नहीं कि यदि व्यक्ति मुस्कुरा रहा हो तो उसकी भीतर किसी प्रकार का दुःख या पीड़ा ना हो। कवि महसूस करते हैं कि हर मुस्कान के पीछे भी करुणा की भावनाएँ छिपी हुई होती है। कवि आगे कहते हैं कि मुझे यह भी वहम होता है कि हर एक आदमी की आवाज़

में इतनी ज़्यादा पीड़ा या वेदना है कि उसमें एक लंबा महाकाव्य लिखा जा सकता है। भावार्थ यह है कि जीवन को निकट से महसूस किया जाए तो एक रचनाकार बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है, जिसपर वह साहित्य रच सकता है। तुच्छ से तुच्छ वस्तु में भी कोई न कोई कीमती विचार या भाव तलाश किया जा सकता है।

कवि आगे कहता है कि मैं समय नष्ट नहीं करना चाहता। मैं एक ही क्षण में सभी लोगों की अनुभवों को ग्रहण करना चाहता हूँ। प्रत्येक उर में से तिर आना चाहता हूँ। (उर से तात्पर्य है छाती या सीना, तिर आना मतलब तैर कर वापस आ जाना) कवि कहते हैं कि मैं हर व्यक्ति की हृदय रूपी समुद्र में डुबकी लगाकर तैरकर वापस आना चाहता हूँ। अर्थात कवि हर एक व्यक्ति के मन को भीतर से महसूस करना चाहता है। इसतरह खुद ही को दिए कवि कहते हैं कि इसतरह मैं अपने आपको, समाज को और लोगों के प्रति समर्पित करता रहता हूँ। अगली पंक्ति का दो अर्थ निकलता है। ज़िंदगी दो अर्थों में अजीब है। पहला अर्थ यह कि, जब हम अपने आप को जीवन के प्रति समर्पित करते हैं, तभी हम कुछ प्राप्त कर सकते हैं। दूसरा उर्थ यह कि, कवि अपने आप को समाज केलिए न्यौछावर करता रहता है। इसतरह कवि की अपनी ज़िन्दगी अजीब हो गयी है।

▶ प्रत्येक उर में से तिर आना

बेवकूफ बनने की खातिर ही
सब तरफ अपने को लिए-लिए फिरता हूँ;
और यह देख-देख बड़ा मजा आता है
कि मैं ठगा जाता हूँ...
हृदय में मेरे ही,
प्रसन्न-चित्त एक मूर्ख बैठा है
हँस-हँसकर अश्रुपूर्ण, मत्त हुआ जाता है,
कि जगत्... स्वायत्त हुआ जाता है।

कवि कहते हैं कि वे अपने आप को समाज में हर ओर ले जाता है। और मैं कोई बड़ी उम्मीद लेकर समाज की ओर नहीं निकलता। बल्कि मैं बेवकूफ या मूर्ख बनने केलिए ही घर से निकलता हूँ। कवि यह महसूस करते हैं कि यदि उन्हें कुछ नए विचार, नए अनुभव या नए ज्ञान ग्रहण करने हैं, तो उन्हें अपने आपको मूर्ख समझना पड़ेगा। स्वयं को बुद्धिमान, कलाकार या रचनाकार मानकर वे समाज से कट जाएँगे और आम लोगों के जीवन को महसूस नहीं कर पाएँगे। इसलिए कवि महसूस करते हैं कि समाज में बेवकूफ या मूर्ख बनकर ही नया विचार या अनुभव प्राप्त किए जा सकते हैं।

▶ बेवकूफ या मूर्ख बनकर ही नया विचार या अनुभव प्राप्त किए जा सकते हैं

कवि कहता है कि समाज उसे ठगता है बेवकूफ बनाता है। लेकिन मैं यह सबकुछ देखकर बहुत आनंद लेता है। भावार्थ यह है कि एक रचनाकार के भीतर एक भोलापन, सरलता और सादगी होनी चाहिए। कवि महसूस करते हैं कि समाज उसे ठगता है उसके साथ चालें चलता है। लेकिन कवि इन सब में आनंद लेता है क्योंकि इन सबके कारण वे जीवन का असली रंग समझ पाते हैं।

▶ रचनाकार के भीतर एक भोलापन, सरलता और सादगी होनी चाहिए

कवि कहता है कि मेरे मन में एक ऐसा मूर्ख व्यक्ति बैठा है जो हमेशा खुश रहता है। जो कभी भी उदास नहीं होता क्योंकि खुश रहना उसका स्वभाव बन गया है। कवि महसूस करता है कि उनके अंदर एक छोटा बालक है, जो कि बेवकूफ है, लेकिन हमेशा खुश रहता है। दुनिया की चालाकी देखकर हँसता है और हँस हँसकर बावला हो जाता है। और उसके आँखों से आँसू निकलने लगते हैं। कवि को लगता है कि अपने भीतर की यह बेवकूफ बालक सारे संसार को स्वायत्त कर लेता है अपने भीतर समेट लेता है। कवि को यह जानकर खुशी होती है कि वह जीवन की विविधता को, लोगों की विचारों एवं भावनाओं को अपना रहा है।

▶ छोटे बालक की-सी सादगी

इन पंक्तियों में कवि यह कहना चाह रहे हैं कि स्वयं को विद्वान या बुद्धिमान मानकर हम समाज को नहीं समझ पाएँगे। एक मूर्ख व्यक्ति की तरह या फिर छोटे बालक की-सी सादगी के साथ ही हम समाज को निकट से जान पाएँगे।

कहानियाँ लेकर और
मुझको कुछ देकर ये चौराहे फैलते
जहाँ ज़रा खड़े होकर
बातें कुछ करता हूँ...
...उपन्यास मिल जाते।
दुःख की कथाएँ, तरह-तरह की शिकायतें
अहंकार-विश्लेषण, चारित्रिक आख्यान,
ज़माने के जानदार सूरे व आयतें
सुनने को मिलती हैं!

▶ समाज की विविधता या समृद्धि कवि को कुछ न कुछ देता है

कवि आगे कहता है कि कभी लगता है कि मैं इस समाज को, जीवन को कुछ नई कहानियाँ देता हूँ और यह जो समाज की विविधता है समाज की समृद्धि है, यह भी मुझे कुछ न कुछ देता है। अर्थात समाज में जो जो विषय है उसका विस्तार होता रहता है। कवि आगे कहता है कि समाज में कहीं भी थोड़ी देर रुककर बातें करता हो तो मुझे उपन्यास लिखने केलिए नई घटनाएँ एवं चरित्र मिल जाते हैं। मैं लोगों की दुःख की कहानियाँ सुनता हूँ, उनकी तकलीफें प्रवं शिकायतें सुनता हूँ। व्यक्ति को समाज से, संसार से, लोगों से किस प्रकार के शिकायतें हैं, हो सकता है, यह भी मैं सुनता हूँ। लोग किसप्रकार एक दूसरे के अहंकार का विश्लेषण, अहंकार का जाँच पड़ताल करता है, यह भी सुनता है। लोग किसप्रकार एक-दूसरे के चरित्र का व्याख्यान करता है, यह भी मैं सुनता हूँ।

▶ पवित्र कुरान के अध्यायों से तुलना

कवि आगे लोगों के अनुभवों एवं विचारों को पवित्र कुरान के अध्यायों से तुलना करते हैं। वे कहता है कि लोगों की अनुभव एवं विचार पवित्र कुरान की अध्यायों की तरह ही महत्वपूर्ण है। और वज़नदार होते हैं। मैं इन्हें उत्सुकता से सुना करता हूँ।

SGOU

कविताएँ मुसकरा लाग-डाँट करती हैं
प्यार बात करती हैं।
मरने और जीने की जलती हुई सीढ़ियाँ
श्रद्धाएँ चढ़ती है!!

कवि आगे कहता है कि मेरी कविताएँ लोगों को डाँट डपटती भी है। लेकिन यह कार्य वह बहुत सहजता एवं मुस्कराकर करती है। और उनकी कविताएँ प्यार भरी बातें भी करती हैं। लोग कविताओं से प्रेरणा लेती है और उनमें प्रेम संबंधी बातें भी होती है।

▶ आम इनसान का जीवन संघर्षपूर्ण है

एक आम इनसान की जीवन जन्म से मृत्यु तक जलती हुई सीढ़ियों को चढ़ने के समान है। जन्म से मृत्यु तक उसके जीवन में संघर्षपूर्ण स्थितियाँ बनी रहती है। कवि लोगों की जन्म एवं मृत्यु पर ध्यान देते हैं और बहुत ही आस्था और विश्वास के साथ ऐसा करते हैं। कविताएँ आम जनता की जीवन संघर्षों के साथ चलते हैं, और वह ये बनावटी या दिखाने केलिए नहीं करते बल्कि वास्तव में ही लोगों के प्रति और उनके जीवन के प्रति आस्थावान है। इन पंक्तियों में कवि बस इतना कहना चाहता है कि आम इनसान का जीवन संघर्षपूर्ण है और उनकी कविताएँ इन संघर्षों में उनका साथ देता है।

घबराए प्रतीक और मुसकाते रूप-चित्र
लेकर मैं घर पर जब लौटता....
उपमाएँ, द्वार पर आते ही कहती हैं कि
सौ बरस और तुम्हें
जीना ही चाहिए।
घर पर भी, पग-पग पर चौराहे मिलते हैं,
बाँहें फैलाए रोज़ मिलती हैं सौ राहें,
शाखा-प्रशाखाएँ निकलती रहती हैं,
नव-जीवन रूप-दृश्यवाले सौ-सौ विषय
रोज़-रोज़ मिलते हैं...

▶ प्रतीकों एवं बिंबों को लेकर घर लौटता है

कवि कहता है कि मैं समाज से ऐसे प्रतीक या ऐसे महत्वपूर्ण शब्द इकट्ठे कर लेता हूँ जो लोगों के घबराहट को व्यक्त कर सकते हैं। घबराए प्रतीक का यह अर्थ भी निकलता है कि वह समाज से डरता है कि उन्हें समाज में स्वीकृति मिलेगी या नहीं। कवि समाज से जैसे रूप-चित्र (शब्दों के माध्यम से रचे जानेवाले बिम्ब) इकट्ठे करते हैं जो लोगों के खुशियों को, मुस्कुराहट को व्यक्त कर सकते हैं। ऐसे प्रतीकों एवं बिंबों को लेकर जब वह घर लौटता है तो उपमाएँ (अलग अलग विचारों, भावनाओं, व्यक्तियों या वस्तुओं) उनसे कहता है कि जितना कुछ तुम व्यक्त करना चाहते हो इतना करने केलिए तुम्हें कम से कम सौ बरस का जीवन और चाहिए। तभी तुम जो कुछ महसूस किया है वह सब अपनी रचनाओं द्वारा व्यक्त कर पाओगे।

प्रतीकों, बिम्बों एवं उपमाओं की प्रयोग से कवि की साहित्यिक गरिमा बढ़ती है और

SGOU

साहित्य की आयु भी बढ़ती है। इसी कारण कवि को यह महसूस होती है कि उपमाएँ उन्हें दीर्घायू होने का वरदान देती है।

▶ प्रतीकों, बिम्बों एवं उपमाओं की प्रयोग से कवि की साहित्यिक गरिमा बढ़ती है

वास्तव में यह हर रचनाकार की असंतोष की बात है। क्योंकि वे महसूस तो बहुत कुछ कर लेते हैं। लेकिन उन सबको व्यक्त करने केलिए जीवन छोटा पड़ जाता है।

▶ अंदर भी पग-पग पर अनगिनत विषय

कवि आगे कहता है कि घर के बाहर ही नहीं घर के अंदर भी पग-पग पर अनगिन्-ात विषय बाहें फैलाए हर रोज़ उनका स्वागत करती है। विचारों की एक डाली से सौ डालियाँ निकलती रहती है। एक शाखा से सौ शाखाएँ फूटती रहती है। इसतरह विचारों का वृक्ष बढ़ता रहता है, विस्तारित होता रहता है। नित नवीन और नए नए रूप एवं दृश्यवाले सौ-सौ विषय रोज़-रोज़ मिलते रहते हैं। भावार्थ यह हुआ कि बाहर की दुनिया तो समृद्ध है ही, अंदर की दुनिया भी उतना ही समृद्ध है।

और, मैं सोच रहा कि
जीवन में आज के
लेखक की कठिनाई यह नहीं कि
कमी है विषयों की
वरन् यह कि आधिक्य उनका ही
उसको सताता है,
और, वह ठीक चुनाव कर नहीं पाता है!!

▶ विषयों की कमी नहीं

कवि जीवन की बहुरंगीपन को देखकर कहता है कि आज की लेखकों की मुश्किल विषयों की कमी नहीं है, बल्कि विषयों की बाहुल्य है। विषयों की खोज में उन्हें इधर-उधर फटकना नहीं पड़ता। लेकिन विषयों में से विषय चुनने पर उलझकर रह जाते हैं। विषयों की बहुलता आज की लेखक को परेशान करता है। क्योंकि वह तय नहीं कर पाता कि किस विषय पर उसे साहित्य रचना करना चाहिए।

1.4.3 पंद्रह अगस्त - गिरिजा कुमार माथुर

नई कविता के प्रमुख कवि गिरिजा कुमार माथुर की पंद्रह अगस्त कविता एक प्रासंगिक एवं समसामयिक कविता है। कवि नये नये आज़ाद हुए अपने देश की आज़ादी को अक्षुण्ण बनाए रखने केलिए चिंतातुर हैं।

▶ स्वतंत्रता के लिए कवि सचेत करते हैं

संभवतः 15 अगस्त 1947 को रची गई इस पंद्रह अगस्त कविता का शीर्षक भी यही है। जैसे लंबी बीमारी से उठे व्यक्ति को स्वास्थ्य के प्रति सचेत किया जाता है, वैसे ही सदियों की ग़ुलामी से बाहर आए देश को उसकी स्वतंत्रता के लिए कवि सचेत करते हैं।

▶ लेखक श्री गिरिजा कुमार माथुर

हिन्दी साहित्य के जाने माने लेखक श्री गिरिजा कुमार माथुर का जन्म 22 अगस्त 1919 को मध्यप्रदेश के अशोकनगर में हुआ था। इन्होंने आरंभिक शिक्षा झाँसी में की और स्नातक की शिक्षा लखनऊ में की। उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं 'मंजीर' 'नाश और निर्माण', 'धूप के धान' 'शिलापंख चमकीले', 'जो बँध नहीं सका', 'साक्षी रहे वर्तमान',

'मैं वक्त के हूँ सामने' आदि।

▶ 'गीत' विधा

'पंद्रह अगस्त' उनकी चर्चित कविता है। यह 'गीत' विधा के अंतर्गत आते हैं। गीत में साधारणतया एक मुखड़ा और फिर दो तीन अंतरा होता है। गीत का प्रथम पंक्तियों को, जो बीच बीच में दोहराया जाता है मुखड़ा कहा जाता है और बाकी के पंक्तियों को अंतरा कहा जाता है।

▶ स्वतंत्रता प्राप्ती के तुरंत बाद की दौर की बात

इस कविता में कवि स्वतंत्रता प्राप्ती के तुरंत बाद की दौर की बात कर रहा है। कवि कहता है कि हमें आज़ादी मिली है। चारों और खुशी एवं उमंग है लेकिन फिर भी हमें शत्रुओं से सावधान रहना है और देश को आगे बढ़ाना है।

1

आज जीत की रात
पहरुए! सावधान रहना
खुले देश के द्वार
अचल दीपक समान रहना

▶ सावधान रहना

यहाँ पर कवि कहता है हमारे पहरेदारों से, हमारे सैनिकों से कहता है कि आज जीत की रात है। आज हमने एक जंग, आज़ादी की जंग जीत लिया है। फिर भी हमारे देश के पहरेदारों, हमारे वीर सैनिकों, तुम सावधान रहना, सतर्क रहना। जलते हुए दीपक के समान देश के द्वार पर सावधानी से ही रहना है। कवि अपने देशवासियों को चेता रहे हैं कि आज आज़ादी के जश्न की रात है, इसलिए अति उत्साह में किसी प्रकार की लापरवाही न हो जाए! स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश हर प्रकार से सभी के लिए खुला है। ऐसे में दीपक के समान अडिग रहकर मार्ग भी प्रशस्त करना है और सुरक्षा का सजग प्रहरी भी बने रहना है।

2

प्रथम चरण है नए स्वर्ग का
है मंज़िल का छोर
इस जनमंथन से उठ आई
पहली रत्न-हिलोर
अभी शेष है पूरी होना
जीवन-मुक्ता-डोर
क्योंकि नहीं मिट पाई दुःख की
विगत साँवली कोर
ले युग की पतवार
बने अम्बुधि समान रहना।

कवि आगे कहता है कि बहुत सत्कर्मों के बाद, संघर्षों के बाद इस स्वर्ग-सी आज़ादी हमें प्राप्त हुई है। यहाँ कवि कहता है कि आज़ादी स्वर्ग के समान हैं। कवि के अनुसार

▶ आज़ादी स्वर्ग के समान हैं

ग़ुलामी अगर नरक है तो आज़ादी स्वर्ग। देश इस दृष्टिकोण से स्वर्ग की तरफ पहला क़दम बढ़ा चुका है। आज हमें आज़ादी मिली है खुलकर बोलने का, खुलकर हमारी जीवन व्यतीत करने की आज़ादी मिली है।

▶ बस शुरुआत है

भले ही हमने अपने लक्ष्य, आज़ादी पा ली है। लेकिन यह बस शुरुआत है। सच्चे मायने में हम तब आज़ादी पाएँगे जब हम सबका विकास कर पाएँगे। समाज की छोटे-से छोटे लोगों का विकास कर पाएँगे। अभी जो आज़ादी हमें प्राप्त हुआ है, यह तो बस शुरुआत है, नए भारत की।

▶ परतंत्रता की दुःख की काली छाया मिट नहीं पाया है

कवि आगे कहता है कि अभी समाज के अलग अलग वर्ग के लोगों में बहुत ही दूरियाँ है। अमीरी-गरीबी का, ऊँच-नीच का, जाति-पांत का, ऐसे कई दूरियाँ हैं। हमें अब सबको साथ लाना है और नए देश का निर्माण करना है। ब्रिटिशों के शोषण से हमारे जीवन का डोर काफी बिखर गया है। अब हमें उसे वापस जोड़ना है। अभी भी परतंत्रता की दुःख की काली छाया मिट नहीं पाया है। गुलामी का दुःख-दर्द सभी लोगों के मन में भरा है। कवि देश के अधिकारियों से, पहरेदारों से कहता है कि जिस प्रकार नाविक पतवार लेकर समुद्र में नाव को सही दिशा में लेकर जाता है उसी प्रकार तुम भी इस युग के पतवार को लिए विशाल जनसमुदायों को सही दिशा की ओर ले जाना। इसलिए हे पहरुए, तुम सावधान रहना। सतर्क रहना। क्योंकि इस नवस्वाधीन देश की और उस देश की जनसमुदायों की सुरक्षा एवं आज़ादी की रक्षा के लिए तुम्हें सावधान रहना है।

3

विषम शृंखलाएँ टूटी हैं
खुली समस्त दिशाएँ
आज प्रभंजन बनकर चलतीं
युग-बंदिनी हवाएँ
प्रश्नचिह्न बन खड़ी हो गईं
यह सिमटी सीमाएँ
आज पुराने सिंहासन की
टूट रही प्रतिमाएँ
उठता है तूफ़ान, इन्दु! तुम
दीप्तिमान रहना।

▶ देश विभाजन की बात

इन पंक्तियों में कवि कहता है कि जितनी भी विषम श्रृंखलाएँ हैं अर्थात समस्याएँ थी वे टूट गयी है, ब्रिटिशों की हुकूमत खत्म हो गयी है। इसी कारण से भारतवासियों के लिए समस्त दिशाएँ खुल गयी है। और अब वे आज़ादी के साथ विचरण कर सकते हैं। लेकिन ब्रिटिशों के द्वारा जो सांप्रदायिक भेद भाव फैलाए गए हैं वे भावनाएँ प्रभंजन अर्थात तुफान की गति से चारों दिशाओं में फैल रहे हैं। और सांप्रदायिकता के आधार

पर सीमाएँ सिमट रही है। अर्थात यहाँ पर कवि देश विभाजन की बात कही है। कवि कहते है, अब पुराने सिंहासन टूट गए है। यानी ब्रिटीश शासन खत्म हो गए है। विदेशी भारत छोड़ गए हैं लेकिन सांप्रदायिकता के भाव फैलाकर गए हैं। और सांप्रदायिकता के आग में देशवासी अपने ही मित्रों से लड़ रहे हैं।

कवि कहता है कि हे पहरेदारों, तुम चंद्र के समान रोशनी से अर्थात मार्गदर्शन से सांप्रदायिक भावना को मिटाना। हे पहरेदार, तुम सावधान रहना।

4

ऊँची हुई मशाल हमारी
आगे कठिन डगर है
शत्रु हट गया, लेकिन उसकी
छायाओं का डर है
शोषण से है मृत समाज
कमज़ोर हमारा घर है
किन्तु आ रहा नई ज़िन्दगी
यह विश्वास अमर है
जन-गंगा में ज्वार,
लहर तुम प्रवहमान रहना
पहरुए! सावधान रहना।

▶ आज़ादी को आगे बरकरार रखना कठिन है

कविता की इन अंतिम पंक्तियों में कवि कहता है कि ऊँची हुई हमारी इस मशाल को अर्थात् ब्रिटिशों से संघर्ष करते प्राप्त इस आज़ादी को आगे बरकरार रखना कठिन है। देश का नव निर्माण करना है। देश का विकास करना है जो आसान नहीं है बल्कि कठिन कार्य है। शत्रु हट गया है, अर्थात ब्रिटिश चला गया है। लेकिन इस शत्रु की छायाओं का डर अभी तक बना हुआ है। वह शत्रु अभी भी कोई नया चाल चल सकता है। इसलिए हमें सावधान रहना है।

▶ कवि आशावादी है

कवि कहता है कि ब्रिटिशों ने भारतवासियों का बुरी तरह से शोषण किया है, जिससे हमारा समाज निष्प्राण हो चुका है। हमारा घर, हमारा देश आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक राजनीतिक हर तरह से कमज़ोर हो गया है। लेकिन कवि आशावादी है और उनको यह विश्वास है कि हमें एक नयी ज़िन्दगी मिलेगी। जिसमें समस्त प्राणी स्वतंत्र होंगे, शोषणमुक्त होंगे। समानता होगी और देश का विकास होगा।

▶ एकता की भावना को बनाए रखना

अंत में कवि एकता की भावना को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि जिस तरह ज्वार के लहरें शक्तिमान होती है उसी प्रकार जन गंगा अर्थात् जन समुद्र में भी ज्वार लहरों की तरह शक्तिशाली होती है। इसलिए हे देशवासियों, हे पहरुए, तुम इस एकता की भावना को प्रवाहित करते रहना, इस एकता की भावना को बनाए रखना।

इस तरह प्रस्तुत कविता के माध्यम से कवि ने देश की रक्षा में लगे हुए जो पहरेदार है, देश की सीमाओं में जो पहरा दे रहे हैं, उन्हें प्रेरणा दे रहे है, उनसे अपील कर रहे हैं कि देश को प्राप्त आज़ादी को आपको किसी भी तरह बनाए रखना है। अन्यथा इतनी कठिन परिस्थितियों से गुज़रकर हमने जो स्वतंत्रता प्राप्त की है वह कहीं फिरसे नष्ट न हो जाए।

▶ उत्तरदायित्व का निर्वहन करने की प्रेरणा

इस प्रकार गिरिजा कुमार माथुर की पंद्रह अगस्त कविता सांकेतिक रूप से जहाँ स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किए गए संघर्षों को दर्शाती है, वहीं इसे बचाए रखने के लिए उत्तरदायित्व का निर्वहन करने की प्रेरणा भी देती है। इस प्रकार यह एक अत्यंत प्रासंगिक एवं सोद्देश्य कविता है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

प्रयोगवाद की प्रतिष्ठित एवं प्रवर्तक कवि अज्ञेय की बहुचर्चित एवं प्रयोग की दृष्टि से उत्तम कोटि की कविता है 'कलगी बाजरे की'। इसमें कवि अपने प्रेयसी की रूप सौंदर्य एवं उसकी निकटता की जादूगरी को व्यक्त करने केलिए नवीन एवं अद्‌भुत प्रयोगों का सृजन किया है। कवि अपने प्रेयसी का वर्णन करने केलिए परंपरागत उपमानों का उपयोग नहीं करता है। वरन् उन उपमानों को अपनी भावनाओं को व्यक्त करने केलिए अक्षम घोषित करते हुए नवीन उपमानों का खोज करने निकल पड़ते हैं। परंपरागत उपमानों से हावी हुए अन्य लोगों केलिए उनका नया उपमान हास्यास्पद लगा तो उन्होंने उन सबको अपना पक्ष तर्कसम्मत रूप में व्यक्त करते हुए अपने नवीन उपमानों को प्रतिष्ठा दिला ही देता है।

दूसरी कविता 'मुझे कदम कदम पर' मुक्तिबोध जी की कविता है। इसमें कवि एक रचनाकार की दृष्टि से समाज एवं संसार को देखता है और अपना विचारों को व्यक्त करता है। कवि अपने सामने कई राहों को अर्थात विषयों को देखता है और महसूस करता है कि यह संसार कितना समृद्ध है। और कवि यह भी व्यक्त करता है कि समाज के निकट रहने से साहित्यकार को अनगिनत विषय प्राप्त हो सकता है जिसके बल पर वे साहित्य रचना कर सकता है। कवि यह भी कहता है की साहित्यकार को घमंड या अहं भावना से दूर रहकर समाज में उतरना है तभी वह विषयों को ढूँढ सकेंगे। कवि यह भी कहता है कि बाहर की दुनिया ही नहीं अंदर की दुनिया भी उतना ही समृद्ध है, अर्थात विषयों से सम्पन्न है।

अगली कविता है गिरिजा कुमार माथुर की 'पंद्रह अगस्त'। इसमें कवि आज़ादी की महत्व, आजादी प्राप्त करने केलिए किए गए संघर्षों का याद दिलाते हुए देश की पहरेदारों को सावधान रहने की हिदायत देते है कि कहीं असावधानी से प्राप्त आज़ादी नष्ट ना हो जाए। कवि पारतंत्र्य का दुःख का भी याद दिलाते हैं और आज़ादी को स्वर्ग सा बताते हैं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. 'कलगी बाजरे की' कविता की प्रयोगात्मकता पर चर्चा चलाईए।
2. 'मुझे कदम कदम पर' कविता का आस्वादन टिप्पणी तैयार कीजिए।
3. कवि का परिचय देते हुए 'पंद्रह अगस्त' कविता की सार्थकता पर चर्चा कीजिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

BLOCK 02

नई कविता

SGOU

Unit 1: नई कविता : अवधारणा और स्वरूप, प्रयोगवाद से संसक्ति और विरक्ति, दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक की भूमिका

Unit 2: नई कविता की प्रवृत्तियाँ और उपलब्धियाँ, प्रयोगवादिता के स्थान पर प्रयोगशीलता, नई कविता एवं अन्य काव्य आंदोलन - जनवादी कविता, अकविता, बीट कविता, नवगीत परंपरा, नकेनवाद, काव्य भाषा का जनवादी रूप

Unit 3: प्रमुख कवि - धर्मवीर भारती, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

Unit 4: धर्मवीर भारती - टूटा पहिया, केदारनाथ सिंह - अकाल में दूब, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - पोस्टर और आदमी, शमशेर बहादुर सिंह - काल, तुझसे होड़ है मेरी, रघुवीर सहाय - कोई और एक मनदाता नरेश मेहता - घर की ओर

इकाई 1

नई कविता : अवधारणा और स्वरूप, प्रयोगवाद से संसक्ति और विरक्ति, दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक की भूमिका

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- नई कविता की अवधारणा एवं स्वरूप समझता है
- नई कविता एवं प्रयोगवाद का संबंध समझता है
- नई कविता में दूसरे सप्तक की भूमिका समझता है
- नई कविता में तीसरे सप्तक की भूमिका समझता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी कविता की विकास परम्परा बहुत पुरानी है। आदिकाल से रीतिकाल तक की अवधि लम्बी है, परिवर्तन कम। लेकिन आधुनिक काल के छोटे अरसे में हिन्दी कविता ने अनेक मोड़ लिए अनेक वादों, प्रवृत्तियों से गुज़री। भारतेन्दु युग की बालवत्ता से निकलकर, द्विवेदी युग की मर्यादा को समेटकर, छायावाद की रंगीन कल्पनाएँ और हार्दिक अनुभूतियों से छनकर, प्रगतिवाद की क्रान्ति स्वीकार कर आधुनिक हिन्दी कविता प्रयोगवाद तक चली आयी। प्रयोगवाद आधुनिक हिन्दी कविता का एक दिशांतरकारी काव्य आन्दोलन है। प्रगतिवाद के नारेबाजी साहित्य से ऊबे हुए कुछ साहित्यकारों ने भावाभिव्यक्ति के लिए नए नए चरागाहों की तलाश की। फलस्वरूप कविता के भाव एवं शिल्प में नए-नए प्रयोग आए और हिन्दी कविता प्रगतिवाद के मार्क्सवादी घेरे से बाहर आई। इस प्रकार एक नए काव्य-आन्दोलन का जन्म हुआ जिसे प्रयोगवाद कहा जाता है। प्रगतिवाद की प्रतिक्रिया, नवीनता की अभिरुचि, नई शैली की माँग, नए बिम्ब एवं प्रतीकों को प्रकट करने की तत्परता, फ्रायडवाद, व्यक्तिवाद, अस्तित्ववाद और अंग्रेजी काव्य आन्दोलन 'एक्सपरिमेन्टलिज्म' का प्रभाव आदि प्रयोगवाद के प्रेरक तत्व रहे। असल में प्रगतिवादी कविता के बीच में से प्रयोगवादी कविता की शुरूआत हुई। प्रगतिवाद की घोर सामाजिकता के विरुद्ध कुछ नए कवियों ने अपनी वैयक्तिक आशा, निराशा, कुण्ठा एवं पीड़ा की स्वतंत्र अभिव्यक्ति की। ऐसे सात नए कवियों की कविताओं का एक संकलन 'तार सप्तक' अज्ञेय जी के सम्पादन में 1943 में प्रकाश में आया। इस 'तार सप्तक' ने हिन्दी कविता की तकदीर बदल ली, प्रगतिवाद से हिन्दी कविता को मुक्त कर दिया और हिन्दी काव्य-जगत में प्रयोगवाद की बारी आई। 'तार सप्तक' की भूमिका में अज्ञेय जी ने 'प्रयोग' शब्द का बार-बार प्रयोग किया। 'तार सप्तक' की कतिपय कविताओं में 'प्रयोगशीलता' प्रकट थी। अतः इस काव्य आन्दोलन का नाम पड़ा 'प्रयोगवाद'। लेकिन ये कवि एक ही काव्य-सम्प्रदाय के नहीं रहे, विभिन्न राहों पर चलनेवाले प्रयोगवादी कवि अपने को किसी वाद में बाँधना नहीं चाहते थे। उनकी नज़र में 'प्रयोग' एक वाद नहीं रहा। इसलिए प्रयोगवाद नाम उनके लिए पसंदीदा नहीं

रहा। उन्नीस सौ पचास तक आते आते प्रयोगवादी कविता के तन-मन में कालोचित परिवर्तन आया। वह एक हद तक 'प्रयोगशाला' से बाहर निकली, उसमें नई आस्था और नई वैचारिकता आ मिली। उन्नीस सौ इक्यावन (1951) प्रकाशित 'दूसरा सप्तक' की कविताओं में यह बदलाव प्रकट था। इसका सम्पादन करते हुए अज्ञेय जी ने 'प्रयोगवाद' नाम पर अस्वीकार प्रकट किया और तत्कालीन कविता के लिए 'नए काव्य' 'नई कविता' जैसे शब्दों का प्रयोग किया और हिन्दी काव्य-जगत में 'नई कविता' नाम का प्रचार होने लगा। उन्नीस सौ चौवन (1954) में जगदीश गुप्त के सम्पादन में 'नई कविता' नामक एक पत्रिका निकली। परिणामस्वरूप तत्कालीन कविता 'नई कविता' हो गई।

Keywords / मुख्य बिन्दु

नई कविता, प्रयोगवाद, दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक

Discussion / चर्चा

2.1.1 नई कविता : अवधारणा और स्वरूप

▶ 1951 में अज्ञेय द्वारा 'दूसरा सप्तक'

सन् 1951 में अज्ञेय द्वारा सम्पादित 'दूसरा सप्तक' के प्रकाशन के पश्चात् ही 'नयी कविता' नाम शनैः-शनैः सामने आया। 1954 में जगदीश गुप्त एवं रामस्वरूप चतुर्वेदी ने 'नयी कविता' नाम की पत्रिका का सम्पादन किया जिससे एक नये वाद के रूप में 'नयी कविता' को प्रतिष्ठित होने में सहायता मिली।

▶ प्रयोगवाद और नयी कविता अलग-अलग है

'प्रयोगवाद' और 'नयी कविता' को लेकर हिन्दी साहित्य में पर्याप्त चर्चा रही है। कुछ विद्वानों ने प्रयोगवाद और नयी कविता को अलग-अलग माना है, तो कुछ ने दोनों को एक ही समझा है। वस्तुतः 'नयी कविता' 'प्रयोगवाद' की अगली सीढ़ी है। 'प्रयोगवाद' और 'नयी कविता' में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि प्रयोगवाद द्वन्द्व और प्रतिक्रिया की कविता है, किन्तु नयी कविता संश्लेषण और सामंजस्य की कविता है। नये कवियों ने पुरातन परम्परा व शब्दावली का मोह त्यागकर अभिव्यक्ति के नये क्षेत्र और नयी भूमियों की खोज की। चतुर्दिक व्याप्त अनास्था, विघटन, दुराशा, कुण्ठा, विवशता, बोझिलता व बेचैन छटपटाहट की अनुगूँज नयी कविता में सर्वत्र व्याप्त है। युगीन वैषम्य से उपजी अनास्था सदृश नकारात्मक वृत्तियाँ ही सामाजिक सत्य थीं, जिन्हें ईमानदारी के साथ कवियों ने कृतियों में स्थान दिया। कतिपय रचनाओं में आस्था, साहस, विश्वास एवं संकल्प का भी समन्वय है। नये कवि क्षण को महत्वपूर्ण मानते हुए उसे पूर्णतया भोगना चाहते हैं व उनकी कविता में लघुमानव की प्रतिस्थापना है। उपदेशात्मक प्रवृत्तियों का सर्वत्र अभाव है। नया कवि अन्तस् में घनीभूत संवेदना को चेतना के हल्के संस्पर्श से जगा भर देना चाहता है। नये कवियों ने परम्परा के बन्धनों

को तोड़कर शिल्प के क्षेत्र में नये प्रतिमान स्थापित किये प्रकृति, नारी आदि सनातन विषयों को नूतन दृष्टि से देखा गया। नये बिम्ब, नूतन उपमान, नवल प्रतीक, नवीन अलंकारों से नयी कविता सज्जित की गयी। नयी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियों को संक्षिप्ततः, अतियथार्थवादिता, सामाजिकता का अभाव, कल्पनाशीलता, लघुता के प्रति दृष्टिपात, बौद्धिकता की प्रतिष्ठा, विद्रोही स्वर, अतृप्त रागात्मकता, सामाजिक-राजनैतिक विद्रूपता के प्रति व्यंग्य, वैचित्र्य-प्रदर्शन, व्यापक सौन्दर्य बोध, शैली-शिल्प की नवीन मान्यतायें, औद्योगिक सभ्यता और विज्ञान की छाप व तज्जनित प्रक्रिया इत्यादि अनेक नामावलियों में निबद्ध कर सकते हैं।

इस काव्यधारा के प्रमुख कवि अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, मुक्तिबोध, लक्ष्मीकान्त वर्मा, धर्मवीर भारती, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कीर्ति चौधरी, विजय देव नारायण साही, कुँवर नारायण, नरेश मेहता, दुष्यन्त कुमार, भवानी प्रसाद मिश्र, जगदीश गुप्त, श्रीकान्त वर्मा, रघुवीर सहाय इत्यादि हैं।

2.1.2 प्रयोगवाद से संसक्ति और विरक्ति

- नयी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ और प्रमुख कवि

प्रयोगवाद एवं नई कविता के अंतर्संबन्ध को लेकर काफी मतभेद रहा है। कुछ विद्वान 'नई कविता' को 'प्रयोगवाद' का नामान्तर मात्र मानते हैं तो और कुछ दोनों का भिन्न काव्यांदोलन मानते हैं। यह सच है कि प्रयोगवाद एवं नई कविता सामान्य प्रवृत्तियाँ हैं, प्रयोगवादी कवि नई कविता के भी कवि हैं। फिर भी यह कहना उतना संगत नहीं कि नई कविता प्रयोगवाद का नामांतर मात्र है। प्रयोगवाद एवं नई कविता की लगभग दस वर्ष की अवधि के बीच कविता के संवेद्य एवं स्वरूप में, कवियों के चिंतन एवं सृजन में, परिवर्तन तो जरूर आए। प्रयोगवाद की कुछ प्रमुख प्रवृत्तियाँ नई कविता में मंद पड़ गई और कुछ नई प्रवृत्तियाँ उभर आयीं। शैली भी प्रयोगशील क्लिष्टता से सहजता की ओर मुड़ी। लेकिन 'नई कविता' का मूल स्रोत प्रयोगवाद ही रहा। अतः नई कविता को प्रयोगवाद से पृथक आन्दोलन का रूप देना समीचीन नहीं। इन दोनों को भिन्न काव्यांदोलन न मानकर एक ही आन्दोलन के दो चरण मानना अधिक संगत है। सन् 1959 में 'तीसरा सप्तक' का प्रकाशन हुआ तो नई कविता का विकास जोरों पर पहुँच गया। उन्नीस सौ पैंसठ तक यह काव्य- धारा अजस्र बह निकली। बाद में हिन्दी काव्य-जगत में विभिन्न काव्य-आन्दोलनों का बोलबाला रहा और इन सबों के मूल में इस काव्य-धारा का प्रभाव रहा। प्रयोगवाद एवं नई कविता की परिवर्तित धारा आज भी प्रवाहमान है।

- प्रयोगवादी कवि नई कविता के भी कवि हैं।

प्रयोगवाद एवं नई कविता ने अनेक नए नए-प्रतिभाशालियों को जन्म दिया और उनकी तूलिका से अनेक श्रेष्ठ काव्य-संग्रह रचे गए। इन प्रतिभाशालियों में तार सप्तक के कवि भी शामिल हैं और सप्तकेत्तर कवि भी। अज्ञेय, मुक्तिबोध, भवानीप्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, कुँवर नारायण, नरेश मेहता, कीर्ति चौधरी जैसे

▶ सप्तकेतर कवि केवल प्रयोगवाद एवं नई कविता के नहीं समूचे हिन्दी-साहित्य के स्वर्णिम हस्ताक्षर हैं

सप्तकीय कवि और लक्ष्मीकांत वर्मा, जगदीश गुप्त, धूमिल जैसे सप्तकेतर कवि केवल प्रयोगवाद एवं नई कविता के नहीं समूचे हिन्दी-साहित्य के स्वर्णिम हस्ताक्षर हैं। अज्ञेय के 'बावरा अहेरी' 'हरी घास पर क्षण भर' 'कितनी नावों में कितनी बार' मुक्तिबोध का 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', भवानी प्रसाद मिश्र का 'गीतफरोश', धर्मवीर भारती का 'ठंडा लोहा', सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के 'काठ की घंटियाँ', 'बाँस का पुल', 'गर्म हवाएँ' कुंवर नारायण का 'आत्मजयी' नरेश मेहता की 'बनपाखी सुनो' 'उत्सवा', 'अरण्या', रघुवीर सहाय का 'आत्महत्या के विरुद्ध', लक्ष्मीकांत वर्मा का 'अतुकांत' धूमिल का 'संसद से सड़क तक' आदि प्रयोगवाद एवं नई कविता के अमूल्य काव्य-संग्रह हैं। छायावाद के बाद हिन्दी कविता को इतनी महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ केवल इस काव्य-धारा से ही मिली हैं।

▶ प्रयोगवाद की कुछ गौण प्रवृत्तियाँ नई कविता में बदलाव के साथ विकास की परिणति तक पहुँच गई हैं

एक ही आन्दोलन के दो आयाम होने के कारण प्रयोगवाद एवं नई कविता में समान प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक हैं। लेकिन कुछ प्रवृत्तियाँ प्रयोगवाद में जितनी प्रबल हैं नई कविता में नाममात्र हैं। प्रयोगवाद की कुछ गौण प्रवृत्तियाँ नई कविता में बदलाव के साथ विकास की परिणति तक पहुँच गई हैं। अतः प्रयोगवाद की कुछ विशेष प्रवृत्तियाँ है, प्रयोगवाद एवं नई कविता में अभिव्यक्त कुछ सामान्य प्रवृत्तियाँ और नई कविता की कुछ निजी प्रवृत्तियाँ हैं।

▶ वेदना से उत्पन्न अनास्था के कारण कहीं कहीं निष्क्रियता भी जन्म लेती है

प्रयोगवाद एवं नई कविता में कुण्ठा, निराशा, पीड़ा, वेदना और दर्द का अजस्र प्रवाह है। नए कवियों की यह व्यथा वर्तमान जीवन के असंतोष, संघर्ष, निरर्थकता एवं मूल्यहीन्ता से उपजी है। जीवन के प्रति जो निराशा उपजी है उसने अनास्था और कुण्ठा को जन्म दिया। वेदना से उत्पन्न अनास्था के कारण कहीं कहीं निष्क्रियता भी जन्म लेती है। फिर भी नए कवियों ने आवश्यक समझकर दुःख, वेदना और पीड़ा का वरण किया है। अपनी कुण्ठाओं की दीवारों में बन्द कवि घुटता है लेकिन कुण्ठा और पीड़ा उसे स्वीकार्य है। नरेश मेहता के शब्दों में-

'वहन करो
ओ मन वहन करो पीड़ा!
.....
स्नेह करो
आँचल से ढककर रक्षणा दो !!
वहन करो, वहन करो पीड़ा !!

▶ प्रयोगवाद एवं नई कविता अस्तित्ववादी विचार-धारा से प्रभावित है

प्रयोगवाद एवं नई कविता अस्तित्ववादी विचार-धारा से प्रभावित है। ऊब, अकेलापन, संत्रास, अनिश्चय, मृत्युबोध, अजनबीपन का एहसास आदि अस्तित्ववादी अनुभूतियाँ इस काव्य-धारा में घुल-मिल गई हैं। वर्तमान विषम-सामाजिक-परिवेश में अस्तित्व को बनाए रखना कठिन है। इसलिए नए कवि अस्तित्व-पीड़ा से अशांत हैं। इतिहास के कोने पर कूड़े सा अपना अस्तित्व कवि मिटाना नहीं चाहता।

अतः धर्मवीर भारती डरते हैं-

'कूड़े सा हम को तजकर तट के पास
मन्थर गति से बढ़ जाएगा इतिहास।

▶ मध्य-वर्ग की त्रासदी एवं दुविधा की उरस्पर्शी अभिव्यक्ति है

प्रयोगवाद एवं नई कविता ने मध्य-वर्ग की त्रासदी एवं दुविधा की उरस्पर्शी अभिव्यक्ति की है। महात्वाकांक्षा और अंतःकरण के कठिन पाटों बीच दबे मध्य-वर्ग की ऐसी त्रासदी अन्यत्र दुर्लभ है-

'पिस गया वह भीतरी
औ' बाहरी दो कठिन पाटों बीच
ऐसी ट्रेजडी है नीच।'

▶ तीखा व्यंग्य विद्यमान है

व्यंग्य की प्रवृत्ति प्रयोगवाद तथा नई कविता की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। भ्रष्ट राजनीतिक, सामाजिक अनाचार एवं मूल्यहीनता पर व्यंग्य प्रहारों में कवियों ने कोई कसर नहीं छोड़ी है। राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विसंगतियों पर ऐसा तीखा व्यंग्य अपूर्व है। महानगरीय छल-छल पर व्यंग्य करने वाली, अज्ञेय की 'साँप' कविता, निर्जीव पोस्टरों पर प्राण देनेवाले वर्तमान मनुष्य की विचित्र मानसिकता पर व्यंग्य करने वाली 'पोस्टर और आदमी' कविता, साहित्य-व्यापार पर व्यंग्य कसने वाली 'गीतफरोश' कविता, छल राजनीति पर व्यंग्य-बाण चलाने वाली, धूमिल की कविता आदि इसके उदाहरण हैं। तत्कालीन राजनीति पर सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का यह व्यंग्य कितना कितना सार्थक है-

'लोकतंत्र को जूते की तरह
लाठी में लटकाए
भागे जा रहे हैं सभी
सीना फुलाए।'

▶ नवीन शिल्प पक्ष का प्रयोग है

प्रयोग एवं नई कविता का शिल्प पक्ष भी एकदम नवीन है। उसमें नए बिम्ब, प्रतीक एवं अलंकारों का प्रयोग नई भाषा-शैली में किया गया। बिम्ब एवं प्रतीक-विधान में कवि नितांत सतर्क रहे। प्रयोगवाद एवं नई कविता के बिम्ब एक ओर अत्यधिक प्राणवान एवं अर्थवान है तो दूसरी ओर प्रतीकात्मक एवं सांकेतिक। नए-नए बिम्बों के कलात्मक प्रयोग के साथ परम्परागत बिम्बों का नए अर्थ में प्रयोग किया गया। बाहरी और भीतरी संघर्ष के कठिन पाटों बीच दबकर मरनेवाले मध्यवर्गीय व्यक्ति की विवशता दिखाने मुक्तिबोध का यह बिम्ब कितना सफल है-

'वह सघन झाड़ी के कंटीले
तम-विवर में
मरे पक्षी-सा
विदा ही हो गया ... ।'

▶ नवीन बिम्ब की योजना की है

ऐसे भाव-व्यंजक नवीन बिम्ब प्रयोगवाद एवं नई कविता में सर्वत्र पाए जाते हैं। लेकिन पाश्चात्य बिम्बवाद से प्रेरित कुछ नए कवियों ने अपने काव्य में न केवल नए-नए बिम्बों की योजना की, अपितु संक्षिप्तता के मोह में खण्डित या अधूरे बिम्बों की भरमार कर दी।

SGOU

प्रयोगवाद एवं नई कविता का प्रतीक-विधान भी ताजा है। वहाँ टूटा पहिया लघुमानव का, उछली मछली जिजीविषा का, बावड़ी व्यक्ति के अन्तर्मन का, हरी-घास वासना का, मोम का घोड़ा गलनेवाले सपनों का, सड़ा-कपड़ा जीवनादर्शों का और फासफोरस शक्ति व चेतना का प्रतीक है। कवियों ने यौन प्रतीकों का भी यथेष्ट प्रयोग किया। मशीन, रेत, रासायनिक धुंध, सीमेंट का पथ, नदी का द्वीप, सिगरेट, सागर, अहेरी, सीप, चूड़ी का टुकड़ा, फसल, राख-ऐसे कितने ही प्रतीक या तो पहली बार नई कविता में दिखाई देते हैं या फिर उनके पारम्परिक अर्थ बदल गए हैं। इन नए प्रतीकों ने जहाँ नई कविता को नयी अर्थवत्ता और व्यंजकता प्रदान की, वहीं उसे दुरूह भी बनाया। कुछ कवियों के द्वारा प्रयुक्त प्रतीक इतने उलझ गए हैं कि उनका अर्थ समझना असाध्य हो गया। प्रयोगवादी कविता की दुरूहता का श्रेय उसकी भाषा से अधिक उसके अबूझ प्रतीकों को जाता है।

▶ नए प्रतीकों ने नई कविता को नयी अर्थवत्ता और व्यंजकता प्रदान की, उसे दुरूह भी बनाया है

बिम्ब और प्रतीकों के समान प्रयोगवाद एवं नई कविता के अलंकार खासकर उपमान नितांत नूतन है। कवियों ने परम्परागत अलंकारों को 'मुलम्मा उतरे बासन' बताकर नए उपमानों और-अप्रस्तुतों का अन्वेषण किया। अज्ञेय के अनुसार-

'ये उपमान मैले हो गए हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।'

फलस्वरूप प्रेमिका बाजरे की कलगी या हरी बिछली घास सी दिखती है, भावनाएँ थर्मामीटर की पारे सी उतर जाती हैं, कैमरे की लेंस सी आँखें बुझी हुई हैं, टाइपराइटर की तरह सब के पैर बारी-बारी से उठते हैं, सूर्य की किरणें पीलें टिंचर की तरह फैल जाती हैं, प्यार का बल्ब फ्यूज़ हो जाता है, सपने पापड़ की तरह टूट जाते हैं और घूप माँ की हँसी के प्रतिबिम्ब सी दिखाई देती है।

▶ नितांत नूतन उपमान का प्रयोग देख सकते हैं

प्रयोगवाद और नई कविता की मुख्य शैली गीति-शैली है साथ ही साथ जापानी 'हाईकू' जैसी विदेशी शैलियाँ भी हैं। इस काव्य-धारा का अंगीकृत छन्द मुक्त-छन्द है। दोहा, सवैया जैसे पुराने छन्दों को तोड़कर नए प्रयोग भी किये गए। त्रिकोण, त्रिभुज और गणित के चिह्नों का प्रयोग करना, गद्य की पंक्तियों को तोड़-मरोड़कर लिखना, सीधी-तिरछी लकीरें खींचना आदि अभिव्यक्ति के, शिल्प के नए उपकरण कविता में प्रयुक्त हुए। इनमें नवीनता तो जरूर रही है लेकिन उससे अधिक जटिलता आ गई। प्रयोगवाद एवं नई कविता का भाषा-संस्कार अलग है। प्रयोगवाद की भाषा में कहीं कहीं सुन्दर तो दीखती है लेकिन उसमें क्लिष्टता और दुरूहता का वर्चस्व अधिक है। कुछ कवियों ने भाषा का सहज प्रयोग किया है तो और कुछ ने नवीन प्रयोग के हठ के कारण शब्दों को तोड़-मरोड़कर उसके सौन्दर्य को मिटा दिया। अति बौद्धिकता के कारण बीच में क्लिष्ट-पद-योजना है। लेकिन नई कविता में यह भाषा-शिल्प बदलने लगा, फलस्वरूप भाषा की थकान दूर गई और नई ताजगी आ गई। अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत के साथ साथ क्षेत्रीय बोलियों के शब्दों और वाक्य-विन्यास को अपनाकर नए कवियों ने

▶ क्लिष्ट-पद-योजना है

अपनी कविता की भाषा को पहले की कविता से अलग और जनसाधारण की भाषा के निकट लाने तथा अधिक संप्रेष्य बनाने का प्रयत्न किया। सर्वेश्वर, भवानीप्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती यहाँ तक कि अज्ञेय की भी कुछ कविताओं में भाषा और अभिव्यंजना का यह सहज रूप देखा जा सकता है। धीरे-धीरे नई कविता में सहज, सरल, स्वाभाविक, सीधी भाषा में अनुभूतियों के स्पष्ट-कथन का, 'सपाटबयानी' का दौर आया। धूमिल की कविता से यह 'सपाटबयानी' का दौर आया। धूमिल की कविता में यह 'सपाटबयानी' यों खिल उठी-

'न कोई प्रजा है
न कोई तंत्र है
यह आदमी के खिलाफ
आदमी का खुलासा
षड़यंत्र है।'

▶ कुछ विशेष संदर्भों में नई कविता में नई भाषा जटिलता और दुरूह हो गई

लेकिन इसका उल्लेख भी यहाँ अनिवार्य है कि विचित्र मनोव्यापारों एवं उलझनों का चित्रण करते वक्त कुछ विशेष संदर्भों में नई कविता में नई भाषा जटिलता और दुरूह हो गई है। प्रयोगवाद एवं नई कविता की अभिव्यंजना शैली भी बदलती रही। फैन्टसी, दिवास्वप्न, चेतनाप्रवाह, मुक्त आसंग अनुक्रमिक भावना प्रवाह आदि अभिव्यंजना की विभिन्न प्रक्रियाओं से कविता गुजरती रही।

▶ प्रयोगवाद ने इस परिवर्तन की नींव डालते हुए 'वाद' से युक्त अपना नाम तजकर कविता को वाद-मुक्त करने के सराहनीय-कर्म की शुरूआत की

प्रयोगवाद एवं नई कविता की उपलब्धियों की विवेचना करते वक्त अनेक खूबियाँ और कुछ कमियाँ दृष्टिगत होती हैं। निराशावाद, भोगवाद, अहं की प्रबलता, अनास्था, व्यक्तिगत, उद्दाम-वासना, क्षण एवं लघुत्व के प्रति अतिमोह, बौद्धिकता, दुरूहता आदि इस काव्य आन्दोलन की कमजोरियाँ कही जा सकती हैं। लेकिन इस काव्य आन्दोलन के अनेक गुणों की चर्चा की गई है। ऐसे गुणों को इस दोषों से मिलाने से भला है इन कमियों के भीतर छिपे गुणों को ढूँढना। यह सच है कि इस काव्य आन्दोलन में अनास्था का स्वर है, निराशा और कुण्ठा तीव्र है, लेकिन इस अनास्था के भीतर से आस्था जन्म लेती है, वर्तमान के प्रति, भविष्य के प्रति आस्था। इसी तरह इस काव्य-आन्दोलन की वैयक्तिकता से सामाजिकता भी उपजी है। वैयक्तिक भूमिकाओं को समाजिक धरातल पर प्रस्तुत करते हुए 'जो कुछ मेरा है वह हम सब का है' जैसा मात्र नई कविता का महत्वपूर्ण विचार है, जिसमें इस काव्य-आन्दोलन की संभावना निहित है। नई कविता का लघुमानव भी समाज से कटा नहीं है, वह संघर्षपूरित समाज का परिच्छेद है। वर्तमान कविता में अभिव्यक्त 'आम आदमी' के पीछे वह लघुमानव ही काम करता है। नई कविता की तथा कथित कमजोरियों में भी अनुभूतियों की जो सच्चाई है वह सर्वोपरि है, उसकी संभावनाएँ असीम हैं। प्रयोगवाद एवं नई कविता के बिम्ब, प्रतीक और उपमान आज के कवियों के भी प्रेरक हैं। इस काव्य आन्दोलन का मौलिक गुण यह है कि इसने हिन्दी कविता को संवेद्य एवं स्वरूप की, चिंतन और सृजन की एक नई वैविध्यपूर्ण भावभूमि प्रदान की। प्रयोगवाद ने इस परिवर्तन की नींव डालते हुए 'वाद' से युक्त अपना नाम तजकर कविता को वाद-मुक्त करने के सराहनीय-कर्म की शुरूआत की।

SGOU

नई कविता ने आधुनिक हिन्दी कविता को वादों के चंगुल से मुक्त कर दिया, छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के थपेड़ों से आहत कविता को अपना स्वरूप प्रदान किया। इस प्रकार नई कविता ने भविष्य के लिए एक खुला-रास्ता खोल दिया है। वहाँ हरेक कवि अपने विचारों और विकारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति अनायास कर सकता है। इस काव्य-आंन्दोलन के वर्चस्व के कारण बाद में आए अनके आन्दोलन अल्पायु अप्रभावित रहे। इक्कीसवीं शती में भी इस काव्य-आंदोलन का स्रोत बन्द नहीं, प्रवाहित है। अतः अज्ञेय जी के शब्दों में इस काव्य-धारा के लिए यह कहा जा सकता है-

'फिर भी मरे नहीं;
तुम से तुम्हारी संभावनाएँ बड़ी हैं।'

2.1.3 दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक की भूमिका

आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इन्होंने अपने सृजन और चिंतन से हिन्दी जगत को गहरे तक प्रभावित किया। अज्ञेय एक समादृत संपादक भी रहे। पत्र-पत्रिकाओं के संपादन के अलावा उन्होंने अपने दौर के उभरते प्रमुख कवियों की रचनाओं को भी चार सप्तकों के माध्यम से प्रकाशित किया। अज्ञेय ने 'तारसप्तक', जिसे पहला सप्तक भी कहा जाता है, का प्रकाशन 1943 में किया। अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित इस काव्य-संग्रह में कुल सात कवियों की कविताएँ संग्रहित हुईं। इसी तरह आगे चलकर 1951, 1959 तथा 1979 में क्रमशः दूसरा, तीसरा और चौथा सप्तक प्रकाशित हुआ। इन सभी संग्रहों में हर बार अलग अलग सात कवियों की कविताएँ प्रकाशित हुई।

▶ 1951, 1959 तथा 1979 में क्रमशः दूसरा, तीसरा और चौथा सप्तक प्रकाशित हुआ

अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' कई मायनों में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। पहले सप्तक की तरह ही दूसरे सप्तक में भी अज्ञेय ने हिन्दी के नये सात कवियों को इसमें स्थान दिया। इसकी भूमिका में अज्ञेय ने एक सम्पादक के रूप में न सिर्फ इसमें संकलित कवियों और उनके कविताओं पर बात की अपितु साथ ही तारसप्तक पर उठे विवादों, चर्चाओं और कटु आलोचनाओं का खंडन करते हुए बदलते समय के अनुरूप कविता और आलोचना के मानदंडों पर भी बात की।

▶ दूसरे सप्तक में भी अज्ञेय ने हिन्दी के नये सात कवियों को इसमें स्थान दिया गया है

अज्ञेय द्वारा संपादित सप्तकों पर हुई चर्चा के केंद्र में इन संकलनों की कविताओं से अधिक इनकी भूमिकाएँ रहीं। इन भूमिकाओं को केन्द्रित करते हुए कविताओं की चर्चा होती रही। इस कड़ी में पहले, दूसरे और तीसरे सप्तक की भूमिकाओं की केंद्रीय भूमिका रही। पहले सप्तक में भूमिका लिखते हुए अज्ञेय ने जहां इस संकलन में संकलित कवियों की कविताओं को देखने, मूल्यांकन करने के लिए जिन बिन्दुओं की अपेक्षा की, वे ही विवाद की मूल वजह बन गए। इन विवादों को केन्द्रित करते हुए उनका उत्तर दूसरे एवं तीसरे सप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने देने का प्रयास किया। इन भूमिकाओं से उपजे विवाद और संवाद ने तत्कालीन हिन्दी कविता के मूल्यांकन एवं रचना और आलोचना के मानदंडों पर नए सिरे से विचार करने के अवसर उपलब्ध कराए।

▶ विवादों का उत्तर दूसरे एवं तीसरे सप्तक की भूमिका में है

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने नई कविता की अवधारणा एवं स्वरूप को समझा, साथ ही प्रयोगवाद से नई कविता की संसक्ति (संबंध) और विरक्ति (भिन्नता) पर भी चर्चा की। प्रयोगवाद के बाद हिन्दी साहित्य जगत में जो नवीन काव्यधारा उदित हुई, वही नई कविता के रूप में जानी जाती है। कई आलोचक नई कविता को प्रयोगवाद का ही विस्तार मानते हैं, किंतु समीक्षात्मक दृष्टि से देखने पर दोनों काव्यधाराओं में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। प्रयोगवादी काव्य की कुछ प्रवृत्तियाँ नई कविता में अवश्य देखने को मिलती हैं, परंतु दोनों का स्वभाव भिन्न है। कविगण निरंतर नवीनता की खोज में रहते हैं, और यही लालसा उन्हें नित नई काव्य प्रवृत्तियों की ओर ले जाती है। इसी प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्रयोगवादी कविता के बाद नई कविता का हिन्दी साहित्य में अवतरण हुआ। नई कविता के उद्‌भव और विकास में दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जिस प्रकार तार सप्तक का प्रकाशन प्रयोगवादी कविता का आरंभ माना जाता है, उसी प्रकार दूसरा सप्तक को नई कविता की प्रारंभिक अभिव्यक्ति का आधार माना जा सकता है। इन दोनों सप्तकों में नई कविता की प्रवृत्तियों से युक्त अनेक रचनाओं का प्रकाशन हुआ, जिसने इस काव्यधारा को सशक्त आधार प्रदान किया।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. नई कविता की स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
2. नई कविता की विशेषताएँ क्या क्या है?
3. नई कविता का प्रयोगवादी कविता से क्या क्या समानताएँ हैं?
4. नई कविता की प्रयोगवादी कविता से विरक्ति किस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है?
5. नई कविता की उद्‌भव में दूसरे सप्तक की भूमिका क्या है?
6. नई कविता की विकास में तीसरे सप्तक की भूमिका क्या है?

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 2

नई कविता की प्रवृत्तियाँ और उपलब्धियाँ, प्रयोगवादिता के स्थान पर प्रयोगशीलता, नई कविता एवं अन्य काव्य आंदोलन - जनवादी कविता, अकविता, बीट कविता, नवगीत परंपरा, नकेनवाद, काव्य भाषा का जनवादी रूप

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- नई कविता की प्रवृत्तियों के बारे में समझता है
- प्रयोगवादिता एवं प्रयोगशीलता का अंतर समझता है
- विभिन्न काव्य आंदोलनों के बारे में समझता है
- काव्य भाषा का जनवादी रूप समझता है

Background / पृष्ठभूमि

प्रयोगवाद के बाद हिन्दी साहित्य क्षेत्र में उदित नवीन काव्यधारा है नई कविता। कई विद्वान प्रयोगवाद एवं नई कविता को समान मानते हैं। लेकिन इसका गहराई से अध्ययन करने पर इन दोनों के बीच का अंतर समझ सकते हैं। यद्यपि इन दोनों में कई प्रवृत्तियाँ समान रूप से पाया जाता है, फिर भी इसका स्पष्ट अलगापन दृष्टिगत होता है। इन बातों को समझने की कोशिश इस अध्याय में किया जाएगा।

इस अध्याय में सबसे पहले तो हम नई कविता की प्रवृत्तियों का अध्ययन करेंगे। उसके बाद हम प्रयोगवादिता एवं प्रयोगशीलता के अंतर समझने की कोशिश करेंगे। यह प्रयोगवादी काव्यधारा को समझने में सहायक सिद्ध होगा।

नई कविता के बाद हिन्दी काव्य क्षेत्र में कई कविता आन्दोलनों का आविर्भाव हुआ। उनमें से प्रत्येक का अध्ययन इस अध्याय में किया जाएगा। नई कविता आंदोलन के बाद उभरे प्रमुख कविता आंदोलनों में जनवादी कविता, अकविता, बीट कविता, नवगीत परंपरा, नकेनवाद आदि उल्लेखनीय है। इन कविता आन्दोलनों का संक्षिप्त परिचय इस अध्याय में दिया जाएगा।

Keywords / मुख्य बिन्दु

नई कविता, प्रयोगवादिता, प्रयोगशीलता, काव्य आंदोलन, जनवादी कविता, अकविता, बीट कविता, नवगीत परंपरा, नकेनवाद

SGOU

Discussion / चर्चा

2.2.1 नई कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

नई कविता विषय-वस्तु एवं शिल्प दोनों ही दृष्टियों से पुरानी परम्परा से अलग है। विषय-वस्तु की दृष्टि से जहाँ इसमें नवीनता, मुक्त यथार्थवाद, बौद्धिकता, क्षणवादी जीवन दर्शन एवं लघु मानव की प्रतिष्ठा की गई है, वहीं शिल्प की दृष्टि से इनमें नवीन उपमान, प्रतीकात्मकता, बिम्बात्मकता एवं भाषा के नए प्रयोग का ह्रास दिखाई पड़ता है। संक्षेप में इस काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्तियों का विश्लेषण निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है-

2.2.1.1 नवीनता

नई कविता में नयापन है। भाव, विषय-वस्तु, शिल्प सभी दृष्टियों से वह 'परम्परा से विच्छेद' की कविता है। अज्ञेय ने संभवतः इसी कारण इन कवियों को 'नई राहों के अन्वेषी' का नाम दिया है। संवेदना और शिल्प की नवीनता के प्रति अदम्य आकर्षण ने इन्हें कुछ ऐसा कहने को बाध्य किया है जो पुरानी कविता में नहीं है। नए कवि नवीन मूल्यों की स्थापना करने को उत्सुक है और अतीत को विस्मृत करना चाहते हैं-

आओ हम उस अतीत को भूलें
और आज की अपनी रग-रग के अन्तर को छूलें - मुद्राराक्षस

▶ संवेदना और शिल्प की नवीनता इसमें देख सकते हैं

नवीनता के प्रति आग्रह रहने के कारण ही नई कविता में नए-नए विषय चुने गए हैं। इस कविता में पहली बार कंकरीट के पोर्च, चाय की प्याली, सायरन, रेडियम की घड़ी, चूड़ी का टुकड़ा, बाथरूम, क्रोशिए, गरन पकौड़ी..... मूत्र सिचित मृत्तिका के घेरे में खड़ा गधा जैसे विषयों का चित्रण हुआ। यथा :

मूत्र सिंचित मृत्तिका के वृत्त में
तीन टांगों पर खड़ा नत ग्रीव
धैर्य धन गदहा।

2.2.1.2 बौद्धिकता

▶ 'प्रयोगवादी कविता में भावना है, किन्तु हर भावना के सामने एक प्रश्नचिह्न लगा हुआ है। इसी प्रश्नचिह्न को बौद्धिकता कह सकते ह'

परम्परागत कविता में जहाँ भावना की प्रधानता है, वहीं नई कविता में बौद्धिकता को। आज का कवि भावनाओं की कैद से छूटकर बुद्धि के दुर्ग में बैठकर शब्दों का ताना-बाना बुनने में विश्वास करता है। नया कवि पाठक के हृदय को झंकृत करने के स्थान पर उसके बुद्धि को झकझोरना अधिक पसन्द करता है। इस बौद्धिकता की प्रधानता के कारण ही नई कविताओं में रागात्मकता का ह्रास हुआ है और विचारात्मकता की वृद्धि हुई है। 'कविता' निश्चित रूप से हृदय का विषय है, बुद्धि का नहीं किन्तु यदि उसे बलपूर्वक बुद्धि के किले में कैद करने का प्रयास किया जाएगा तो उसकी आत्मा मर जाएगी, उसकी सुकुमारता तहस-नहस हो जाएगी और उसमें सरसता नहीं रहेगी। अतिशय बौद्धिकता का ही यह दुष्परिणाम है कि नई कविता रसहीन हो गई है और उसमें

साधारणीकरण की क्षमता नहीं रही है। डॉ. धर्मवीर भारती नई कविता में उपलब्ध इस बौद्धिकता का समर्थन करते हुए कहते हैं- 'प्रयोगवादी कविता में भावना है, किन्तु हर भावना के सामने एक प्रश्नचिह्न लगा हुआ है। इसी प्रश्नचिह्न को आप बौद्धिकता कह सकते हैं।' डॉ. देवराज की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं, जिनमें कवि अपनी बुद्धि से सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों के ताप को नापने का प्रयास कर रहा है-

मेरी विशाल बुद्धि
सूर्य चन्द्र तारों के
तापवेग नाप रही
मेरी अतर्क्स शक्ति,
जल-थल समीर व्योम
विद्युत को चांप रही

- डॉ. देवराज

2.2.1.3 अतिशय व्यक्तिगत

नयी कविता की एक प्रमुख प्रवृत्ति है-अतिशय व्यक्तिगत। नए कवियों ने अपने व्यक्तिगत जीवन के सुख-दुःख को काव्य का विषय बनाकर यद्यपि कोई अनहोनी बात नहीं की, क्योंकि कवि अपने वैयक्तिक जीवन से एकदम असम्पृक्त रहकर काव्य-रचना में प्रवृत्त नहीं हो सकता। व्यक्तिगत जीवन का सत्य काव्य में स्फुरित होता ही है। भारतेन्दु युग एवं छायावादी युग के कवियों में भी व्यक्तिगत की प्रवृत्ति रही है, किन्तु प्रयोगवादी युग के कवियों ने अतिशय व्यक्तिगत की झोंक में कहीं-कहीं तो कविता को आत्मविज्ञापन सा बना दिया है। उदाहरण के लिए 'भारत-भूषण' की निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य है-

▶ व्यक्तिगत जीवन के सुख-दुःख काव्य का विषय है

साधारण नगर के
एक साधारण घर में
मेरा जन्म हुआ।
बचपन बीता अति साधारण
साधारण रहन-सहन
साधारण खान-पान।

- भारत भूषण

▶ आत्मतृप्ति का अनुभव होता है

कवियों ने अपने विक्षोभ, निराशा, कुण्ठा, सफलता-असफलता को काव्य-निबद्ध करके आत्मतृप्ति का अनुभव किया। इस काव्यधारा में उपलब्ध व्यक्तिगत इतनी 'आत्म केन्द्रित' है कि उसमें किसी अन्य को रस की अनुभूति नहीं होती।

2.2.1.4 क्षणवादिता

नया कवि 'क्षणवादी' जीवन दर्शन को अंगीकार करता है। उसे 'कल' का विश्वास नहीं, भविष्य का भरोसा नहीं इसलिए वह वर्तमान को ही सब कुछ समझकर उसे पूरी

तरह भोगने का आकांक्षी है। निम्न पंक्तियों का केन्द्रीय स्वर यही क्षणवादिता है-

▶ इन कविताओं में 'कल' का विश्वास नहीं, भविष्य का भरोसा नहीं

'आओ हम उस अतीत को भूलें
और आज की अपनी रग-रग के अन्तर को छूलें
छूलें इसी क्षण
क्योंकि कल के ये नहीं रहे
क्योंकि कल हम भी नहीं रहेंगे'
-अज्ञेय

मानव मूल्यों के विघटन, सामाजिक विषमताओं एवं युद्ध की विभीषिकाओं के कारण निराशा के स्वर नई कविता में व्याप्त है। नई कविता का यह निराशावाद एवं तद्जनित क्षणवाद कुछ तो व्यक्तिगत कारणों से है और कुछ सामाजिक कारणों से। उसका दृष्टि कोण इस दृश्यमान जगत के प्रति क्षणवादी है अतः वह हर क्षण को पूर्णतः भोगने का आकांक्षी है।

2.2.1.5 भोगवाद एवं वासना

नई कविता में भोग और वासना के स्वर विद्यमान है। आज का कवि प्रत्येक 'क्षण' को केन्द्रित स्तर पर भोगने के लिए उत्सुक है। संभवतः इसी कारण नई कविता में दूषित मनोवृत्तियों का चित्रण अपनी चरम सीमा पर पहूँच गया है। कहीं-कहीं तो प्रतीकों के माध्यम से 'वासना' को अभिव्यक्ति दी गई है, तो कहीं उसका स्पष्ट कथन है। उदाहरण के लिए 'अज्ञेय' ने 'सावन-मेघ' नामक कविता में 'प्रतीकों' के माध्यम से अपनी बात कही है-

▶ प्रत्येक 'क्षण' को भोगने के लिए उत्सुक है

वासना के पंक सी फैली हुई थी,
धारयित्री सत्य सी निर्लज्ज, नंगी
औ, समर्पित
-अज्ञेय

'अज्ञेय' जी ने यह स्वीकार किया है कि 'आधुनिक युग का साधारण व्यक्ति सेक्स सम्बन्धी वर्जनाओं से आक्रान्त है। ये कुण्ठाएँ काव्य के माध्यम से अभिव्यक्ति पाती है। उनकी एक अन्य कविता में वासनाभिभूत पुरुष का दृश्य उपलब्ध है-

▶ कविता के नाम पर 'अश्लील' टिप्पणियाँ मात्र की है

'आह मेरा श्वास है उत्तप्त
धमनियों में उमड़ आई है लहू की धार
प्यार है अभिशप्त
तुम कहाँ हो नारि?'
-अज्ञेय

निःसन्देह नए कवियों ने कहीं-कहीं तो कविता के नाम पर 'अश्लील' टिप्पणियाँ मात्र की है, जो सभ्य समाज में पढ़े जाने योग्य भी नहीं है।

2.2.1.6 यथार्थवादिता

नए कवि का दृष्टिकोण यथार्थवादी है। जीवन को उसके वास्तविक रूप में प्रस्तुत करना नए कवि का उद्देश्य रहा है। यही कारण है कि नई कविता की विषय-वस्तु प्रतीक, उपमान, भाषा आदि यथार्थ पर आधारित है। सीधे-सादे सरल शब्दों में सहज अभिव्यक्ति करते हुए इन कवियों की अग्रांकित पंक्तियाँ जीवन के एक यथार्थ चित्र को प्रस्तुत करती हैं-

▶ जीवन को उसके वास्तविक रूप में प्रस्तुत करता है

'बन्द कमरे की गरमाई फिजा में
गठरी सा गुड़मुड़ मैं
दुबका रजाई में सुन रहा
खिड़की की संकरी दरारों से आती
नल पर झगड़ती औरतों की चखचख'

- शरद देवड़ा

उद्योग-प्रधान वैज्ञानिक युग की झलक भी इन कविताओं में इसी यथार्थवादी चित्रण के कारण दिखाई पड़ती है। यथार्थ प्रतिस्पर्धा, भय, घृणा आदि की विद्रूपता 'जगदीश गुप्त' की निम्न पक्तियों में देखी जा सकता है-

▶ यान्त्रिक सभ्यता की अभिव्यक्ति यथार्थ रूप में नई कविता में हुई है

'इस युग के सिया राम क्षुधा-काम।
.....मानव के तिमिर ग्रस्त चिन्तन के भानु-इन्दु
यन्त्र बाहु, यन्त्र-चरण, यन्त्र हृदय, यन्त्र बुद्धि
सब कुछ यन्त्रित, केवल इच्छाएँ अनियन्त्रित'

- जगदीश गुप्त

यान्त्रिक सभ्यता वर्तमान युग धर्म है, जिसकी अभिव्यक्ति यथार्थ रूप में नई कविता में हुई है।

2.2.1.7 आधुनिक युग बोध

प्रयोगवादी कवियों ने आधुनिक मानव के जीवन में विद्यमान यातना, घुटन, सन्त्रास, कुण्ठा, द्वन्द्व और निराशा को अपने काव्य का विषय बनाया है। इस कविता में ब्रह्म की सत्ता के स्थान पर मानव की सत्ता की स्थापना हुई है। अंधविश्वासों तथा रूढ़ियों का खण्डन है तथा वर्जनाओं को नकारा गया है। वर्तमान जीवन के कटु सत्य को ईमानदारी से व्यक्त किया गया है और परम्परागत मूल्यों की नवीन सन्दर्भों में जांच-परख की गई है। आधुनिक युग बोध के परिणामस्वरूप नई कविता में एक ओर तो जिजीविषा मुखरित हुई है, इन कवियों की यह धारणा रही है कि क्यों न हम उसी यथार्थ को अभिव्यक्ति दें, जिसे हम भोगते हैं, अनुभव करते हैं अर्थात् जिसे हम आत्मसात कर लेते हैं। व्यापक जीवन की बड़ी-बड़ी सैद्धान्तिक बातें और तिक्तता के बड़े-बड़े फलसफे कला के क्षेत्र में कोई महत्व नहीं रखते। दुःख जीवन का कटु सत्य है, किन्तु सत्य का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसे 'अज्ञेय' जी ने बड़े

▶ वर्तमान जीवन के कटु सत्य को ईमानदारी से व्यक्त किया गया है

सटीक शब्दों में व्यक्त किया है-

'दुःख सबको मांजता है
और
चाहे सबको मुक्ति देना वह न जाने किन्तु
जिसको मांजता है,
उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखें'

-अज्ञेय

युगबोध हमें दूसरों से जोड़ता है। सम्भवतः इसीलिए कवि अपने दर्द के माध्यम से सबके दर्द को समझ लेता है। आंखों में टीसती दर्द की अनुभूति उसके मन को सालने लगती है-

'वही परिचित दो आंखें ही
चिर माध्यम है, सब आंखों से सब दर्दों से
मेरे चिर परिचय का।'

-अज्ञेय

▶ लघु मानव की प्रतिष्ठा होती है

आधुनिक बोध के अन्तर्गत ही 'लघु मानव की प्रतिष्ठा' भी नई कविता में हुई है। लघु मानव का अर्थ है-वह सामान्य मनुष्य जो अपनी सारी संवेदना, भूख-प्यास और मानसिक आंच को लिए-दिए उपेक्षित है। उदाहरण के लिए भारत भूषण अग्रवाल की निम्नांकित पंक्तियाँ ली जा सकती है, जिनमें कवि ने उस लघु प्राण मानव को सर्वसमर्थ मानकर उसे कुछ नया कर दिखाने के लिए प्रेरित किया है:

'उठो,
सोच क्या, गई ज्योति का
तुम आस्था का दीप जलाओ
अन्धकार की हदें खींच दो
लौ का यह छोटा सा घेरा
नई किरण का बने पाँवड़ा'

- भारत भूषण

2.2.1.8 प्रणयानुभूति

▶ प्रेम का मूलाधार शरीर ही है

प्रयोगवादी कवि ने प्रणय भावना का निरूपण अकुण्ठ रूप में दिया है। प्रेम को वे यौनाकर्षण ही मानते हैं, जो शरीर के स्तर पर जन्म लेता है। प्रेम का मूलाधार शरीर ही है, भले ही उसकी उच्च भूमि मन तक पहूँचती हो, ऐसी उनकी धारणा है। अज्ञेय की अनेक कविताओं में हमें प्रेम का यही स्वरूप दिखाई देता है। कवि ने मांसल प्रणयानुभूति को व्यक्त करने में कहीं भी संकोच का अनुभव नहीं किया। प्रेम को परिभाषित करते हुए वे कहते हैं-

क्या है प्रेम? घनीभूत इच्छाओं की ज्वाला है।
क्या है विरह? प्रेम की बुझती राख भरा प्याला है' -

-अज्ञेय

नारी को पूर्णतः भोगने का आकांक्षी पुरुष यह कहने को बाध्य हो जाता -
कोषवत सिमटी रहे यह चाहती नारी।
खोल देने लूटने का पुरुष अधिकारी'

-अज्ञेय

'सावन मेघ' कविता में कवि ने प्रकृति के माध्यम से अपने हृदय की 'वासना' का उन्मुक्त चित्रण किया है। प्रकृति में काम भाव को देखकर कवि भी कामातुर होकर पुकार उठता है-

'आह, मेरा श्वास है उत्तप्त
धमनियों में उमड़ आई है लहू की धार
प्यार है अभिशप्त
तुम कहाँ हो नारि?'

-अज्ञेय

विशुद्ध प्रयोगवादी कवियों ने कहीं-कहीं प्रिया की छवि का अंकन छायावादी पद्धति पर भी किया है। उदाहरण के लिए गिरिजा कुमार माथुर की निम्न पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं-

'अब सूनी पलकों पर उतरा
वही तुम्हारा सस्मित आनन।
वे काली सलज्ज सी आँखें
भटकी भोली सी नत चितवन।'

- गिरिजा कुमार माथुर

नई कविता में उपलब्ध अश्लीलता पर टिप्पणी करते हुए डॉ. कुमार विमल ने लिखा है-

► प्रयोगवादी कवि ने प्रणय भावना का निरूपण अकुण्ठ रूप में दिया है

'आज की निर्मर्याद यौन परिकल्पनाओं ने एक कुत्सित भोगवाद और ऐन्द्रिक सुखवाद को जन्म दिया है, अतः कृत्रिम यौन उत्तेजना और कुत्सित कामोद्दीपन के द्वारा संस्कृति को अनिष्ट 'वल्गराइजेशन' की ओर ले जाने वाले कलाकार अथवा साहित्यकार कला और साहित्य को 'कॉमर्सियल पोर्नोग्राफी' (व्यावसायिक नग्नता) के स्तर पर उतारने जा रहे है।'

2.2.1.9 लोक संस्कृति

► नया कवि लोक से जुड़ा हुआ है

नया कवि लोक से जुड़ा हुआ है। लोक जीवन की अनुभूति, सौन्दर्य बोध, प्रकृति, बिम्ब और प्रतीक, शब्द और उपमान नई कविता में प्रचुरता से मिलते हैं। अज्ञेय ने प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करते हुए इस प्रवृत्ति का परिचय निम्न पंक्तियों में दिया है :

जागो सखि वसन्त आ गया।
पीपल की सूखी डाल स्निन्ध हो चली
सिरिस ने रेशम से बेनी बांध ली
नीम के भी बौर में मिठास देख
हँस उठी कचनार की कली'

- अज्ञेय

कहीं-कहीं लोक गीतों की धुनों पर भी नई कविता की रचना की गई है, यथा :

'कांगड़े की छोरियाँ
कुछ भोरियाँ सब गोरियाँ।
लाला जी जेवर बनवा दो,
खाली करो तिजोरियाँ'

▶ नई कविता ने शब्दों के प्रयोग की दृष्टि से 'लोक भाषा' के महत्व को पहचाना है

नई कविता ने शब्दों के प्रयोग की दृष्टि से 'लोक भाषा' के महत्व को पहचाना है। सीटी, ठिठुरन, मुँहझौसी, चिड़चिड़ी, ठसक, फुनगी जैसे शब्द इन कविताओं में उपलब्ध होते हैं जो भाषा के नएपन एवं ताजगी के परिचायक है।

2.2.1.10 शिल्प विधान

▶ परम्परागत काव्य से भिन्न शिल्प है

नई कविता का शिल्प भी परम्परागत काव्य से भिन्न है। नए उपमान, नए प्रतीक और नए बिम्बों के प्रति इन कवियों का विशेष मोह जान पड़ता है। पुराने प्रतीकों का जादू और उनकी अर्थवत्ता अब खो गई है, अतः अब नए उपमानों की आवश्यकता है-ऐसी घोषणा अज्ञेय जी ने 'कलगी बजरे की' नामक कविता में की है-

देवता अब इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।

- अज्ञेय

निरन्तर प्रयुक्त होते रहने से जैसे बर्तन की कलई उतर जाती है उसी प्रकार एक ही उपमान और शब्द का निरन्तर प्रयोग उसके जादू को समाप्त कर देता है। सम्भवतः इसी कारण नए कवियों ने कुछ ऐसे उपमान दिए हैं जो सर्वथा नवीन हैं। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

1. *इंजन के हेडलाइट का शोरगुल के बीच*

   सूरज निकल गया।

2. *गार्ड की रोशनी सा पीछे गुमसुम सा*

   शुक्र तारा जा रहा है।

3. *प्यार का बल्ब फ्यूज हो गया।*

4. *ऑपरेशन थियेटर सी जो हर काम*

करते हुए भी चुप है।

5. *प्यार काम लेते ही, बिजली के स्टोव सी*

   जो एकदम सुर्ख हो जाती है।

6. *तुम्हारा छलछलाता प्रखर निर्मल प्यार*

   छिछली नदी सा।

7. *उड़ता रहे चिड़िया सरीखा*

   यह तुम्हारा श्वेत आंचल

बिम्ब विधान की दृष्टि से नई कविता ने महती उपलब्धियाँ अर्जित की है। बिम्बों के द्वारा दृश्य को साकार करने में इन कवियों को पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। यथा :

1. *बूँद टपकी एक नभ से*

   किसी ने झुक कर झरोखे से

   कि जैसे हँस दिया हो।

   - भवानी प्रसाद मिश्र

2. *यह ज़िन्दगी जैसे बम्बई मेल की तीव्र रफ्तार हो।*

   - वचनदेव कुमार

3. *शरद चाँदनी बरसी*

   अंजुरी भरकर पीलो

   -अज्ञेय

प्रतीक योजना में भी इन कवियों ने नवीनता का परिचय दिया है। ऐतिहासिक, धार्मिक, पौराणिक प्रतीकों के साथ-साथ यौन प्रतीकों का प्रयोग भी किया गया है। यथा :

▶ प्रतीक योजना में भी नवीनता विद्यमान है

घिर गया नभ उमड़ आए मेघ काले
भूमि के कम्पित उरोजों पर झुका-सा
विशद श्वासाहत चिरातुर
छा गया इन्द्र का नील वक्ष।'

- अज्ञेय

नई कविता में मुक्त छन्द का प्रयोग किया गया है, जिससे कविता गद्यात्मक बन गई है। मुक्त छन्द होने पर भी उसमें भाव एवं लय का अभाव नहीं है। अज्ञेय की कुछ पंक्तियाँ इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं :

'उड़ गई चिड़िया
कांपी, फिर
थिर हो गई पत्ती।'

-अज्ञेय

संक्षेप में कहा जा सकता है कि नई कविता हिन्दी काव्य के विकास का एक महत्वपूर्ण सोपान है। इसकी उपलब्धियाँ महत्वपूर्ण हैं, किन्तु नई कविता के नाम पर ऊलजलूल शब्दों को एकत्र कर देना और उसे इतना दुरूह बना देना कि बात ही समझ में न आवे, किसी प्रकार श्लाघ्य नहीं है। अति बौद्धिकता, छन्दहीनता, अश्लीलता, मुक्त यौन चित्रण को नई कविता का दोष नहीं कहा जाएगा। काव्य रुचि का इतना विकृत हो जाना कि वह यौन वासनाओं के नग्न चित्रण, कुण्ठाओं की अभिव्यक्ति, निराशा एवं अश्लीलता की भौंड़ी एवं अस्वस्थ दृश्यावली तक सीमित रह जावे, किसी भी साहित्य की उपलब्धि नहीं कही जा सकती। कुल मिलाकर नई कविता हिन्दी काव्य के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान करती दिखाई पड़ रही है।

▶ नई कविता हिन्दी काव्य के विकास का एक महत्वपूर्ण सोपान है

2.2.2 प्रयोगवादिता के स्थान पर प्रयोगशीलता

जो समाज जितना अधिक प्रयोगशील होगा वो समाज उतना जल्दी ही विकसित होगा। प्रयोग एक क्रिया है तथा विकास का आधार है। परम्परा और प्रयोग के द्वंद से विकास के नए द्वार खुलते है साहित्य के क्षेत्र में भी हर युग में प्रयोग हुए है। समर्थ रचनाकार कुछ नया देने के लिए प्रयोग करता है। ऐसा केवल साहित्य या किसी एक कला विशेष के साथ नहीं हो रहा है, अब हर क्षेत्र में कुछ नया करने की लालसा कई प्रकार के प्रयोग करने केलिए हमारे मन मस्तिष्क को उद्वेलित करती है।

▶ प्रयोग एक क्रिया है तथा विकास का आधार है

आज आम और साधारण व्यक्ति थका हारा सा महसूस होता है। ऐसा लगता है उसकी सारी क्षमता खत्म हो गई है। सत्ता और पूँजीवादी व्यवस्था के आगे मनुष्य का व्यक्तित्व छोटा हो गया है। आज जीवन की परिभाषाएँ बदल रही है। मनुष्य के मस्तिष्क में बसी हुई पुरानी मान्यताएँ, धर्म एवं भगवान के प्रति नैतिक धारणाओं के पैमानों में बहुत गहरा और आमूल चुल परिवर्तन आया है। तीव्र गति से करवट ले रही राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों के कारण अब साहित्य, सिनेमा तथा रंगमंच में नए भाव बोध का अनुकरण हो रहा है तथा नए दृष्टिकोण एवं नए आयाम स्थापित करने की कोशिश हो रही है।

▶ आम और साधारण व्यक्ति थका हारा सा महसूस होता है

अनुभूति तथा अभिव्यक्ति के स्तर पर किये जाने वाले नए प्रयोगों की प्रक्रिया ही प्रयोगवादिता कहलाती है। नवसृजन का मुख्य आधार प्रयोगवादिता ही होती है। प्रयोगवादिता में नए प्रयोगों के नाम से प्रयोगों का सदुपयोग एवं दुरुपयोग दोनों हो सकते है।

▶ नए प्रयोगों के नाम से प्रयोगों का सदुपयोग एवं दुरुपयोग

2.2.3 नई कविता एवं अन्य काव्य आंदोलन

नई कविता के बाद हिन्दी साहित्य में अनेक काव्य आंदोलनों का आगमन हुआ। उनमें कुछ तो बहुत अल्पायु रहा। फिर भी इन सबका हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्थान है। इनमें कुछ प्रमुख आंदोलनों का परिचय नीचे दिया जा रहा है।

2.2.3.1 जनवादी कविता

जनवादी कविता का आधार देश की सामान्यजनता का जीवन प्रवाह है। यह कविता सर्वहारा वर्ग के जीवन को सर्वांगीण रूप मे प्रस्तुत करती है। इसका जनाधार अत्यन्त व्यापक होता है। जनवादी कविता ने जनता की ज़िंदगी से उभरती आशा-आकांक्षा, स्वप्न - संघर्षो को न केवल वाणी दी है बल्कि उसे संसार समर में विजयी होने के लिये नव चेतना और जागरूकता भी दी है। जनवादी कविता ने आम जनता के लिये श्रेष्ठ जीवनमूल्य, जीवन आदर्श और जीवन संघर्ष आदि मानदण्डों की स्थापना का इतिहास रचा है। स्वस्थ सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा करते हुए जनवादी कविता ने पूर्ववर्ती प्रगतिशील धारा को भी फिर से नई ऊर्जा, गति और स्फूर्ति प्रदान की है। सभी ओर से उपेक्षित, तिरस्कृत मनुष्य को साहित्य में प्रतिष्ठा देने का काम जनवादी कवियों और जनवादी कविताओं ने किया है। जनवादी कविता अनेक वैचारिक आंदोलनों से गुजरती हुई एक सामाजिक गतिविधि के रूप में सामने आती है। इस धारा के महत्वपूर्ण कवि नई कविता के दौर की उपज थे। इनमें नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिंह, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, केदारनाथ सिंह आदि ने कविता के गर्भ से उत्पन्न व्यक्तिवादी, कलावादी, भाववादी और अन्य सभी प्रवृत्तियों से अलग हटकर कविता को एक महत्त्वपूर्ण मोड़ दिया। इतना ही नहीं इन्होंने हिन्दी की प्रगतिशील कविता की चली आ रही जनवादी धारा को तेज़ किया। इनमें कई कवि तारसप्तक के कवि थे। इन कवियों ने जनवादी धारा को लेकर समाजोन्मुख कवितायें लिखीं। इस प्रकार जनवादी काव्यधारा को विकसित करने के लिये स्वातन्त्र्योत्तर कवियों ने प्रयास किया।

▶ तिरस्कृत मनुष्य को साहित्य में प्रतिष्ठा देने का काम है

जनवादी कविता अनेक विचारान्दोलनों से होती हुई एक सामाजिक गतिविधि के रूप में समाज के सामने आई। इन कवियों ने अपने आपसी मतभेद भुलाकर पूँजीवादी शोषण के विरुद्ध अपने विद्रोह को बुलंद किया। अनेक कलावादी रूझानों को नकारते हुए उन्होंने साहित्य को सामाजिक सरोकारों से जोड़ते हुए आम जनता के दु:ख दर्द का न केवल सच्चा चित्र उपस्थित किया बल्कि उस यथास्थिति को बदलने के लिये संघर्ष का आहवान भी किया।

▶ पूँजीवादी शोषण के विरुद्ध अपने विद्रोह को बुलंद किया गया है

शोषित जनता से जुड़ी जनवादी वाम कविता ने पुराने कवियों को भी आंदोलित किया है। उनमें भी जन के प्रति प्रेम पैदा हुआ है और उनमें से कई ने अपनी रचनाधर्मिता को जनवादी दिशा दी है। इस दिशा में कुछ ने लोकतांत्रिक आस्था को व्यक्त किया है तो कुछ ने शोषण मुक्ति की चाह भी। ऐसे कवियों में सर्वेश्वर, रघुवीर सहाय, अजीत कुमार, रामदरश मिश्र आदि की सत्तरोत्तरी कविताएँ इस दिशा की सूचक है। इनमें सर्वेश्वर

▶ अपनी रचनाधर्मिता को जनवादी दिशा दी है

की 'कुआनो नदी' और रघुवीर सहाय की 'हंसो हंसो और जल्दी हंसो' उल्लेखनीय है।

2.2.3.2 अकविता

नयी कविता के नव्यतम रूप को 'अकविता' नाम से प्रचारित किया गया 'अकविता' के प्रस्तावकों में अतुल विमल, गिरिजाकुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल के नाम उल्लेख्य हैं। सन् 1965 में श्याम परमार अपने कतिपय सहयोगियों के साथ 'अकविता' आन्दोलन के प्रवर्तक के रूप में उभरे। उनके अनुसार अकविता - 'अन्तर्विरोधों की अन्वेषक कविता' मानी गयी। 'अकविता' में वस्तुतः निषेधात्मक मूल्यों की प्रतिष्ठा हुई थी, जो सन् 1973 में प्रकाशित जगदीश चतुर्वेदी के नये काव्य-संकलन 'निषेध' से भी स्पष्ट हो जाता है। दिल्ली से प्रकाशित 'अकविता' नामक पत्रिका में 'अकविता' नाम से नवीन आन्दोलन छेड़ना चाहा था। यद्यपि 'अकविता' को 'नयी कविता' के पश्चात उभरे अनेक नामकरणों की अपेक्षा कुछ स्वीकृति मिली, किन्तु दृष्टिकोण की अस्थिरता, प्रदर्शनवादिता और बीटनिकों के प्रभाव को नकारने स्वीकारने की अन्तर्विरोधी एवं संशयग्रस्त मनःस्थिति के कारण उसका प्रभाव भी गहरा होने के पश्चात बिखर गया।

▶ निषेधात्मक मूल्यों की प्रतिष्ठा हुई है

'अकविता' में विषय-वस्तु के नाम पर अनास्था, विकृत यौनाचार, आत्महत्या, संत्रास, नैतिक मूल्यों का खण्डन, बलात्कार इत्यादि का उन्मुक्त एवं विद्रूप चित्रण प्रस्तुत किया गया। अन्ततः 'अकविता' के समर्थक ही इसके विरोध में बोलने लगे। डेढ़ वर्ष की ही अल्पावधि में इस आन्दोलन के प्रवर्तक श्याम परमार को कहना पड़ा- 'अकविता कोई आन्दोलन नहीं है।' डॉ0 जगदीश गुप्त को भी कहना पड़ा- 'अकविता' 'साइकिक शॉर्टहैण्ड' हो सकती है पर वह 'लिट्रेरी शॉर्टकट' नहीं हो सकती।'

▶ 'अकविता' के समर्थक ही इसके विरोध में बोलने लगे

2.2.3.3 बीट कविता

बीट कविता (Beat Poetry) द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका में उभरे एक साहित्यिक और सांस्कृतिक आंदोलन (Beat Generation) से जुड़ी हुई कविता है। यह आंदोलन पारंपरिक रूप से स्वीकृत साहित्यिक नियमों और सामाजिक मानदंडों के खिलाफ एक प्रतिक्रिया थी, जिसने व्यक्तिगत स्वतंत्रता, गैर-अनुरूपता और सहजता पर बल दिया।

▶ द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका में उभरे एक साहित्यिक और सांस्कृतिक आंदोलन (Beat Generation) से जुड़ी हुई कविता है

2.2.3.4 नवगीत

नवगीत के वास्तविक प्रवर्तक निराला थे, जो स्वच्छंदतावाद (छायावाद) के प्रवर्तकों में एक थे, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद के भी वास्तविक प्रवर्तक थे। किंतु पृथक् उपविधा-रूप में इसके विकास में भवानीप्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती, शंभुनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, उमाकान्त मालवीय, वीरेन्द्र मिश्र, रवीन्द्र भ्रमर, देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', माहेश्वर तिवारी, ओम प्रभाकर, स्वतंत्र चौहान, नंदकिशोर 'नंदन' इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं। राजेंद्रप्रसाद सिंह, शंभुनाथसिंह इत्यादि ने इस उपविधा पर अच्छा प्रकाश डाला है। डॉ.

▶ निषेधात्मक मूल्यों की प्रतिष्ठा हुई है

शंभुनाथ सिंह ने 'नवगीत दशक' (तीन खंड) प्रकाशित कर प्रतिनिधि नवगीतकारों को प्रस्तुत किया। राजेंद्रप्रसोद सिंह संपादित 'नवगीत-सप्तदशक' में विषय का निरूपण एवं रचना-वैभव उत्कृष्ट स्तर का है। इन ग्रंथों से उपविधा की अलग पहचान उजागर हुई है। नवगीत जगदीश चतुर्वेदी इत्यादि की अकविता एवं देवेंद्र सत्यार्थी इत्यादि की अकहानी के नकारात्मक नव्यता-रोग की उद्‌भूति न होकर गीत का स्वच्छंद विकास है जो गीतकारों की नवप्रयोगशीलता विवृत करता है। गीत एक भावयज्ञ है जिसके अनेक में एक रूप स्वाभाविक हैं। तीव्र तम अनुभूति जब गेय शोभा में अभिव्यक्त होती है तब उसे गीत कहते हैं। गीत का जन्म मानवता के साथ हुआ था। एकल अनुभूति, एकल प्रवाह, संक्षिप्तता, आत्माभिव्यक्ति प्रभृति गीत के अन्य गुण हैं। नवगीत इन-सबसे संपृक्त है।

2.2.3.5 नकेनवाद

▶ हिन्दी के तीन विशिष्ट कवि-चिन्तक – नलिन विलोचन शर्मा, केशरी कुमार, नरेश – के आद्यक्षर से बने शब्द 'नकेन' से इसका नामकरण हुआ है

नकेनवाद के सन्दर्भ में प्रयोगवाद पर चर्चा करते हुए 'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ' शीर्षक अपनी पुस्तक में नामवर सिंह ने लिखा कि 'प्रयोगवाद का एक दूसरा पहलू बिहार के नलिन विलोचन शर्मा, के शरी और नरेश के 'नकेनवादी' प्रपद्यों द्वारा आया जो अपनी समझ से अज्ञेय के और प्रयोगवाद का विरोध करते हुए भी वस्तुतः उसी की एक शाखा है।' हिन्दी के तीन विशिष्ट कवि-चिन्तक – नलिन विलोचन शर्मा, केशरी कुमार, नरेश – के आद्यक्षर से बने शब्द 'नकेन' से इसका नामकरण हुआ। हिन्दी साहित्य में इस काव्य-धारा को प्रयोगवाद की एक शाखा के रूप में प्रपद्यवाद नाम से भी जाना जाता है।हिन्दी काव्य-क्षेत्र में नकेनवाद की घोषण नलिन विलोचन शर्मा ने सन् 1956 में की।

▶ कविता में भावुकता के विरोधी और बौद्धिकता एवं वैज्ञानिकता के नएपन के पक्षधर थे

'नकेन के प्रपद्य' शीर्षक से सन् 1956 में प्रकाशित पहले प्रपद्यवादी संकलन में नलिन विलोचन शर्मा, केसरी कुमार और नरेश की कविताएँ संकलित हुईं। 'पद्य' में 'प्र' उपसर्ग लगाकर प्रपद्यवादियों ने 'प्रयोगवादी पद्य' को प्रपद्य माना। वे स्वयं को प्रयोगवादी और अज्ञेय (मण्डल) को प्रयोगशील कवि मानते थे। उनके अनुसार 'प्रयोग' प्रपद्यवादियों उनका साध्य था, जबकि अज्ञेय आदि के लिए साधन। प्रपद्यवाद तीन सुशिक्षित कवियों द्वारा संचालित एक संगठित काव्यान्दोलन था। इस उद्यम से वे हिन्दी कविता को विश्व कविता के बौद्धिक धरातल तक ले जाना चाहते थे। वे कविता में भावुकता के विरोधी और बौद्धिकता एवं वैज्ञानिकता के नएपन के पक्षधर थे। उल्लेखनीय है कि 'प्रपद्यवाद' या 'नकेनवाद' इन तीनों कवियों द्वारा स्वयमेव अपनाए गए नाम हैं, किसी आलोचक द्वारा दी हुई संज्ञा नहीं। 'नकेन के प्रपद्य' शीर्षक संकलन में 'प्रपद्य द्वादश सूत्री' शीर्षक से जारी उनकी घोषणाओं के अनुसार प्रपद्यवाद भाव और व्यंजना का स्थापत्य है, जो सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र है, सभी शास्त्रों या दलों के निर्धारक मूल्यों से निर्बन्ध है। पूर्ववर्तियों की परिपाटियों को निष्प्राण मानता है। न केवल दूसरों के, बल्कि अपने अनुकरण को भी वर्जित मानता है। स्वच्छन्द काव्य की स्थिति इसका अभीष्ट है। यह प्रयोग को, प्रयोगशीलों (अज्ञेय मण्डल के कवि) की तरह साधन नहीं, साध्य मानता है। अपने द्वारा प्रयुक्त प्रत्येक शब्द और छन्द का यह स्वयं निर्माता है।

इनके अनुसार रचना के भाव-बोध के समय भावकों का रचनाकार की भाव-सत्ता में

▶ कविता में भी रसानुभूति या साधारणीकरण के बजाय विशिष्टीकरण को महत्त्व दिया गया है

जाना अनिवार्य नहीं। वे भावकों के मन में साधारणीकरण की स्थिति को अनिवार्य नहीं मानते। ज्ञान के अन्य क्षेत्रों की तरह वे कविता में भी रसानुभूति या साधारणीकरण के बजाय विशिष्टीकरण को महत्त्व देते थे, जिसका आधार विज्ञान है। सम्भवतः इसीलिए नलिन विलोचन शर्मा ने कविता का उद्देश्य सत्य का सन्धान माना और 'वैज्ञानिक दृष्टि कोण' एवं 'विज्ञान-सम्मत दर्शन' को कवि कविकर्म की अनिवार्य योग्यता।

2.2.4 काव्य भाषा का जनवादी रूप

▶ काव्य भाषा का जनवादी रूप वह रूप है जो जनता के जीवन, उनके संघर्ष, उनकी आशाओं और आकांक्षाओं को अपनी सहज भाषा में व्यक्त करता है

काव्य भाषा का जनवादी रूप वह रूप है जो जनता के जीवन, उनके संघर्ष, उनकी आशाओं और आकांक्षाओं को अपनी सहज भाषा में व्यक्त करता है। यह कविता का एक ऐसा रूप है जो आम जनता से जुड़ाव रखता है और उनकी भावनाओं को स्वाभाविक ढंग से व्यक्त करता है।

काव्य भाषा का जनवादी रूप की विशेषताएँ:-

- **जनता से जुड़ावः** जनवादी काव्य, जनता के जीवन से गहरे रूप से जुड़ा होता है। यह उनकी रोज़मर्रा की ज़िंदगी, उनके सुख-दुःख, उनके संघर्ष और उनकी समस्याओं को कविता में शामिल करता है।
- **साधारण भाषाः** जनवादी काव्य में भाषा सरल और सहज होती है। यह आम जनता की भाषा में लिखा जाता है ताकि वे इसे आसानी से समझ सकें।
- **सामाजिक चेतनाः** यह काव्य सामाजिक अन्याय, शोषण और असमानता के खिलाफ आवाज़ उठाता है। यह लोगों में जागृति और परिवर्तन की भावना पैदा करने की कोशिश करता है।
- **सर्वहारा वर्ग का समर्थनः** जनवादी काव्य सर्वहारा वर्ग के जीवन को महत्व देता है। यह मज़दूरों, किसानों, दलितों और अन्य शोषित वर्गों की आवाज़ को बुलंद करता है।
- **आदर्शवादी और क्रान्तिकारीः** जनवादी काव्य में एक आदर्शवादी भावना होती है और यह क्रान्तिकारी परिवर्तन की ओर भी प्रेरित करता है।

▶ आदर्शवादी भावना, सर्वहारा वर्ग का समर्थन, साधारयम भाषा, जनता के जुड़ाव आदि इस काव्य की अन्य प्रवृत्तियाँ हैं।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने नई कविता की प्रवृत्तियों का विस्तार से अध्ययन किया है। इससे हम प्रयोगवाद और नई कविता के बीच के अंतर तथा समानताओं को स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं। नई कविता की कुछ प्रवृत्तियाँ प्रयोगवादी प्रवृत्तियों से मिलती-जुलती हैं, जबकि कई बिंदुओं पर यह उससे भिन्न भी है। इसके अतिरिक्त, इस अध्याय में हमने प्रयोगशीलता और प्रयोगवादिता के बीच के अंतर को भी विश्लेषित किया है।

हिन्दी काव्य के क्षेत्र में समय-समय पर उभरे विभिन्न काव्य आंदोलनों का भी गहन अध्ययन किया गया है। प्रत्येक काव्य आंदोलन की अपनी विशिष्ट विशेषताएँ रही हैं। अकविता आंदोलन, बीट कविता आंदोलन, नकेनवाद, नवगीत परंपरा आदि काव्य आंदोलनों एवं उनके प्रवर्तकों ने हिन्दी काव्य को समृद्ध और बहुआयामी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। पाश्चात्य शैलियों का अनुकरण, परंपरागत शैलियों का पुनरुद्धार और नवीन शैलियों का आविर्भाव इस युग की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इन सभी पहलुओं का समग्र विश्लेषण इस अध्याय में किया गया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. नई कविता की प्रवृत्तियों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
2. प्रयोगवादिता एवं प्रयोगशीलता में क्या अंतर हैं।
3. नई कविता के बाद उभरे काव्य आंदोलनों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. अकविता की विशेषताएँ क्या क्या है?
5. बीट कविता माने क्या है?
6. नकेनवादियाँ कौन कौन है? और उनकी मान्यताएँ क्या क्या हैं?
7. नवगीत परंपरा का परिचय दीजिए।
8. काव्य की जनवादी रूप से आपने क्या समझा?

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

SGOU

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

SGOU

इकाई 3

प्रमुख कवि - धर्मवीर भारती, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- नई कविता के प्रमुख कवियों के बारे में जानकारी हाजिल करता है
- नई कविता के प्रमुख कवियों की रचनाओं का परिचय प्राप्त करता है
- नई कविता के प्रमुख कवियों का जीवन परिचय प्राप्त होता है
- नई कविता की कवियों द्वारा हिन्दी साहित्य केलिए योगदान समझता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रमुखता से अध्ययन किया जानेवाला एक युग है नई कविता का युग। इसमें अनगिनत कवियों ने हिन्दी साहित्य के विकास हेतु योगदान दिया है। इस युग के कवियों द्वारा भी हिन्दी साहित्य पर्याप्त मात्र में विकसित हुआ है। इस युग के कवियों एवं उनकी रचनाओं का अध्ययन इस युग की साहित्य की समृद्धि एवं विकास का परिचय प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होगा।

इस युग के प्रमुख कवियों में - धर्मवीर भारती, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना आदि का नाम आदर से लिया जाता है। हिन्दी भाषा एवं साहित्य का अध्ययन करनेवाला छात्र इनसे ना गुजरकर हिन्दी साहित्य का अध्ययन पूरा नहीं कर सकता। इसलिए इनमें प्रत्येक का अध्ययन जरूरी है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

धर्मवीर भारती, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

Discussion / चर्चा

2.3.1 धर्मवीर भारती (25 दिसम्बर, 1926 ई. -1997 ई.)

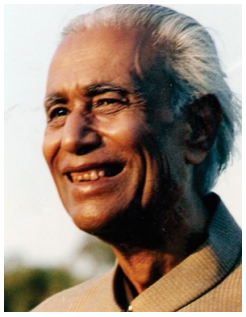

धर्मवीर भारती का जन्म प्रयाग (उ.प्र.) के अतरसुइया मुहल्ले के एक मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था। पिता चिरंजीवलाल वर्मा और माता श्रीमती चन्द्रा दोनों आर्यसमाजी थे। पिता की मृत्यु, जब कक्षा आठ में थे, तभी हो गयी पर शिक्षा क्रम भंग नहीं हुआ। प्रयाग विश्वविद्यालय से 1945 में बी.ए., 1947 में एम.ए. और फिर सिद्ध-साहित्य (प्रकाशित) पर डी. फिल. किया। 'अभ्युदय' 'संगम' और 'निकष' पत्रिकाओं के सम्पादन से जुड़े रहकर साहित्य और शोध के कार्य में निरन्तर लगे रहे। प्रयाग विश्वविद्यालय में 1960 ई. तक अध्यापन कार्य करते हुए ही उन्होंने प्रसिद्ध नाट्य कृति 'अंधायुग' लिखा। कविताएँ तो बी. ए. से ही लिख रहे थे। 1960 के बाद वे धर्मयुग के सम्पादक होकर बम्बई चले गये। धर्मयुग का वर्षों सम्पादन करने के बाद वे बम्बई में ही मृत्युपर्यंत रहे। कविता में लोकधुनों और लोकगीतों की लय का प्रयोग करते हुए भारती ने ठण्डा लोहा पीटने का निरन्तर विरोध किया। जहाँ एक ओर उन्होंने 'गुनाहों का देवता' जैसे किशोर मानसिकता को ध्यान में रखकर रोमान्टिक उपन्यास लिखा, वहीं दूसरी ओर लोककथाओं को आधार बनाकर 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' जैसा मानव मन की कुंठाओं को उद्घाटित करने वाला उपन्यास लिखा। 'अंधायुग' स्वतन्त्र भारत की मूल्यभ्रंशता का ही नहीं, विश्वयुद्धों से विकसित संत्रास और मूल्यहीनता का भी आख्यान, अंधता को प्रतीक बनाकर भारती ने अतीत का उद्घाटन किया है। 'कनुप्रिया' में नारी संवेदना को नये संदर्भ में कनु यानी राधा के बहाने प्रस्तुत किया गया है। 'ठेले पर हिमालय', 'ठण्डा लोहा', 'अंधायुग', 'कनुप्रिया', 'बंद गली का आखिरी मकान', 'सपना नहीं', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' आदि भारती की महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं। साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में उनका विशिष्ट स्थान है। 'सपना नहीं' पर उन्हें व्यास-सम्मान प्राप्त हुआ है।

▶ कविता में लोकधुनों और लोकगीतों की लय का प्रयोग देख सकते हैं

2.3.2 भवानीप्रसाद मिश्र (21 मार्च 1913 ई. - 20 फरवरी 1965 ई.)

रिगरिया, सिवानी होशंगाबाद में जन्में मिश्रजी ने 1930 ई. से लिखना शुरू किया। हाईस्कूल के पहले ही कई कविताएँ कलकत्ता से 'हिन्दू पंज' में प्रकाशित हुई। गाँधीवादी विचारक भवानीप्रसाद मिश्र ने गाँधी जी के विचारों के अनुसार शिक्षा देने के लिए एक स्कूल खोला और उसे चला ही रहे थे कि 1942 में जेल चले गये, फिर 1945 में छूटे जिसके कारण 'तारसप्तक' में कविताएँ नहीं छप पायीं। फिर 'दूसरा सप्तक'

में उनकी कविताएँ छप आई। कुछ दिन सिनेमा के लिए संवाद भी लिखे फिर बम्बई आकाशवाणी में प्रोड्यूसर हो गये। वहाँ से मुक्ति के बाद गाँधी वाङ्मय के सम्पादन में लगे रहे। मिश्र जी की ग्रंथावली डॉ. विजय बहादुर के सम्पादन में प्रकाशित हो गई हैं। उनका पहला काव्यसंग्रह 'गीत फरोश' 1953 में प्रकाशित हुआ और इससे उन्हें काफी प्रसिद्धि मिली। इसके बाद 'चकित हैं दुःख', 'बुनी हुई रस्सी' और 'खुशबू के शिलालेख' प्रकाशित हुए जिनकी काफी चर्चा रही। भवानी भाई की कविताओं की विशेषता इनकी सहजता में ही नहीं, बल्कि मनुष्य की नियति को सक्षात्कृत करके सहज ढंग से कह सकने में है। गाँधीवादी दृष्टि से अपने समय को परिभाषित करते हुए भवानी भाई आज के मनुष्य की स्थिति को ही परिभाषित करते हैं। यूरोपीय संस्कृति के प्रभाव और भारतीय सादगी के द्वन्द्व को जिस रूप में वे व्यक्त करते हैं वैसा उतने ही सादे ढंग से शायद ही कोई कर पाया हो।

▶ गाँधीवादी दृष्टि से अपने समय को परिभाषित किया है

2.3.3 नरेश मेहता (15 फरवरी 1922 ई. - 22 नवम्बर 2000 ई.)

श्री नरेश मेहता का जन्म मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र के शाजापुर कस्बे में एक निम्न मध्यमवर्गीय वैष्णव परिवार में हुआ। 21 वर्ष की अवस्था में माता की मृत्यु और पिता पं. बिहारीलाल शुक्ल की असंगता के कारण पालन-पोषण शिव-भक्त चाचा शंकरलाल जी शुक्ल मेहता ने किया। परिवारिक नाम पूर्णशंकर शुक्ल था जो नरसिंहगढ़ की राजमाता के द्वारा दिये गये नाम 'नरेश' के कारण नरेश मेहता हो गया। नरसिंहगढ़ से हाईस्कूल, उज्जैन से इंटरमीडिएट और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से नरेश जी ने बी. ए. और एम. ए. (हिन्दी साहित्य) किया। मालवा के अंचल का उन पर विशेष प्रभाव है। निर्मल वर्मा के साथ 'साहित्यकार' पत्रिका निकाली जो दूसरे अंक तक पहुँचते-पहुँचते बन्द हो गयी। 'कृति' जैसी महत्वपूर्ण पत्रिका का सम्पादन किया। 1959 में प्रयाग आ गये और तब से सपत्नीक यहीं रह रहे थे। उज्जैन में प्रेमचन्द पीठ में आचार्य रहे। इन्दौर से निकलने वाले 'चौथा संसार' दैनिक के सम्पादक रहे हैं। 'अरण्या' पर साहित्य अकादमी और समग्र रचनाओं पर ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं। 15 वर्षों तक मार्क्सवाद से प्रभावित थे और 'श्रमिक' पत्र का सम्पादन भी किया। वे मूलतः अपनी आनुवांशिक परम्परा के अनुसार आस्तिक वैष्णव हैं जो मनुष्य में अपरिमित विश्वास रखते हैं। नरेश जी जितने बड़े कवि हैं उतने ही बड़े उपन्यासकार भी हैं। 'बन पाखी सुनो', 'बोलने दो चीड़ को', 'मेरा समर्पित एकान्त', 'उत्सवा', 'संशय की एक रात', 'महाप्रस्थान', 'प्रवाद पर्व', 'अरण्या', 'तुम मेरा मौन हो', 'पिछले दिनों नंगे पैरो', 'आखिर समुद्र से तात्पर्य', आदि काव्य ग्रन्थ; 'डूबते मस्तूल', 'यह पथ बंधु था', 'धूमकेतु एक श्रुति', 'नदी यशस्वी है', 'दो एकान्त', 'प्रथम फाल्गुन', 'उत्तर कथा' उपन्यास तथा 'काव्य का वैष्णव व्यक्तित्व', 'शब्द पुरुष : अज्ञेय' और 'मुक्तिबोध : एक

▶ कविताओं में एक आध्यात्मिक चेतना है

अवधूत कविता' आलोचना और व्याख्यान, रचनाएँ हैं। नरेश मेहता की कविताओं में एक आध्यात्मिक चेतना मिलती है। प्रकृति में अव्यक्त चेतना का साक्षात्कार उनकी कविताओं में मिलता है। पूरी प्रकृति में एक मानवीय अर्थवत्ता की खोज उनके 'उत्सवा' और 'अरण्या' संग्रहों में है। इतिहास, मिथक, परिवार और रामाज, सब नरेश जी के अनुसार एक यज्ञ-कार्य में लगे हैं। प्रेम, उल्लास, राग की भी अनेक कविताएँ उन्होंने लिखी हैं। उनके खण्ड-काव्यों में न्याय और समता के शाश्वत प्रश्नों के उत्तर पाने की कोशिश है। छायावाद से भिन्न नरेश जी प्रकृति को मानवीकृत नहीं करते बल्कि मनुष्य को प्रकृतिकृत करते हैं, जिसके कारण मनुष्य में सर्वत्र प्रकृति का लीलाभाव दिखायी पड़ता है। भाषा में अभिजात्य उनका गुण है।

2.3.4 शमशेर बहादुर सिंह

- हिन्दी कविता की 'प्रगतिशील त्रयी' में शामिल है

शमशेर बहादुर सिंह आधुनिक हिन्दी कविता के प्रमुख कवियों में से एक हैं। उन्हें नागार्जुन और त्रिलोचन के साथ हिन्दी कविता की 'प्रगतिशील त्रयी' में शामिल किया जाता है। वह नई कविता के महत्त्वपूर्ण कवि हैं। नई कविता का आरंभ अज्ञेय के 'दूसरा सप्तक' से माना जाता है जहाँ शमशेर एक प्रमुख कवि के रूप में शामिल हैं।

शमशेर का जन्म 13 जनवरी 1911 को देहरादून में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा देहरादून में ही हुई, फिर वह उच्च शिक्षा के लिए गोंडा और इलाहाबाद विश्वविद्यालय गए। 18 वर्ष की आयु में उनका विवाह धर्मवती से हुआ। छह वर्षों के सहजीवन के बाद 1935 में उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई। अल्पायु में माता की मृत्यु और युवपन में पत्नी की मृत्यु से उनके जीवन में उत्पन्न हुआ यह अभाव सदैव उनके अंदर बना रहा।

- अनुभूतिपरक अभिव्यक्ति, जटिल विंब-विधान और प्रयोगधर्मिता है

नई कविता के कवियों में शमशेर अपनी अनुभूतिपरक अभिव्यक्ति, जटिल बिंब-विधान और प्रयोगधर्मिता के लिए विशिष्ट माने जाते हैं और इससे उनकी एक अलग पहचान बनती है। निराला को अपना काव्य-गुरु मानने वाले शमशेर ने प्रकृति और प्रयोग की प्रेरणा निराला से प्राप्त की। उन्होंने छायावादी, प्रगतिवादी और प्रयोगवादी सभी धाराओं की कविताएँ लिखी, पर अपनी अभिव्यक्ति और शिल्प की विशिष्टता के कारण वह किसी भी वाद में फँसते नज़र नहीं आते और इसलिए समकालीन काव्य आंदोलनों से प्रभावित होकर भी विलग बने रहते हैं।

- अनुभूति की सच्चाई पर बल देते हैं

शमशेर की संवेदनशीलता उन्हें एक बड़ा और विशिष्ट कवि बनाती है। प्रगतिवादी चेतना और प्रयोगवादी चेतना के परस्पर अंतर्विरोध उनकी कविताओं में घुल जाते हैं और एक आकर्षक सामंजन का सृजन करते हैं। उनकी रचनात्मकता का एक विशेष दृष्टिकोण यह है कि वह अनुभूति की सच्चाई पर बल देते हैं। यह सच्चाई ही उन्हें फिर यथार्थपरक अभिव्यक्ति और मानवीय भावनाओं का कवि बनाती है।

शमशेर की अनुभूतियाँ इतनी विविध और जटिल रही हैं कि वह किसी पारंपरिक ढाँचे में अभिव्यक्त नहीं हो सकती थीं। यही कारण है कि वह अपना स्वयं का शिल्प विकसित करते हैं। उनकी कविताओं का शिल्प अनूठा है जिसे उन्होंने किसी कुशल शिल्पकार की तरह प्रयोग किया है। इसके साथ ही कविता में वह शब्दों की मितव्ययिता पर बल देते हैं। कई कविताएँ महज संकेतों में ही अपना पाठ दे पाती है। इससे पाठक को पाठ की व्यापक छूट प्राप्त होती है और उनके 'अपने अपने शमशेर' तैयार होते हैं। भाषा को लेकर भी वह अत्यंत सजग रहे और इसकी अवहेलना के ख़तरे से आगाह किया। उन्होंने अपनी कविताओं में उर्दू के शब्दों का भी खुलकर इस्तेमाल किया और हिन्दी-उर्दू की दूरी पाटने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया।

▶ कविता में वह शब्दों की मितव्ययिता पर बल देते हैं

▶ चित्रकला और काव्यकला के बीच के सेतु के रूप में देख सकते हैं

हिन्दी में चित्र और संगीत पर कविताओं का विधिवत आरंभ शमशेर से ही माना जाता है। मुक्तिबोध ने कहा था कि शमशेर की मूल मनोवृत्ति एक इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार की है। उनकी कविताओं में रंग अपनी संपूर्ण आभा के साथ बिखरे नज़र आते हैं। उन्हें चित्रकला और काव्यकला के बीच के सेतु के रूप में देखा जाता है।

कुछ कविताएँ (1956), कुछ और कविताएँ (1961), चुका भी नहीं हूँ मैं (1975), इतने पास अपने (1980), उदिता-अभिव्यक्ति का संघर्ष (1980), बात बोलेगी (1981), काल तुझसे होड़ है मेरी (1988) उनके कविता-संग्रह हैं जबकि उनका एकमात्र कहानी-संग्रह 'प्लाट का मोर्चा' शीर्षक से संकलित है। 'दोआब' उनकी आलोचनात्मक कृति है। शमशेर का समग्र गद्य 'कुछ गद्य रचनाएँ' तथा 'कुछ और गद्य रचनाएँ' नामक पुस्तकों में संगृहीत हैं।

उन्हें 'चुका भी नहीं हूँ मैं' कविता-संग्रह के लिए वर्ष 1977 के साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

2.3.5 रघुवीर सहाय (9 दिसंबर 1929 - 30 दिसंबर 1990)

नई कविता के प्रखर स्वर रघुवीर सहाय का जन्म 9 दिसंबर 1929 को लखनऊ में हुआ। आरंभिक शिक्षा-दीक्षा के बाद परास्नातक अंग्रेज़ी साहित्य में लखनऊ विश्वविद्यालय से किया। आकाशवाणी, नवभारत टाइम्स, दिनमान, प्रतीक, कल्पना, वाक आदि पत्र-पत्रिकाओं के साथ पत्रकारिता, साहित्यिक पत्रकारिता और संपादन से संबद्ध रहे।

कविताओं में उनका प्रवेश 'दूसरा सप्तक' के साथ हुआ। वह समकालीन हिन्दी कविता के संवेदनशील 'नागर' चेहरा कहे जाते हैं। उनका सौंदर्यशास्त्र ख़बरों का सौंदर्यशास्त्र है। उनकी भाषा ख़बरों की भाषा है और उनकी अधिकांश कविताओं की विषयवस्तु ख़बरधर्मी है। ख़बरों की यह भाषा कविता में उतरकर भी निरावरण और टूक बनी रहती है। इसमें वक्तव्य है, विवरण है, संक्षेप-सार है। उसमें प्रतीकों और बिंबों

का उलझाव नहीं है। ख़बर में घटना और पाठक के बीच भाषा जितनी पारदर्शी होगी, ख़बर की संप्रेषणीयता उतनी ही बढ़ेगी। वह इसलिए कविता की एक पारदर्शी भाषा लेकर आते हैं। वह अपनी कविताओं की जड़ों को समकालीन यथार्थ में रखते हैं, जैसा उन्होंने 'दूसरा सप्तक' के अपने वक्तव्य में कहा था कि 'विचारवस्तु का कविता में ख़ून कि तरह दौड़ते रहना कविता को जीवन और शक्ति देता है, और यह तभी संभव है जब हमारी कविता की जड़ें यथार्थ में हों।' इस यथार्थ के विविध आयाम के अनुसरण में उनकी कविताएँ बहुआयामी बनती जाती हैं और इनकी प्रासंगिकता कभी कम नहीं होती। उन्होंने सड़क, चौराहा, दफ़्तर, अख़बार, संसद, बस, रेल और बाज़ार की बेलौस भाषा में कविताएँ लिखी। रोज़मर्रा की तमाम ख़बरें उनकी कविताओं में उतरकर सनसनीख़ेज़ रपटें नहीं रह जाती, आत्म-अन्वेषण का माध्यम बन जाती हैं।

कविताओं के अलावे उन्होंने कहानी, निबंध और अनुवाद विधा में महती योगदान किया है। उनकी पत्रकारिता पर अलग से बात करने का चलन बढ़ा है।

'दूसरा सप्तक' (1951), 'सीढ़ियों पर धूप में' (1960), 'आत्महत्या के विरुद्ध' (1967), 'हँसो, हँसो जल्दी हँसो' (1975), 'लोग भूल गए हैं' (1982) 'और कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ' (1989), 'एक समय था' (1994) उनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं। 'सीढ़ियों पर धूप में' (1960), 'रास्ता इधर से है'(1972) और जो 'आदमी हम बना रहे हैं' (1983) संग्रहों में उनकी कहानियाँ संकलित हैं। 'दिल्ली मेरा परदेस' (1976), 'लिखने का कारण' (1978), 'ऊबे हुए सुखी और वे और नहीं होंगे जो मारे जाएँगे; भँवर लहरें और तरंग' (1983) उनके निबंध-संग्रह हैं। 'रघुवीर सहाय रचनावली' (2000) के छह खंडों में उनकी सभी कृतियों को संकलित किया गया है। कविता-संग्रह 'लोग भूल गए हैं' के लिए उन्हें 1984 के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

▶ रघुवीर सहाय रचनावली (2000) के छह खंडों में उनकी सभी कृतियों को संकलित किया गया है

2.3.6 केदारनाथ सिंह (7 जुलाई 1934 - 19 मार्च 2018)

समकालीन कविता के सशक्त कवि केदारनाथ सिंह का जन्म 7 जुलाई 1934 को उत्तर प्रदेश के बलिया ज़िले के चकिया गाँव में हुआ था। उनकी आरंभिक शिक्षा गाँव में हुई, फिर उच्च शिक्षा के लिए बनारस में रहे। उन्होंने अपना शोध ग्रंथ 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब विधान' आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के मार्गदर्शन में पूरा किया। उन्हीं की प्रेरणा से उन्होंने बांग्ला सीखी और रवींद्रनाथ टैगोर के बांग्ला साहित्य को पढ़ने का प्रयास किया। वह तब ब्रिटिश कवि डाइलेन टामस, अमरीकी कवि वालेस स्टीवेंस और फ्रेंच कवि रेने शा के प्रशंसक भी रहे थे और उनकी कुछ कविताओं का अनुवाद किया था।

SGOU

केदारनाथ सिंह की कविता यात्रा का आरंभ एक गीतकार के रूप में हुआ। वह अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित 'तीसरा सप्तक' (1959) के सात कवियों में से एक थे। सप्तक में शामिल गीतों और कविताओं ने उन्हें साहित्यिक दुनिया से परिचित कराया। उनका पहला कविता संग्रह 'अभी, बिल्कुल अभी' 1960 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की कविताओं की नवीनता और तात्कालिकता ने तुरंत ही उन्हें एक अलग पहचान दिलाई।

उनका दूसरा कविता संग्रह 'ज़मीन पक रही है' बीस वर्षों के लंबे संयम और अंतराल के बाद 1980 में आया। इस संग्रह के साथ वह कविता समकाल के समादृत कवि के रूप में स्थापित हुए। वह बिंब-विधान और शिल्प-विधान के अपूर्व कवि कहे जाते हैं जिनके पास कविता की सरल भाषा और सरस संप्रेषण है। बिंबों की नवीनता, ठेठ देसी प्रतीकों का परिष्कृत प्रयोग, कथाओं-उपकथाओं का उपयोग, कविता में वार्तालाप और मुक्त छंद में भी एक गीतात्मक लय का प्रवाह उनकी विशिष्टता है। वह अपनी काव्य संवेदना में भारतीय नागर और पुरबिहा होने के साथ ही एक विश्व नागरिक होने की प्रतिभा दर्शाते हैं। बाद की पीढ़ियों पर उनकी कविताओं का एक संतुलित प्रभाव देखा जाता है।

▶ भारतीय नागर और पुरबिहा होने के साथ ही एक विश्व नागरिक होने की प्रतिभा है

केदारनाथ सिंह अध्यापन के पेशे से जुड़े रहे थे। कई महाविद्यालयों में अध्यापन के बाद वह 1976 में जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र से जुड़े जहाँ बतौर आचार्य और अध्यक्ष अपनी सेवा दी। उनकी कविताओं पर विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोध कार्य हुए हैं। उनकी कविताओं का अनुवाद सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं के साथ ही अँग्रेज़ी, जर्मन, रूसी, स्पेनिश आदि विदेशी भाषाओं में भी हुआ है।

▶ कई महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया है

'अभी बिल्कुल अभी' (1960), 'ज़मीन पक रही है' (1980), 'यहाँ से देखो' (1983), 'अकाल में सारस' (1988), 'उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ' (1995), 'बाघ' (1996), 'तालस्ताय और साइकिल' (2005) और 'सृष्टि पर पहरा' (2014) उनके काव्य-संग्रह हैं। उनकी चयनित कविताओं के कुछ अन्य संग्रह भी प्रकाशित हैं। 'कल्पना और छायावाद', 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब-विधान', 'मेरे समय के शब्द', 'क़ब्रिस्तान में पंचायत' के रूप में उन्होंने गद्य में योगदान किया है। इसके अतिरिक्त, ताना-बाना (आधुनिक भारतीय कविता से एक चयन), समकालीन रूसी कविताएँ, कविता दशक, साखी (अनियतकालिक पत्रिका), शब्द (अनियतकालिक पत्रिका) उनके संपादन में प्रकाशित हुआ है।

▶ 'अकाल में सारस' के लिए 1989 के साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला

उन्हें 'अकाल में सारस' के लिए 1989 के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्हें 2014 में प्रतिष्ठित ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

SGOU

2.3.7 कुँवर नारायण (19 सितंबर 1927 - 15 नवंबर 2017)

समकालीन कविता के समादृत कवि कुँवर नारायण का जन्म 19 सितंबर 1927 को उत्तर प्रदेश के फ़ैज़ाबाद जनपद के अयोध्या में एक संपन्न परिवार में हुआ। उनके परिवार के निकट संपर्क में रहे आचार्य नरेंद्र देव, आचार्य कृपलानी और राम मनोहर लोहिया जैसे व्यक्तियों के प्रभाव में वह गंभीर अध्ययन और स्वतंत्र चिंतन की ओर प्रेरित हुए। वर्ष 1951 में उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से अँग्रेज़ी साहित्य में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की और इसी दौरान लखनऊ लेखक संघ की गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी की। रघुवीर सहाय उनके सहपाठी थे। रघुवीर सहाय ने उन्हें अज्ञेय की कविता 'हरी घास पर क्षण भर' से परिचित कराया। अज्ञेय की कविताएँ पढ़कर वह हिन्दी में कवि कर्म की ओर अग्रसर हुए। 1955 में वह पोलैंड, चेकस्लोवाकिया, रूस, चीन आदि देशों की यात्रा पर गए और इस दौरान वॉर्सा में नाज़िम हिकमत, एंटन स्वानिम्स्की, पाब्लो नेरूदा आदि कवियों से मिलने का विशिष्ट अनुभव पाया। बाद में भी उन्होंने दुनिया के विभिन्न भागों की साहित्यिक यात्राएँ की और हिन्दी और विश्व साहित्य के बीच संपर्क सेतु के निर्माण में विशिष्ट भूमिका नि-ाभाई।

1956 में उनका पहला कविता-संग्रह 'चक्रव्यूह' प्रकाशित हुआ, जबकि 1959 में अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित 'तीसरा सप्तक' में शामिल किए गए।

▶ अंतरात्मा की पीड़ित विवेक-चेतना और जीवन की आलोचना का कवि - मुक्तिबोध

हिन्दी कविता में कुँवर नारायण की उपस्थिति एक विलक्षण प्रतिभा के कवि के रूप में रही है। उनका कविता-कर्म अन्य कवियों से अलग और विशिष्ट है। मुक्तिबोध ने अपने समीक्षा लेख में उन्हें 'अंतरात्मा की पीड़ित विवेक-चेतना और जीवन की आलोचना का कवि' कहा था। उनकी कविताओं में परंपरा, मानवीय आशा-निराशा और सुख-दुःख का प्रवेश किसी प्रसंग की तरह नहीं आधुनिक जीवन यथार्थ की तरह होता है।

▶ उनके व्यक्तित्व के गुण उनकी रचनात्मकता में भी प्रकट होते हैं

उनका व्यक्तित्व भी साहित्यिक बिरादरी में आकर्षण का केंद्र रहा है। एक बार उनसे पूछा गया कि कवि होते हुए वे मोटरकार बेचने जैसा अनुपयुक्त काम क्यों करते हैं तो उनका उत्तर था 'मोटर इसलिए बेचता हूँ कि कविता न बेचनी पड़े'। उनके व्यक्तित्व के गुण उनकी रचनात्मकता में भी प्रकट होते हैं। उनकी शाइस्तगी, सम्यकता, विनम्रता और धैर्य के कारण उन्हें 'मध्यममार्गी विचारधारा का कवि' भी कहा गया है, लेकिन यह मध्यममार्ग यथास्थितिवादी नहीं है।

कविता के साथ ही उनकी रूचि इतिहास, पुरातत्व, सिनेमा, कला, क्लासिकल साहित्य, आधुनिक चिंतन, समकालीन विश्व साहित्य, संस्कृति विमर्श आदि में भी रही। इस रूचि ने उनकी रचनात्मकता को विविधता और बहुलता दोनों सौंपी है।

उन्हें फ़िल्में और नाटक देखना पसंद रहा। उन्होंने कहा है कि फ़िल्मों का शिल्प उन्हें अत्यंत आकृष्ट करता है। वह फ़िल्मों को एक लंबी कविता की तरह देखते-पढ़ते

▶ भारतीय शास्त्रीय संगीत और नृत्य में गहरी रूचि रखी

और अर्थ देते हैं और उन्हें ऐसी फ़िल्में ज़्यादा पसंद आती हैं जिनकी संवेदना और बनावट में कविता की लय और सांकेतिकता हो। तारकोव्स्की उनके प्रिय फ़िल्मकार थे। भारतीय शास्त्रीय संगीत और नृत्य में भी उनकी गहरी रूचि रही। पंडित जसराज, उस्ताद अमीर खाँ साहब, संयुक्ता पाणिग्रही आदि की ऐसी कई प्रस्तुतियों पर उन्होंने अपने भावों को डायरी में दर्ज किया है। प्रसिद्ध फ़िल्म निर्देशक सत्यजित रे के साथ उनके गहरे आत्मीय संबंध रहे थे। वे उन कुछ हिन्दी लेखकों में से हैं जिन्होंने फ़िल्म समीक्षा पर कार्य किया है।

उन्होंने कवाफ़ी, बोर्खेस, मलार्मे, नेरूदा, गुंटर ग्रास, तादेउश रोज़विच, ज्बीग्न्यू हेर्बर्त आदि कई विदेशी भाषा कवियों के निबंधों और कविताओं का अनुवाद किया है। उनकी रचनाओं के अनुवाद विभिन्न भारतीय भाषाओं और अँग्रेज़ी, इतालवी, पोलिश, एस्टोनियन आदि विदेशी भाषाओं में हुए हैं।

▶ 2008 में ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ है

उन्हें वर्ष 1995 में साहित्य अकादेमी पुरस्कार और वर्ष 2008 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वर्ष 2009 में भारत सरकार ने उन्हें ' पद्मभूषण' से सम्मानित किया।

उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं

कविता-संग्रह : 'चक्रव्यूह' (1956), 'परिवेशः हम तुम' (1961), 'अपने सामने' (1979), 'कोई दूसरा नहीं' (1993), 'इन दिनों' (2002), 'हाशिए का गवाह' (2009), 'खंड-काव्य : आत्मजयी' (1965), 'वाजश्रवा के बहाने' (2008), कुमारजीव (2015), 'कहानी-संकलन : आकारों के आसपास' (1971)

समीक्षा और विचार : 'आज और आज से पहले' (1998), 'मेरे साक्षात्कार' (1999, 'संपादकः विनोद भारद्वाज)', 'साहित्य के कुछ अंतर-विषयक संदर्भ' (2003)

2.3.8 सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (15 सितम्बर 1927 ई. - 24 सितम्बर 1983 ई.)

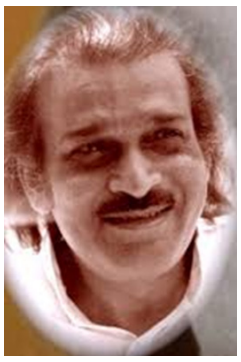

▶ नई कविता के प्रवर्तक कवि है

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जन्म उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले में हुआ था। शिक्षा-दीक्षा बस्ती, वाराणसी और इलाहाबाद में हुई। सक्सेना के साहित्यिक व्यक्तित्व का निर्माण इलाहाबाद के साहित्यिक परिवेश में हुआ था। 'परिमल' संस्था और उसके सहयोगियों के संपर्क में वे भी लोहिया और उनकी समाजवादी विचार-धारा से प्रभावित थे। 'तीसरा सत्तक' के कवि सर्वेश्वर नई कविता के प्रवर्तक कवि हैं। 'दिनमान' पत्रिका से उनका गहन संबन्ध था और उसमें 'चरचे और चरखे' उनका लोकप्रिय स्तंभ था। सर्वेश्वर की काव्य- कृतियाँ हैं- 'काठ की घंटियाँ' (1959), 'बाँस का पुल' (1963), 'एक सूनी नाव' (1966), 'गर्म हवाएँ' (1969), 'कुआनो नदी' (1973), 'जंगल का दर्द' (1976) और 'खूँटियों

पर टंगे लोग' (1982) 'कोई मेरे साथ चले' (1985) मरणोपरांत प्रकाशित काव्य-संग्रह है। 'सूने चौखटे, 'सोया हुआ जल', 'पागल कुत्तों का मसीहा' उनके चर्चित उपन्यास और कच्ची सड़क', 'अंधेरे पर अंधेरा', बदलता हुआ कोण' कहानी संग्रह। 'बकरी' सक्सेना का जनप्रिय नाटक है। नई कविता की विकास-यात्रा में सक्सेना की अमिट छाप है। उनकी कविताएँ समकालीन सामाजिक एवं राजनीतिक यथार्थ से ओतप्रोत हैं। उन्होंने नगर-जीवन के साथ ग्राम-जीवन को भी समेटा है। सर्वेश्वर ने अपनी कविताओं में स्वतंत्र भारत के वंचित-उपेक्षित साधारण जन की पीड़ा तथा संघर्ष को तल्खी के साथ उकेरा है। संप्रेषण की सहजता उनकी कविता का विशेष गुण है। साधारण बोलचाल की भाषा, सार्थक नवीन विम्ब-प्रयोग, हल्का-फुल्का व्यंग्य और विसंगति व विडम्बना का निसंग उद्घाटन उनकी शिल्पगत खूबियाँ हैं। वर्तमान कविता में जिन कवियों ने अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी है उनमें सक्सेना सर्वोपरि है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने नई कविता के प्रमुख कवियों का परिचय प्राप्त किया है। हिन्दी कविता के इतिहास में नई कविता का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि विभिन्न आचार्य इसके संबंध में भिन्न-भिन्न मत प्रकट करते हैं और कुछ इसे स्वतंत्र अस्तित्व के रूप में स्वीकार करने से भी इनकार करते हैं, फिर भी हिन्दी काव्य-जगत में नई कविता की विशिष्ट पहचान और महत्व निर्विवाद है।

इस अध्याय में नई कविता के प्रमुख कवियों - धर्मवीर भारती, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक कवि के जन्म और जीवन, काव्यगत विशेषताओं, साहित्यिक योगदान तथा प्राप्त पुरस्कारों आदि पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. धर्मवीर भारती का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. भवानीप्रसाद मिश्र का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
3. नरेश मेहता का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. शमशेर बहादुर सिंह का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
5. रघुवीर सहाय का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
6. केदारनाथ सिंह का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
7. कुँवर नारायण का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
8. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

धर्मवीर भारती - टूटा पहिया
केदारनाथ सिंह - अकाल में दूब
सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - पोस्टर और आदमी
शमशेर बहादुर सिंह - काल, तुझसे होड़ है मेरी
रघुवीर सहाय - कोई और एक मतदाता
नरेश मेहता - घर की ओर

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- धर्मवीर भारती की 'टूटा पहिया' कविता का परिचय प्राप्त करता है
- केदारनाथ सिंह की 'अकाल में दूब' कविता का परिचय प्राप्त करता है
- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की 'पोस्टर और आदमी' कविता का परिचय प्राप्त करता है
- शमशेर बहादुर सिंह की 'काल, तुझे होड़ है मेरी' कविता का परिचय प्राप्त करता है
- रघुवीर सहाय की 'कोई और एक मतदाता' कविता का परिचय प्राप्त करता है
- नरेश मेहता की 'घर की ओर' कविता का परिचय प्राप्त करता है

Background / पृष्ठभूमि

पिछले अध्याय में हमने नई कविता के प्रमुख कवियों का परिचय प्राप्त किया है। इस अध्याय में हम नई कविता के कुछ प्रमुख कविताओं का अध्ययन करेंगे। नई कविता की विशेषताओं का भी अध्ययन हम कर चुके हैं। इस अध्याय के कविताओं में से गुजरते वक्त हम उन विशेषताओं को करीब से देख और जान पाएँगे। धर्मवीर भारती द्वारा रचित 'टूटा पहिया', केदारनाथ सिंह द्वारा रचित 'अकाल में दूब', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना द्वारा रचित 'पोस्टर और आदमी', शमशेर बहादुर सिंह द्वारा रचित 'काल, तुझसे होड़ है मेरी' रघुवीर सहाय द्वारा रचित 'कोई और एक मतदाता' और नरेश मेहता द्वारा रचित 'घर की ओर' कविताओं का अध्ययन इस अध्याय में किया जाएगा।

इन कविताओं में नई कविताओं की विशेषताओं का झलक मिलता है और प्रत्येक कविता पाठक को सोचने पर मजबूर करता है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

टूटा पहिया, अकाल में दूब, पोस्टर और आदमी, काल, तुझसे होड़ है मेरी, कोई और एक मतदाता, घर की ओर

Discussion / चर्चा

2.4.1 टूटा पहिया - धर्मवीर भारती

- पौराणिक कथा महाभारत के प्रसंग के आधार पर लिखी गई

धर्मवीर भारती जी की कविता टूटा पहिया पौराणिक कथा महाभारत के प्रसंग के आधार पर लिखी गई है। टूटी हुई चीज का अक्सर कोई मूल्य नहीं होता है। चाहे वस्तु हो या मानव टूटा हुआ हो तो उपेक्षित हो जाता है, हम फेंक देते हैं। और उस पर भी अगर रथ का पहिया हो वो टूट गया हो तो क्या प्रयोजन। लेकिन महाभारत युद्ध में वीर अभिमन्यु ने इसी टूटे हुए रथ के पहिए की सहायता से युद्ध जारी रखा। महाभारत के इसी प्रसंग को लेकर धर्मवीर भारती जी ने यह कविता लिखी है - 'टूटा पहिया'।

▶ **टूटा पहिया**

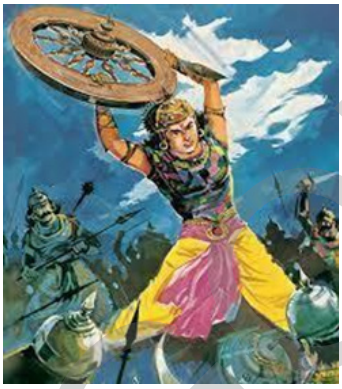

मैं
रथ का टूटा हुआ पहिया हूँ
लेकिन मुझे फेंको मत !
क्या जाने कब
इस दुरूह चक्रव्यूह में
अक्षौहिणी सेनाओं को चुनौती देता हुआ
कोई दुस्साहसी अभिमन्यु आकर घिर जाय !

इस कविता में कवि कहता है कि मैं रथ का टूटा हुआ पहिया हूँ, लेकिन मुझे फेंको मत। देखिए यह टूटा हुआ पहिया जो किसी काम का नहीं है वह हमसे कह रहा है मैं रथ का टूटा हुआ पहिया हूँ लेकिन मुझे फेंको मत। क्योंकि हम नहीं जानते हैं कि यह जो दुरूह चक्रव्यूह में अक्षौहिणी सेनाओं को चुनौती देता हुआ कोई दुस्साहसी अभिमन्यु कब आकर घिर जाय। यहाँ यह जो चक्रव्यूह एवं अक्षौहिणी सेना आदि बातें महाभारत से ली गई है।

कविता के माध्यम से कवि यह संदेश दे रहे हैं कि किसी वस्तु के टूट जाने पर उसे एकाएक व्यर्थ और अनुपयोगी नहीं समझ लेना चाहिए। गाढ़े समय में (विपत्ति काल में) जैसे खोटा सिक्का काम आ जाता है, कदाचित वह टूटी वस्तु उस समय साबुत चीजों से अधिक उपयोगी सिद्ध हो जाये।

SGOU

युद्ध को जीतने केलिए पक्ष या विपक्ष अपने हिज़ाब से व्यूह रचना करते हैं। मतलब किस तरह सेना को रखा जाना चाहिए, कहाँ कहाँ पर सैनिकों, हाथी - घोड़ों को खड़ा करना चाहिए। चक्रव्यूह को ऊपर से देखने पर एक चक्र के समान लगता है। इसे पद्मव्यूह भी कहा जाता है क्योंकि ऊपर से देखने पर यह पद्म के समान भी लगता है। यह बहुत जटिल व्यूह होता है। इसका सात परत होता है। और यह परतें घूमता रहता है। इसमें प्रवेश करने की एक जगह होती है और कोई एक बार इसमें घुस जाए तो बाहर निकलना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन हो जाता है। इस चक्रव्यूह के बारे में धर्मवीर भारती जी यहाँ कह रहा है।

▶ चक्रव्यूह

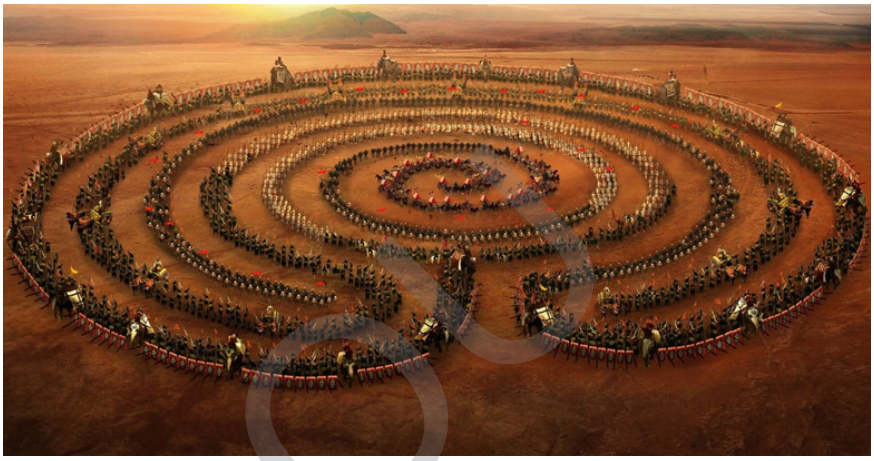

चक्रव्यूह

दूसरी बात जो हमें इन पंक्तियों से समझना है, वह है अक्षौहिणी सेना। इसमें यह तय किया जाता है की युद्ध में कितने हाथी, कितने घोड़े, कितने सैनिक, कितने रथ होने चाहिए और उन्हें किस प्रकार विन्यसित किया जाना चाहिए ताकि कोई एक बार इस व्यूह के अंदर घुस जाए तो कभी निकल ही ना पाए।

▶ अक्षौहिणी सेना

यहाँ चक्रव्यूह और अक्षौहिणी सेना प्रतीक है। यह प्रतीक है सत्ताधारी वर्ग का। आजकल समाज में अनेक प्रकार के सत्ताधारी वर्ग है। जिसप्रकार चक्रव्यूह में हाथी, घोडा, रथ एवं सैनिक है उसी प्रकार समाज में शक्तिशाली सत्ता वर्ग है। और यह लघुमानव को तोड़ने केलिए बेचैन है। लघुमानव सत्य केलिए खड़ा रहता है और उसे तोड़ने केलिए, उसे विवश करने केलिए सत्ताधारी वर्ग तत्पर रहता है। और इस हेतु चक्रव्यूह रचे जाते हैं। समाज में जब आम आदमी अपनी अधिकारों केलिए निकल पड़ता है तो उसे इन शक्तिशाली वर्गों का सामना करना पड़ता है। इन शक्तिशाली सत्ताधारी वर्गों को समझने केलिए भारती जी ने महाभारत से इन प्रतीकों को स्वीकार किया है।

▶ इन शक्तिशाली सत्ताधारी वर्गों को समझने केलिए भारती जी ने महाभारत से इन प्रतीकों को स्वीकार किया है

आगे कवि टूटा पहिया को प्रतीक के रूप में हमारे सामने पेश करता है। जब लघु मानव इस चक्रव्यूह में फंस जाता है तो यह टूटा हुआ पहिया उसका मददगार साबित हो सकता है। टूट पहिया प्रतीक है - व्यर्थ समझे जानेवाली वस्तुओं का, समाज के

▶ लघु मानव के बारे में बताते हैं

उपेक्षित और हीन समझे जानेवाले वर्ग का और उन पारंपरिक मूल्यों का जिन्हें हम अति-आधुनिकता के कारण निरर्थक और सारहीन समझते हैं। इन सब का हमें ज़रूरत पड़ सकता है। जब हम चक्रव्यूह में पड़ जाता है तो यही तुच्छ एवं हीन समझे जानेवाले चीज़ ही हमारा काम आ सकता है।

▶ इस कविता के माध्यम से कवि ने किसी भी वस्तु को अनुपयोगी न समझने का एक सार्थक संदेश देने के साथ-साथ सत्य,असत्य और व्यवस्था पर भी सांकेतिक रूप से प्रहार किया है

टूटा पहिया हमसे कह रहा है कि मुझे फेंको मत। यह इसलिए कह रहा है कि ना जाने कब इस दुरूह चक्रव्यूह में कोई दुस्साहसी अभिमन्यु आकर घिर जाए। यहाँ अभिमन्यु को साहसी नहीं बल्कि दुस्साहसी कहा गया है। क्योंकि साहसी अपने धैर्य के मुताबिक आगे चलता है। और दुस्साहसी वह होता है जिसे पता होता है कि शायद पराजित हो सकता है, यहाँ तक कि हारना तय होता है, मौत सामने खड़ा हुआ पाता है और फिर भी आगे बढ़ता है। यहाँ अभिमन्यु भी दुस्साहसी होता है। इसी प्रकार लघु मानव भी दुस्साहसी होकर, अक्षौहिणी सेनाओं को चुनौती देता हुआ निकल पड़ता है। तब टूटा पहिया उपयोगी सिद्ध हो सकता है, इसलिए उसे फेंकना नहीं चाहिए।

अपने पक्ष को असत्य जानते हुए भी
बड़े-बड़े महारथी
अकेली निहत्थी आवाज़ को
अपने ब्रह्मास्त्रों से कुचल देना चाहें
तब मैं
रथ का टूटा हुआ पहिया
उसके हाथों में
ब्रह्मास्त्रों से लोहा ले सकता हूँ !

कवि आगे कहता है कि बड़े बड़े महारथी जो जानते हैं की अपना पक्ष गलत है, जैसे द्रोणाचार्य आदि जानते हैं कि अपना पक्ष गलत है असत्य है, फिर भी वह अपने ब्रह्मास्त्रों से अकेली निहत्थी आवाज़ को कुचल देना चाहता है। इसी प्रकार आज के सत्ताधारी वर्ग अपनी शक्ति रूपी ब्रह्मास्त्रों से लघु मानव की अकेली निहत्थी आवाज़ को दबोच लेना चाहता है। और टूटा हुआ पहिया कहता है कि तब में उस लघु मानव के हाथों में ब्रह्मास्त्रों से लोहा लेने केलिए, ब्रह्मास्त्रों का सामना करने केलिए सक्षम साबित हो सकता है। आप मुझे नगण्य और हीन समझते हैं, लेकिन मैं कभी निहत्थी आवाज़ का सहारा बन सकता है। जिस प्रकार अभिमन्यु का सहारा बना था, उसी प्रकार लघु मानव का भी सहारा बन सकता है। यहाँ कवि यह संदेश देता है की किसी भी व्यक्ति, वस्तु, या फिर मूल्यहीन समझा जानेवाले किसी भी वस्तु को उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि कभी ना कभी वह किसी ना किसी का काम आ ही जाता है।

▶ लघु मानव की अकेली निहत्थी आवाज़ के बारे में बताते हैं

मैं रथ का टूटा पहिया हूँ
लेकिन मुझे फेंको मत
इतिहासों की सामूहिक गति
सहसा झूठी पड़ जाने पर
क्या जाने
सच्चाई टूटे हुए पहियों का आश्रय ले !

आगे कवि कहता है कि यह जो इतिहास की गति है, वह झूठा पड़ जाता है। अर्थात सच्चाई छूट जाती है तब सच्चाई को टूटे हुए वस्तुओं का आश्रय लेना पड़ता है। जैसे अभिमन्यु ने लिया था। यह जो समाज है इसमें बहुत तरह है चक्रव्यूह होते हैं और उसमें से निकलने केलिए लघु मानव को मुझ जैसी टूटे हुए पहियों की जरूरत पड़ सकती है इसलिए टूटा हुआ पहिया कहता है कि, हाँ में टूटा हुआ हूँ, हाँ में अपंग हूँ, में एक दम व्यर्थ हूँ, फिर भी मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ कि, हमारा पौराणिक कथा महाभारत में भी कहा गया है कि टूटा हुआ पहिया भी काम का था। इसलिए मुझे फेंको मत।

▶ सच्चाई को टूटे हुए वस्तुओं का आश्रय लेना पड़ता है

2.4.2 अकाल में दूब - केदारनाथ सिंह

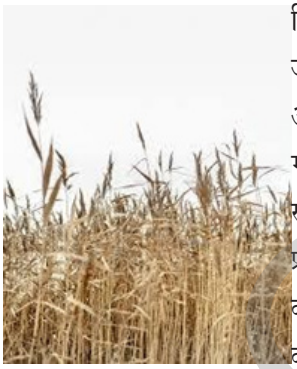

▶ अकाल का चित्र खींचते हुए कवि समाज को आगाह कर रहा है

हिन्दी साहित्य के प्रमुख समकालीन कवि, प्रकृति और जीवन के उल्लास की कवि केदारनाथ जी द्वारा विरचित अत्यंत चर्चित कविता है अकाल में दूब। इसमें जीवन पर गहरा आस्था प्रकट किया गया है। जीवन और पर्यावरण समकालीन समय में कई चुनौतियों का सामना कर रहा है। प्रकृति पर मानव हमेश अतिक्रमण करत आया है। इसके कारण अकाल या रहा है। अकाल का चित्र खींचते हुए कवि समाज को आगाह कर रहा है। प्रकृति से दूर होकर जो विकास हम कर रहा है वह स्थायी नहीं होंगे।

भयानक सूखा है
पक्षी छोड़कर चले गए हैं
पेड़ों को
बिलों को छोड़कर चले गए हैं चींटे
चींटियाँ
देहरी और चौखट
पता नहीं कहाँ-किधर चले गए हैं
घरों को छोड़कर
भयानक सूखा है
मवेशी खड़े हैं
एक-दूसरे का मुँह ताकते हुए

▶ भयानक सूखे की ओर इशारा देती है

कविता के शुरुआत में कवि भयानक सूखे की ओर इशारा करता है। कवि कहता है कि भयानक सूखा के कारण सारे पक्षी अपने अपने घोंसले छोड़कर चले गए हैं। पेड़ों को छोड़कर चले गए हैं। पेड़ों में सूखा के कारण कोई भी हरी पत्ती नहीं बचा है, तभी तो चिड़ियाँ सब चले गए हैं। चींटियाँ भी अपने बिलों को छोड़कर चला गया है। सूखा इतना भीषण है कि घरों को छोड़कर देहलीज़ एवं चौखट भी चला गया है और

कवि कहता है कि पता नहीं वह कहाँ, किधर चला गया है। इतना भयानक सूखा होने के कारण मवेशियाँ भी एक दूसरे का मूँह ताकता हुआ खड़ा रह जाता है।

कहते हैं पिता
ऐसा अकाल कभी नहीं देखा
ऐसा अकाल कि बस्ती में
दूब तक झुलस जाए
सुना नहीं कभी
दूब मगर मरती नहीं -
कहते हैं वे
और हो जाते हैं चुप

इन पंक्तियों में कवि की पिताजी का जिक्र हुआ है। अब तक की अवस्था से पता चलता है कि कोई भी उम्मीद नहीं बचा है। पिताजी कहते हैं कि ऐसा भीषण अकाल उन्होंने अपनी पूरी ज़िंदगी में कभी नहीं देखा है। बस्ती में से दूब तब झुलस जाना, ऐसी अकाल तो कभी नहीं आया। चाहे जितना भी भीषण गर्मी हो जाए, दूब तो बचा रहता है। और दूब उनकेलिए प्रतीक्षा का किरण है। और इस बार तो अकाल इतना भीषण है कि कहीं दूब ही नहीं दिख रहा। फिर भी प्रतीक्षा के साथ वह कहता है की दूब मगर मरती नहीं है। अर्थात उन्हें अभी भी उम्मीद है कि दूब कहीं ना कहीं तो होगा। और यह कहकर वह चुप हो जाता है।

▶ दूब मरती नहीं है

निकलता हूँ मैं
दूब की तलाश में
खोजता हूँ परती-पराठ
झाँकता हूँ कुँओं में
छान डालता हूँ गली-चौराहे
मिलती नहीं दूब
मुझे मिलते हैं मुँह बाए घड़े
बाल्टियाँ लोटे परात
झाँकता हूँ घड़ों में
लोगों की आँखों की कटोरियों में
झाँकता हूँ मैं
मिलती नहीं
मिलती नहीं दूब

▶ दूब प्रतीक्षा, उम्मीद का प्रतीक है इसलिए दूब को लोगों के आँखों रूपी कटोरियों में झाँकने का मतलब हुआ लोगों के आँखों में प्रतीक्षा का किरण ढूँढना

पिताजी की बातें सुनकर कवि दूब की तलाश में निकल पड़ता है। वह हर जगह दूब को खोजता है, गहरे कुओं में झाँकता है, सारे के सारे गली - चौराहों को छान डालता है पर कहीं भी दूब नहीं मिलता है। दूब की खोज में निकले कवि को मिलता है तो बस औंधे रखे घड़े - बाल्टियाँ। उसके अंदर भी कवि झाँकता है इस उम्मीद में की कहीं

दूब मिल जाए तो। कवि लोगों की आँखों रूपी कटोरियों में भी झाँकता है मगर दूब नहीं मिलती। दूब प्रतीक्षा, उम्मीद का प्रतीक है इसलिए धुब को लोगों के आँखों रूपी कटोरियों में झाँकने का मतलब हुआ लोगों के आँखों में प्रतीक्षा का किरण ढूँढना। मगर वहाँ भी कोई उम्मीद नहीं बचता। भीषण सूखा ने सब कुछ नाश कर चुका है।

अंत में
सारी बस्ती छानकर
लौटता हूँ निराश
लाँघता हूँ कुएँ के पास की
सूखी नाली
कि अचानक मुझे दिख जाती है
शीशे के बिखरे हुए टुकड़ों के बीच
एक हरी पत्ती
दूब है
हाँ-हाँ दूब है -
पहचानता हूँ मैं
इतने
कुछ है

▶ दूब फिर से उम्मीद जागता है

अंत में कवि निराश हो जाता है और निराश होकर घर लौटता है। लौटते वक्त जब कुएँ के पास की सूखी नाली को पार करते समय अचानक कवि को शीशों के बिखरे टुकड़ों के बीच एक हरी पत्ती दिख जाती है। और कवि पहचान जाता है कि वही दूब है। और कवि खुश हो जाता है। दूब देखकर कवि के मन में फिर से उम्मीद जागता है।

लौटकर यह खबर
देता हूँ पिता को
अँधेरे में भी
दमक उठता है उनका चेहरा
'है - अभी बहुत बची है दूब ...'
बुदबुदाते हैं वे
फिर गहरे विचार में
खो जाते हैं पिता

▶ अगर दूब बचा है तो अभी बहुत कुछ बचा है

घर लौटकर कवि पिताजी को दूब मिलने की खबर देता है। यह खबर मिलने पर अंधेरे में भी पिताजी का चेहरा दमक उठता है। और वह बुदबुदाते हैं कि अगर दूब बचा है तो अभी बहुत कुछ बचा है। इतना कहकर वह फिर गहरी विचार में खो जाते हैं।

यहाँ दूब को प्रतीक्षा के किरण के रूप में दिखाया गया है। बस एक छोटी सी हरी पत्ती - दूब - के होने से जीवन की नई प्रतीक्षा उभरता है।

SGOU

2.4.3 पोस्टर और आदमी - सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

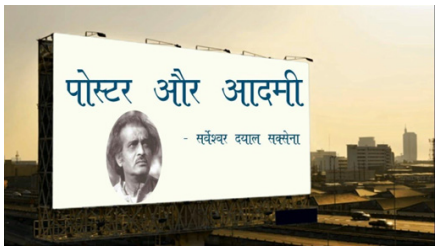

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जी की इस कविता में वह दो चीजों को आमने सामने लाती है। एक तरफ एक निर्जीव वस्तु है, पोस्टर है और एक तरफ जीता जागता मानव। दोनों की वह तुलना करते हैं और इस नतीजे पर पहूँचती है कि पोस्टर ही महान है। पोस्टर विज्ञापन का एक माध्यम है और यह ग्राहकों को अपनी ओर खींचता है। ग्राहकों पर आँख गड़ाए बैठने वाले व्यापारी इन पोस्टरों द्वारा अपने व्यापार को विस्तृत करते जाते हैं और अपना माल जनता के गले उतारता और भरपूर धन कमाता जाता है। और जो इन विज्ञापनों पर पड़कर अपने सारे पैसे खर्च कर बैठते हैं उनकी ज़िंदगी साधारण ही रह जाता है।

▶ इस कविता में वह दो चीजों को आमने सामने लाती है

▶ राजनीतिक नेताओं ने भी अपने हस्ते मुसकुराते चेहरों और अपने चिह्न को लगाकर बड़े बड़े पोस्टर चौराहों पर लगाते हैं

इस कविता का हम एक और अर्थ निकाल सकता है वह है राजनीतिक अर्थ। राजनीतिक नेताओं ने भी अपने हस्ते मुसकुराते चेहरों और अपने चिह्न को लगाकर बड़े बड़े पोस्टर चौराहों पर लगाते हैं। लोग यह देखकर और उनका लुभावने बातों में आकार उन्हें वोट दे देते हैं और फिर वही ज़िंदगी और उससे बदतर ज़िंदगी जीते हैं।

पोस्टर पर छपा आदमी,
कितना खुश लग रहा है,
उसकी आँखों में चमक है,
उसके चेहरे पर मुस्कान है।
और यह आदमी,
जो उसे देख रहा है,
उसके चेहरे पर उदासी है,
उसकी आँखों में आँसू हैं।
क्या वह कभी,
उस आदमी की तरह,
खुश हो पाएगा?
क्या वह कभी,
उस आदमी की तरह,
सफल हो पाएगा?

यह कविता आकार में बहुत छोटी है लेकिन इसका अर्थ बहुत ही बड़ा है। इस कविता में कवि पोस्टर में छपा आदमी और पोस्टर में छपा आदमी को देखने वाले आदमी की तुलना करते हैं।

कवि कहता है कि जो आदमी पोस्टर पर छपा हुआ है, कितना खुश लग रहा है।

SGOU

▶ पोस्टर में छपा आदमी को देखने वाले आदमी पर विचार किया गया है

उसके आँखों में चमक है और चेहरे पर मुस्कुराहट है। अर्थात उसकी ज़िंदगी समृद्धि एवं सुविधाओं में होगा। लेकिन जो आदमी यह पोस्टर देख रहा है उसके चेहरे पर उदासी और उसकी आँखों में आँसू है अर्थात उसका जीवन अभावग्रस्त एवं असुविधाजनक होगा। कवि पूछता है कि क्या यह उदास आदमी कभी उस पोस्टर में छपा आदमी की तरह खुश हो पाएगा, उस आदमी की तरह सफल हो पाएगा।

▶ खुश रहने का हक पोस्टर देखनेवाले आदमी का भी है

जिस तरह विज्ञापनों में दिखने वाले चेहरे खुश दिखता है, और राजनीतिक नेताओं का चेहरा सूर्ख और खुश दिखता है उसी प्रकार खुश रहने का हक पोस्टर देखनेवाले आदमी का भी है। कुछ गहराई से देखने पर यह भी पता चलता है कि पोस्टर देखनेवाले आदमी के उदासी एवं आंसुओं के कीमत पर ही पोस्टर में छपा आदमी का मुस्कुराहट पलता है। यह समाज की कड़वी सच्चाई है। इस ओर कवि इशारा करते हैं।

2.4.5 काल, तुझसे होड़ है मेरी - शमशेर बहादुर सिंह

▶ इस कविता में काल यानि मृत्यु को संबोधित किया गया है

'काल तुझसे होड है मेरी' हिन्दी साहित्य के प्रमुख कवि शमशेर बहादुर सिंह द्वारा रचित सुंदर कविता है। इसमें काल यानि मृत्यु को संबोधित किया गया है। और कवि इस कविता के द्वारा काल अर्थात मृत्यु के नकारात्मक विचार को निम्न दर्जे में दिखाते हैं और जीवन के विविधता को एवं, जीवन के नयापन को अभिव्यक्त करते हैं।

काल,
तुझसे होड़ है मेरी : अपराजित तू -
तुझमें अपराजित मैं वास करूँ।
इसीलिए तेरे हृदय में समा रहा हूँ
सीधा तीर-सा, जो रुका हुआ लगता हो -
कि जैसाध्रुव नक्षत्र भी न लगे,
एक एकनिष्ठ, स्थिर, कालोपरि
भाव, भावोपरि
सुख, आनंदोपरि
सत्य, सत्यासत्योपरि

▶ मानव जीवन भी अपराजित है

कविता की शुरुआती पंक्तियों में कवि कहता है कि, हे काल, हे मृत्यु, हे समयचक्र, तुझसे मेरी होड़ है। होड़ से तात्पर्य प्रतिस्पर्धा से है। कवि कहता है कि मृत्यु से मेरी प्रतिस्पर्धा है। कवि आगे कहता है कि, हे मृत्यु तू अपराजित है अर्थात मृत्यु को हराया नहीं जा सकता। और में तुझमें अर्थात मृत्यु मैं अपराजित वास करता हूँ यानि मुझे

भी नहीं हराया जा सकता। अर्थात कवि ने मृत्यु की वास्तविकता को समझ लिया है इसलिए अब उनके मन में मृत्यु के प्रति कोई भय नहीं है। अगर काल अपराजित है यानि मृत्यु को जीता नहीं जा सकता तो मुझे भी हराया नहीं जा सकता। मानव जीवन भी अपराजित है क्योंकि मानव जीवन मृत्यु पर ही वास करता है।

▶ मानव जीवन की विशेषताओं पर इस कविता में कवि बताते हैं

कवि आगे कहता है कि मैं तेरे हृदय में सीधे तीर के समान लगा हुआ है। यानि कवि या मानव जीवन मृत्यु के हृदय में सीधे तीर के समान लगा हुआ है। यहाँ पर तीर को मानव जीवन के साथ तुलना करते हैं। और आगे तीर की यानि मानव जीवन की विशेषताओं पर कवि प्रकाश डालते हैं। मानव जीवन मृत्यु के हृदय में तीर के समान लगा है। वह ध्रुव नक्षत्र से भी एकनिष्ठ होकर, स्थिर होकर, काल से परे होकर, भाव से परे भाव होकर, आनंद से परे सुख होकर, सत्य से परे सत्य होकर वास करता है।

मैंतेरे भी, ओ 'काल' ऊपर!
सौंदर्य यही तो .है, जो तू नहीं है, ओ काल!
जो मैं हूँ
मैं कि जिसमें सब कुछ है...
क्रांतियाँ, कम्यून,
कम्युनिस्ट समाज के
नाना कला विज्ञान और दर्शन के
जीवनत वैभव से समन्वित
व्यक्ति मैं।
मैं, जो वह हरेक हूँ
जो, तुझसे, ओ काल, परे है।

▶ अगर मृत्यु वास्तविकता है तो जीवन उससे भी महत्वपूर्ण वास्तविकता है

आगे कवि कहता है कि में तुझसे भी ऊपर हूँ, यानि यह जो मानव जीवन है यह मृत्यु से भी ऊपर है। अगर मृत्यु वास्तविकता है तो जीवन उससे भी महत्वपूर्ण वास्तविकता है। और जीवन में सौन्दर्य है, मानव जीवन सौन्दर्य से युक्त है जो काल में नहीं है। मानव जीवन में सौन्दर्य तत्व है लेकिन काल में सौन्दर्य नहीं हैं।

▶ मानव जीवन काल से परे हैं

आगे कवि मानव जीवन की विशेषताओं पर प्रकाश डालता है। कवि कहता है कि मैं जो हूँ अर्थात मानव जीवन जो है इसमें सबकुछ है। मानव जीवन में क्रांति है, कम्यून है, समाज में बदलाव लानेवाले कम्युनिस्ट विचार हैं, समाज के विभिन्न कला है, विज्ञान है और दर्शन भी है। इसमें जीवन का वैभव समाया हुआ है। मानव जीवन काल से परे, मृत्यु से परे हर एक चीज में हूँ इसलिए मानव जीवन काल से परे हैं। मानव जीवन की यह जो विविधताएँ हैं, भाव संबंधी ऊँचाईयाँ हैं, उतार चढ़ाव हैं, यह सब मृत्यु में नहीं हैं। इसलिए मानव जीवन मृत्यु से भी महत्व रखता है।

2.4.6 कोई और एक मतदाता - रघुवीर सहाय

'कोई और एक मतदाता' रघुवीर सहाय द्वारा लिखित प्रसिद्ध कविता है। हमारे देश में

खूब गरीबी है। बहुत सारे गरीब, बेरोज़गार लोग रहते हैं। कवि यहाँ पर व्यंग्य करते हैं कि आम नागरिक का यहाँ कोई अहमियत नहीं है, वह केवल मतदाता है। जिस दिन वह वोट डालता है उसी दिन उसका महत्व होता है। उसके आगे पीछे जो भी दिन होता है वह मात्र सामान्य दिन होता है।

▶ आम नागरिक का यहाँ कोई अहमियत नहीं है

जब शाम हो जाती है तब ख़त्म होता है मेरा काम
जब काम ख़त्म होता है तब शाम ख़त्म होती है
रात तक दम तोड़ देता है परिवार
मेरा नहीं एक और मतदाता का संसार
रोज़ कम खाते-खाते ऊबकर
प्रेमी-प्रेमिका एक पत्र लिख दे गए सूचना विभाग को

कवि कहता है कि जब शाम होता है तब मेरे काम खत्म होता है। अर्थात आम आदमी शाम तक काम करता है। और जबतक काम खत्म हो जाती है, शाम भी खत्म हो जाती है अर्थात शाम को विश्राम करने का या मनोरंजन करने केलिए उसके पास समय ही नहीं बचता। उसे पता ही नहीं चलता कि पहले शाम खत्म होती है कि काम। जब तक काम करनेवाला व्यक्ति घर पहूँचता है तो परिवार दम तोड़ चुका होता है अर्थात थक चुका होता है। और यह मात्र एक आदमी की कथा नहीं है बल्कि प्रत्येक मतदाता का यही व्यथा कथा है।

▶ इसमें प्रत्येक मतदाता का व्यथा कथा देख सकते हैं

कवि आगे कहता है कि वह रोज़ कम खाते हैं और कम खाते खाते ऊब गए हैं। और इस अवस्था से तंग आकर प्रेमी प्रेमिका ने विभाग को एक पत्र लिखकर अपनी मृत्यु की सूचना दे दी, अर्थात आत्महत्या कर ली।

दिन-रात साँस लेता है ट्रांजिस्टर लिए हुए ख़ुशनसीब ख़ुशीराम
फ़ुर्सत में अन्याय सहते में मस्त
स्मृतियाँ खँखोलता हकलाता बतलाता सवेरे
अख़बार में उसके लिए ख़ास करके एक पृष्ठ पर दुम
हिलाता संपादक एक पर गुरगुराता है।
एक दिन आख़िरकार दुपहर में छुरे से मारा गया ख़ुशीराम
वह अशुभ दिन था; कोई राजनीति का मसला
देश में उस वक़्त पेश नहीं था। ख़ुशीराम बन नहीं
सका क़त्ल का मसला, बदचलनी का बना, उसने
जैसा किया वैसा भरा

आगे कवि व्यंग्य का इस्तेमाल करते हैं। यहाँ कवि खुशीराम का जिक्र करता है, जो अपने जीवन में बहुत दुःखी है फिर भी अपने आपको खुश नसीब समझता है और अपने ट्रांजिस्टर के साथ मस्त रहता है। वह दिन रात ट्रांजिस्टर लेकर बैठा रहता है और फुर्सत से अन्याय सहता है क्योंकि उसने न्याय अपनी पूरी ज़िंदगी में देखा ही नहीं

है। हर पल हर दिन उसकी ज़िंदगी में अन्याय होता है और अब उसे अन्याय सहने की आदत हो गई है।

यहाँ कवि खुशीराम का जिक्र करता है, जो अपने जीवन में बहुत दुःखी है फिर भी अपने आपको खुश नसीब समझता है और अपने ट्रांजिस्टर के साथ मस्त रहता है।

वह सुबह सुबह अपने स्मृतियों को खँखोलता है और हकलाता हकलाता कुछ बतलाता है। और कभी कभी अखबार की संपादक को कभी कभी मतदाता याद आ जाता है और संपादकीय पृष्ठ पर उसकेलिए कुछ लिख डालता है।

▶ खुशीराम की हत्या के बारे में बताया गया है

और एक दिन दोपहर को अचानक खुशीराम की हत्या हो जाती है। कोई उसे छुरी मारकर हत्या कर देता है। और कवि उस दिन को अशुभ मानता है। उस समय देश में कोई राजनीतिक मसला नहीं चल रहा था और ना ही कोई चुनाव नजदीक आ रहा था, इसलिए खुशीराम का ऐसा कत्ल होना चर्चा का विषय नहीं बना। अगर कोई राजनीतिक मसला ज़ोरों पर होता या फिर चुनाव का समय होता तो खुशीराम का कत्ल बहुत बड़ी बहस का विषय बन जाता। लेकिन देश में उस समय ऐसी स्थिति नहीं थी तो खुशीराम का हत्या का खबर ज्यादा किसी को पता ही नहीं चला। और उसपर यह आरोप लगाया गया की वह बदचलन था और उसने जैसे कर्म किया उसको वैसा ही फल मिला।

इतना दुःख मैं देख नहीं सकता।
कितना अच्छा था छायावादी
एक दुःख लेकर वह एक गान देता था
कितना कुशल था प्रगतिवादी
हर दुःख का कारण वह पहचान लेता था
कितना महान था गीतकार
जो दुःख के मारे अपनी जान लेता था
कितना अकेला हूँ मैं इस समाज में
जहाँ सदा मरता है एक और मतदाता।

▶ कवि को सामाजिक असमानताएं देखकर बहुत दुःख होता है

कवि आगे कहता है कि यह सब देखकर मुझे बहुत दुःख होता है। बस सामान्य व्यक्ति होने के कारण उसकी मृत्यु का कोई चर्चा नहीं होती और इंसान होने का भी महत्व उसे नहीं दिया जाता। कवि कहता है कि मुझसे अच्छा तो छायावादी था, चाहे वह कल्पना के क्षेत्र में विचरण कर रहा होता फिर भी एक दुःख देखकर एक गान तो लिख लिया करता था। और प्रगतिवादी भी कितने कुशल थे, वे हर दुःख का कारण पहचानता था। प्रगतिवादी कवि सबके दुःखों को, गरीबी को पहचानता था और उसको लिखता था। और कितने महान था वह गीतकार जिसने दुःख की वजह से अपनी जीवन त्याग दी।

आगे कवि कहता है कि उसे इस समाज में बहुत अकेलापन महसूस होता है और

▶ हर रोज़ कोई ना कोई मतदाता मारा जाता है

उसे लगता है कि वह ऐसे समाज में पैदा हुआ है जहाँ हर रोज़ कोई ना कोई मतदाता मारा जाता है और किसी को खबर ही नहीं होती।

2.4.7 घर की ओर - नरेश मेहता

▶ 1990 में प्रकाशित 'देखना एक दिन' कविता संग्रह से ली गई है

'घर की ओर' नरेश मेहता द्वारा विरचित सुंदर कविता है। यह कविता नरेश जी की 1990 में प्रकाशित 'देखना एक दिन' कविता संग्रह से ली गई है। कविता में दो ही पात्र है - एक कवि खुद और दूसरा एक आदमी जो कवि केलिए बिल्कुल अपरिचित है।

वह-
जिसकी पीठ हमारी ओर है
अपने घर की ओर मुँह किये जा रहा है
जाने दो उसे
अपने घर।
हमारी ओर उसकी पीठ-
ठीक ही तो है
मुँह यदि होता
तो भी, हमारे लिए वह
सिवाय एक अनाम व्यक्ति के
और हो ही क्या सकता था?
पर अपने घर-परिवार के लिए तो
वह केवल मुँह नहीं
एक सम्भावनाओं वाली
ऐसी संज्ञा
जिसके साथ सम्बन्धों का इतिहास होगा
और होगी प्रतीक्षा करती
राग की
एक सम्पूर्ण भागवत-कथा।

▶ एक अपरिचित व्यक्ति अपने घर जा रहा है

एक व्यक्ति जो कवि केलिए अपरिचित है अपने घर जा रहा है। उसका पीठ कवि की ओर है और मुख घर की ओर। कवि उसे रोकना नहीं चाहता और वह बताते हैं उसे अपने घर जाने दो। कवि कहता है की सही है की उसका पीठ ही हमारे तरफ है क्योंकि अगर उसका मूँह हमारे तरफ होता तो भी हमारेलिए वह एक अनजान, अनाम, अजनबी ही रहता। अर्थात उसे देखने पर भी हम ना उसका नाम जान पाएँगे, ना ही उसको पहचान पाएँगे क्योंकि वह हमारेलिए और कवि केलिए मात्र अजनबी है। कवि केलिए और हमारेलिए वह एक अजनबी मात्र है लेकिन उसके घरवालों केलिए वह बस एक मूँह नहीं इतिहास और परंपरा को जोड़नेवाले कड़ी है। घरवालों केलिए वह एक ऐसी संज्ञा है जिससे सारी संभावनाएँ जुड़ी हैं। घर के सारे लोग उसके इंतज़ार में रहते

SGOU

हैं। सब उसकी वापसी की प्रतीक्षा में आँख गड़ाए बैठे होंगे।

तभी तो
वह-
हाथ में तैल की शीशी,
कन्धे की चादर में
बच्चों के लिए चुरमुरा
गुड़ या मिठाई
या अपनी मुनिया के लिए होगा
कोई खिलौना
और निश्चित ही होगी
बच्चों की माँ के लिए भी ...
(जाने दो
उसकी इस व्यक्तिगत गोपनीयता की गाँठ
हमें नही खोलनी चाहिए।)

▶ वह अपने परिवार के सदस्यों के लिए विभिन्न वस्तुएँ लेकर जाता है

कवि आगे कहता है कि घरवाले उसकी राह देख रहा है तभी तो वह हाथ में तेल की शीशी लेकर घर की ओर जा रहा है। और उसके कंधे की चादर में बच्चों केलिए चुरमुरा गुड़ या मिठाई और अपनी मुनिया केलिए कोई खिलौना होगा। और कवि कहता है कि उस चादर में बच्चों के माँ केलिए भी निश्चय ही कुछ ना कुछ होगा। और फिर कवि कहता है कि जाने देते हैं, उसकी व्यक्तिगत जीवन की गोपनीयता का गाँठ को हमें नहीं खोलना चाहिए।

वह जिस उत्सुकता और तेज़ी से
चल रहा है
तुम्हें नहीं लगता कि
एक दिन में
वह पूरी पृथ्वी नाप सकता है
सूर्य की तरह?
बशर्ते उस सिरे पर
सूर्य की ही तरह
उसका भी घर हो
बच्चे हों और ... ।

▶ एक दिन में ही पूरी पृथ्वी को नाप सकता है

कवि हमसे पूछता है कि जिस उत्सुकता और तेजी के साथ वह घर की ओर जा रहा है तुम्हें नहीं लगता की वह भी सूर्य की तरह एक दिन में ही पूरी पृथ्वी को नाप सकता है। कवि उस आदमी की तुलना सूर्य से करता है और कहता है कि उसका भी सूर्य की ही तरह उस सिरे पर घर होंगे बच्चे होंगे।

इसलिए घर जाते हुए व्यक्ति में
और सूर्य में
काफ़ी-कुछ समानता है।
पुकारो नहीं-
उसे जाने दो
हमारी ओर पीठ होगी
तभी न घर की ओर उसका मुँह होगा!
सूर्य को पुकारा नहीं जाता
उसे जाने दिया जाता है।

▶ घर जानेवाले आदमी को भी पुकारना नहीं चाहिए उसे जाने देना चाहिए

कवि को घर जाते व्यक्ति में और सूर्य में काफी समानता दिखता है। वह व्यक्ति भी सूर्य की तरह अपना सारा कार्य समेटकर तेजी से घर जाता है। इसलिए कवि कहता है कि घर जाते व्यक्ति को पुकारना नहीं चाहिए उसे जाने दे देना चाहिए। तभी तो हमारी तरफ उसकी पीठ होगी और घर की तरफ उसका मुँह होगा। सूर्य को पुकारा नहीं जाता उसे जाने दिया जाता है उसी प्रकार घर जानेवाले आदमी को भी पुकारना नहीं चाहिए उसे जाने देना चाहिए।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने नई कविता की छह प्रमुख कविताओं का अध्ययन किया है। पहली कविता है धर्मवीर भारती द्वारा रचित 'टूटा पहिया', जिसमें कवि लघुमानव की प्रतिष्ठा पर बल देते हैं। इस कविता से यह सीख मिलती है कि नगण्य समझी जाने वाली वस्तुएँ भी जीवन में कभी उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। दूसरी कविता है केदारनाथ सिंह की 'अकाल में दूब', जिसमें कवि ने अकाल के भीषण रूप को चित्रित किया है और विकट परिस्थितियों में भी प्रतीक्षा के महत्व को रेखांकित किया है। तीसरी कविता सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की 'पोस्टर और आदमी' है, जिसमें पोस्टर पर छपे आदमी और पोस्टर देखने वाले आदमी के बीच तुलना की गई है।

शमशेर बहादुर सिंह की 'काल, तुझे होड़ है मेरी' कविता में मृत्यु की नकारात्मकता को जीवन की विविधता और जीवंतता के सामने तुच्छ दिखाया गया है। रघुवीर सहाय की 'कोई और एक मतदाता' कविता में कवि ने आम जनता की स्थिति पर गहन दृष्टि डाली है। इस अध्याय की अंतिम कविता नरेश मेहता की 'घर की ओर' है, जिसमें कवि ने आम आदमी के जीवन की एक झलक प्रस्तुत की है।इन सभी कविताओं के अध्ययन से हम नई कविता की विशेषताओं को गहराई से समझ सकते हैं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. कवि का परिचय देते हुए 'टूटा पहिया' कविता पर टिप्पणी लिखिए।
2. 'अकाल में दूब' कविता का परिचय दीजिए।
3. कवि का परिचय देते हुए 'पोस्टर और आदमी' कविता पर टिप्पणी लिखिए।
4. 'काल, तुझसे होड़ है मेरी' कविता का परिचय दीजिए।
5. कवि का परिचय देते हुए 'कोई और एक मतदाता' कविता पर टिप्पणी लिखिए।
6. 'घर की ओर' कविता का परिचय दीजिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ. प्रतापनारायण टंडन
2. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ. बच्चन सिंह
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. रमेश चंद्र शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. ईश्वर दत्त शील, डॉ. आभा रानी
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल
7. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ. हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. अज्ञेय - तार सप्तक
2. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
3. अज्ञेय - तीसरा सप्तक
4. अज्ञेय - चौथा सप्तक अज्ञेय

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

BLOCK 03

समकालीन कविता

Unit 1: समकालीन कविता की पृष्ठभूमि, समकालीन परिस्थितियाँ

Unit 2: साठोत्तरी कविता, साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका, आम आदमी कविता के केंद्र में

Unit 3: समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

Unit 4: समकालीन हिन्दी कविता के प्रमुख कवि - धूमिल, विजयदेव नारायण साही, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, श्रीकांत वर्मा, धूमिल - मोचीराम, लीलाधर जगूड़ी - एक रात की ज़िंदगी, विजयदेवनारायण साही - मेरे साथ कौन कौन आता है, रामदरश मिश्र - मैं तो यहाँ हूँ

SGOU

इकाई 1

समकालीन कविता की पृष्ठभूमि, समकालीन परिस्थितियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- समकालीन कविता की पृष्ठभूमि समझता है
- समकालीन कविता की परिस्थितियाँ जानता है

Background / पृष्ठभूमि

किसी भी काव्य युग की अध्ययन करते वक्त उसकी पृष्ठभूमि एवं परिस्थितियों पर नज़र डालना ज़रूरी है। पृष्ठभूमि से मतलब है जिन जिन बातों की प्रभाव स्वरूप उस काव्य युग का आविर्भाव हुआ है और परिस्थितियों से मतलब है किन किन अवस्थाओं में वह काव्य आंदोलन रूपायित हुआ है।

समकालीन कविता के संदर्भ में भी इन्हीं बातों का अध्ययन होता है। समकालीन कविता का विभिन्न आलोचकों ने विभिन्न स्वरूप निर्धारित किया है। समकालीन कविता में पूर्ववर्ती विभिन्न काव्य आन्दोलनों का प्रभाव एवं सान्निध्य पा सकते हैं। एक पृथक काव्य आंदोलन से बढ़कर इसे काव्य आंदोलनों का समूह भी कहा जा सकता है। इन सब बातों का विस्तृत अध्ययन इस अध्याय में होगा।

इस अध्याय में ध्यान देनेवाली दूसरी बात समकालीन कविता की परिस्थितियाँ हैं। जिस प्रकार समाज की स्थिति विशेष साहित्य पर प्रभाव डालता है, समकालीन कविता में भी तत्कालीन समाज की स्थितियों का चित्र देखने को मिलता है। उस समय की लोगों की मानसिकता और सामाजिक व्यवस्थाओं के प्रति प्रतिक्रिया भी साहित्य में व्यक्त हुआ है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

समकालीन कविता की पृष्ठभूमि, समकालीन परिस्थितियाँ, मानसिकता, सामाजिक व्यवस्थाएँ, प्रतिक्रिया

Discussion / चर्चा

समकालीन कविता की पृष्ठभूमि

हिन्दी कविता का नवीनतम आन्दोलन 'समकालीन कविता' का है। इसका प्रवर्तन डॉ. विशम्भरनाथ उपाध्याय ने अपनी पुस्तक 'समकालीन कविता की भूमिका' के माध्यम से किया। इसके पहले खण्ड में जहाँ लगभग सवा सौ पृष्ठों में समकालीनता के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उससे सम्बन्धित कवियों की काव्य-रचना के वैशिष्ट्य पर प्रकाश डाला गया है, वहाँ दूसरे खण्ड में तीस कवियों की रचनाओं को भी संकलित किया गया है। यह विचित्र बात है कि इसके अन्तर्गत एक ओर तो जहाँ राजकमल चौधरी, जगदीश चतुर्वेदी, श्याम परिमार जैसे अकवितावादी कवियों को स्थान दिया गया है तो दूसरी ओर धूमिल, कुमारेन्द्र, पारसनाथ सिंह, कुमार विकल, वेणु गोपाल जैसे प्रतिबद्ध कविता या संघर्षशील कविता के उन्नायकों को भी सम्मिलित कर लिया गया है। साथ हो इसमें बलदेव वंशी, ज्ञानेन्द्रपति, लीलाधर जगूड़ी जैसे उन कवियों को भी लिया गया है जिन्होंने 'विचार कविता' के नाम से अपनी अलग पहचान बनाने की चेष्टा की थी। इस स्थिति को देखते हुए 'समकालीन कविता' को किसी अलग आन्दोलन की संज्ञा देने की अपेक्षा उसे हिन्दी के सभी साठोत्तरी आन्दोलनों का समुच्चय मानना अधिक उचित होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ. उपाध्याय ने साठोत्तरी युग के सभी आन्दोलनों को एक मंच पर लाने के लक्ष्य से उन्हें 'समकालीन कविता' का ऐसा व्यापक शीर्षक प्रदान किया, जिसके अन्तर्गत परस्पर विरोधी दृष्टिकोणों एवं प्रवृत्तियों वाले आन्दोलन भी एकत्रित हो सकें, किन्तु परवर्ती आलोचक 'समकालीन कविता' के इस व्यापक स्वरूप को स्वीकार नहीं करते।

▶ हिन्दी कविता का नवीनतम आन्दोलन

'समकालीनता' शब्द अंग्रेजी के 'Contemporary' (कन्टेम्पररी) का पर्याय है। इसे 'समसामयिकता' के अर्थ में ग्रहण किया जाता है। यह इस बात का सूचक है कि समकालीन कविता समसामयिक सन्दर्भों से जुड़ी हुई है। साथ ही इसे युग-विशेष के सन्दर्भों के अनुसार बदली हुई चेतना या मानसिकता का भी द्योतक माना जाता है। डॉ.उपाध्याय का मूल लक्ष्य 'आधुनिकता' के नाम पर उछाली जाने वाली व्यक्तिवादी एवं समाज विरोधी प्रवृत्तियों का बहिष्कार करते हुए, सामाजिक प्रगति या क्रांति में योग देने वाली प्रवृत्तियों को बढ़ावा देना था।

▶ अंग्रेजी के 'Contemporary' (कन्टेम्पररी) का पर्याय

समकालीन कविता के स्वरूप का विश्लेषण करते हुए डॉ. उपाध्याय ने उसे वर्तमान के गत्यात्मक एवं क्रियाशील रूप से सम्बद्ध किया है। उनके शब्दों में- 'समकालीन कविता में, जो हो रहा है' (बिकमिंग) का सीधा खुलासा है। इसे पढ़कर वर्तमान काल का बोध हो सकता है क्योंकि उसमें जीते, संघर्ष करते, लड़ते, बौखलाते, तड़पते-गरजते तथा ठोकर खाकर सोचते वास्तविक आदमी का परिदृश्य है।

समकालीन कविता को पूरी तरह विद्रोह की कविता मानते हुए उसकी दो धाराएँ स्वीकार की गई हैं-(1) अनावरण और (2) आक्रमण। अनावरण में जहाँ अकविता एवं निषेधमूलक कविता की नग्न एवं अश्लील प्रवृत्तियाँ आ जाती हैं, वहाँ आक्रमण में युयुत्सावादी, वामपंथी, प्रगतिशील कविताओं को लिया गया है। इस प्रकार डॉ. उपाध्याय ने समकालीन कविता के माध्यम से साठोत्तरी युग उन सभी आन्दोलनों को समर्थन प्रदान किया है जोकि नयी कविता के विरोध में स्थापित हुए थे, किन्तु समकालीन कविता के परवर्ती व्याख्याताओं ने डॉ. उपाध्याय की उपयुक्त मान्यताओं को अस्वीकार करते हुए भिन्न अर्थ में मान्यता दी है। वे समकालीन कविता में अपने सामयिक परिवेश के प्रति गहरी संसक्ति और जागरूकता का होना तो स्वीकार करते हैं किन्तु साथ ही वे उसे पूर्ववर्ती काव्यान्दोलनों से भी अलग मानते हैं। उपयुक्त स्थिति को देखते हुए कहा जा सकता है कि समकालीन कविता का अस्तित्व अब स्वतंत्र या पृथक रूप में दिखाई नहीं पड़ता तथा वह पूर्ववर्ती अन्य आन्दोलनों में ही घुल-मिल गई है।

▶ विद्रोह की कविता

समकालीन परिस्थितियाँ

समकालीन कविता युगीन यथार्थ एवं वास्तविकता को अभिव्यक्ति प्रदान करती है। यह काव्यान्दोलन, अपनी ऐतिहासिकता में, समसामयिक युग के अन्तर्विरोधों, अंतर्द्वन्द्वों, विसंगतियों, विषमताओं एवं विडम्बनाओं का खुला हस्ताक्षर है। समकालीन कवियों में सृजनशीलता के प्रति खतरे को उठा पाने का अपूर्व साहस है। इन कवियों ने राजनीतिक, सामाजिक स्वार्थ प्रेरित शक्तियों के विरुद्ध जूझते रहने हेतु कविता को प्रगतिशील संकल्प दिये। उनके तर्क-वितर्क को स्पष्ट करने का प्रयास किया। यहाँ ध्यान देने योग्य यह है कि कविता के ये संकल्प भारतभूमि की सीधी गंध से जुड़कर ही रचनात्मक अर्थवत्ता प्राप्त करते हैं।

▶ यथार्थ एवं वास्तविकता को अभिव्यक्ति प्रदान करती है

मोहभंग का शिकार हुए आम आदमी के अन्दर की पीड़ा, तनाव, विवशता, अबोधता, सहिष्णुता, अकेलापन, खीझ और गुस्से को उसके कटु- अनुभवों की समग्रता में सृजनात्मक संस्पर्श प्रस्तुत करने में समकालीन कविता का काव्य-मर्म छुपा हुआ है। वस्तुतः वर्तमान समाज व्यवस्था में अनेकशः समालोचक विद्वानों ने समकालीन कविता के काव्यत्व की रचनात्मक प्रासंगिकता पर प्रश्न चिह्न लगाये हुए हैं, जिसका कारण स्पष्ट है कि ये समीक्षक परम्परागत काव्य-प्रतिमानों को आधारित कर समकालीन कविता के काव्य-मर्म को लक्षित करने का प्रयत्न करते हैं, ऐसी परिस्थिति में निराशा होना स्वाभाविक है। समकालीन कविता ने कथ्य एवं टेकनीक के धरातल पर परम्परित काव्य प्रतिमानों की लीक को छोड़कर साहित्य में युगान्तकारी परिवर्तन प्रस्तुत किया।

▶ कटु- अनुभवों की समग्रता में सृजनात्मक संस्पर्श प्रस्तुत किया

समकालीन-कविता में वर्तमान को अतीत की अपेक्षा कुछ अधिक आग्रहपूर्ण स्वीकृति प्राप्त हैं। समाज में रहता हुआ; वर्तमान नई समस्याओं से उलझता हुआ व्यक्ति, समय को स्वीकारता हुआ भी क्षण विशेष के प्रति आग्रही जान पड़ता हैं। वस्तुतः आज कवि को यह कदापि सह्य नहीं कि कोई भी क्षण अनभोगा बीत जाए।

▶ कवि को यह कदापि सह्य नहीं कि कोई भी क्षण अनभोगा बीत जाए

आर्थिक दबाव और कष्ट के कारण इस वर्ग में कुण्ठा और संत्रास का उभरकर आना स्वाभाविक जान पड़ता हैं। इससे परिवेश की भयावहता और अधिक बढ़ गयी। परिवेश का छद्म और भयावहता नयी कविता आन्दोलन का केन्द्रीय वर्ण्य विषय रहा हैं। इस प्रकार अज्ञेय के नेतृत्व में प्रारम्भ और 'नयी कविता' पत्रिका के माध्यम से पल्लवित-पुष्पित इस काव्यान्दोलन ने वस्तुतः कविता को किसान मजदूर के व्यापक ग्रामीण परिवेश से हटाकर, महानगरीय परिवेश के मध्यम वर्ग से जोड़ दिया है। केवल भवानीप्रसाद मिश्र, गिरिजाकुमार माथुर, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना तथा रामदरश मिश्र जैसे कवि इसका अपवाद रहे। इन कवियों ने ग्रामीण जीवन की विसंगतियों, विडम्बनाओं और इच्छा-आकांक्षाओं को बहुत ईमानदारी के साथ चित्रित किए हैं। वस्तुतः ये वे कवि हैं, जिन्होंने प्रगतिशील आन्दोलन की चेतना को बरकरार रखा। यद्यपि इनमें रोमानी दृष्टि का आवेश भी विद्यमान हैं, किन्तु एक व्यापक परिप्रेक्ष्य से जुड़े रहने की इनकी ललक ने इनकी कविता को कालजयी बना दिया है।

▶ अज्ञेय के नेतृत्व में प्रारम्भ

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना नयी कविता से जुड़े एकमात्र कवि हैं जिन्होंने प्रयोग और मार्क्स दोनों को समान दृष्टि से सजाकर रखा। उनका प्रयोग शिल्पगत प्रतीत होता हैं परन्तु चेतना सदा ही मार्क्स से शिक्षा ग्रहण करती रही है। 'कुआनो नदी', 'जंगल का दर्द', जैसी उनकी नवीनतम कृतियों में जन-जन के जागरण के लिए व्याकुल उनकी जनवादी चेतना के दर्शन किए जा सकते हैं। रामदरश मिश्र ने भी यद्यपि नयी कविता से काव्यरचना प्रारम्भ की थी, किन्तु अपनी प्रगतिशील चेतना को ये कायम रखे हुए हैं। आत्मबद्धता के स्थान पर समूहबद्धता को ही उन्होंने चयन किया और ग्रामीण संदर्भो की संघर्ष- चेतना को अपनी काव्यरचना का विषय बनाया।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना प्रयोग और मार्क्स दोनों को समान दृष्टि से सजाकर रखा

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

समकालीन कविता की पृष्ठभूमि पर चर्चा करने पर विभिन्न काव्य आंदोलनों का प्रभाव हम देख सकते हैं। इसलिए भी कुछ आलोचक इसे एक अलग काव्य आंदोलन के स्वरूप के रूप में स्वीकार करना चाहते ही नहीं। इसमें परस्पर विरोधी काव्य आंदोलनों को भी सम्मिलित किया हुआ है। कुछ आचार्य इसे 'विचार कविता' के स्वरूप अंतर्गत रखकर चर्चा करते हैं तो कुछ इसका विस्तृत परिचय देते हुए इसके अंतर्गत अनेक काव्य आंदोलनों एवं उसके प्रवर्तक आचार्यों को भी सम्मिलित किया हुआ है। इस तरह समकालीन कविता को विस्तृत पृष्ठभूमि प्रदान करनेवाले आचार्यों में डॉ. विशम्भरनाथ उपाध्याय जी प्रमुख हैं। कई आलोचक उनसे सहमत है और कई अपनी असहमति प्रकट करते हुए समकालीन कविता का अलग स्वरूप प्रस्तुत करते हैं।

समकालीन कविता की परिस्थिति का अध्ययन भी ज़रूरी है। इससे समकालीन समाज का भी चित्र प्रस्तुत होता है। तत्कालीन समाज में जीते लोगों की मानसिकता का उद्घाटन भी इसके अंतर्गत किया गया है।

SGOU

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. समकालीन कविता की पृष्ठभूमि पर चर्चा कीजिए।
2. समकालीन कविता में किन किन काव्य आंदोलनों का समन्वय देखा जा सकता है?
3. समकालीन कविता को एक अलग काव्य आंदोलन मानना उचित है कि नहीं? अपना मत व्यक्त कीजिए।
4. समकालीन कविता की परिस्थितियों पर प्रकाश डालिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - डॉ गणपति चंद्र गुप्त
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ नगेन्द्र
3. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन
4. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ प्रतापनारायण टंडन
5. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ बच्चन सिंह
6. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ रमेश चंद्र शर्मा
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ ईश्वर दत्त शील, डॉ आभा रानी
9. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. विशवनाथप्रसाद तिवारी - समकालीन हिन्दी कविता
2. डॉ जगन्नाथ पंडित - समकालीन हिन्दी कविता का परिप्रेक्षय
3. नंदकिशोर नवल - आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 2

साठोत्तरी कविता, साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका, आम आदमी कविता के केंद्र में

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- साठोत्तरी कविता के बारे में समझता है
- साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका समझता है
- कविता में आम आदमी का स्थान समझता है

Background / पृष्ठभूमि

साठोत्तरी कविता साठ के बाद की कविताओं को कहा जाता है। इसे एक अलग काव्य आन्दोलन के रूप में नहीं बल्कि तत्कालीन साहित्यिक क्षेत्र में चल रहे विभिन्न काव्य आंदोलनों के समूचे रूप में देखा जा सकता है। इस दौर में किन किन आंदोलनों का बोलबाला था और इस समय के प्रमुख रचनाकार और प्रमुख रचनाएँ साथ ही साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका आदि बातों पर इस अध्याय में चर्चा किया जाएगा।

इसी समय आम आदमी कविता के केंद्र विषय बन चुका था। तो आम आदमी को किस प्रकार कविता में रखा गया है, इन सब बातों का भी चर्चा किया जाएगा।

Keywords / मुख्य बिन्दु

साठोत्तरी कविता, आम आदमी, विचार की भूमिका

SGOU

Discussion / चर्चा

साठोत्तरी कविता

सन् 1960 के पश्चात् प्रकाश में आने वाली कविताओं को 'साठोत्तरी कविता' कहा गया है। यह स्वयं में एक आन्दोलन न होकर सन् साठ के पश्चात् चलाये जा रहे अनेक काव्यान्दोलनों का पूंजीभूत स्वरूप है। सन् 1960 के बाद का काल 'नयी कविता' में विविध नूतन प्रयोग का काल है। प्रबुद्ध व उत्साही कवियों ने अपनी सोच को दिशा देते हुए सामयिक कविता को विविध नामकरणों से सज्जित किया है। साठोत्तरी हिन्दी कविता में कहीं विद्रोह का तूर्यनाद है, तो कहीं आक्रोश की ज्वालायें; कहीं 'अन्तर्विरोधों के अन्वेषण' की प्रक्रिया है, तो कहीं सामाजिक मूल्यों के अस्वीकार की भावना; कहीं 'भूखी', 'नंगी' और 'श्मशानी पीढ़ी' का जोश है, तो कहीं सहजाभिव्यक्ति की एषणा। इस काल के कवियों मे जगदीश चतुर्वेदी, कैलाश बाजपेयी, राजीव सक्सेना, मणि मधुकर, मुक्तिबोध, रवीन्द्रनाथ त्यागी, ममता अग्रवाल, दूधनाथ सिंह, रघुवीर सहाय, भवानी प्रसाद मिश्र, रामेश्वर लाल खण्डेलवाल, केदारनाथ अग्रवाल, विजयदेव नारायण साही, जगदीश गुप्त, अशोक बाजपेयी, कुन्तल कुमार जैन, हरीश मादानी, दिनकर सोनवलकर, पद्मधर त्रिपाठी, श्रीकान्त जोशी, गंगा प्रसाद विमल, रमेश कुन्तल मेघ इत्यादि का नाम परिगणित किया जा सकता है। इस काल की प्रमुख रचनाओं में 'अपनी शताब्दी के नाम', 'आत्म निर्वासन तथा अन्य कवितायें', 'आत्महत्या के विरुद्ध', 'अँधेरी कवितायें', 'खण्ड-खण्ड पाखण्ड पर्व', 'गर्म हवाएँ', 'तीसरा अँधेरा', 'देहान्त से हटकर', 'पक गयी है धूप', 'फूल नहीं रंग बोलते हैं', 'मछलीघर', 'माया दर्पण', 'मुक्ति- प्रसंग', 'मुखौटे', 'मृत शिशुओं के लिए प्रार्थना', 'शहर अब भी संभावना है', 'संस्मरणारम्भ' इत्यादि प्रमुख हैं। जैसा कि उक्त विवेचन में वर्णित है कि यह काल नूतन काव्यान्दोलनों का काल रहा, जिनमें अनेक काव्यान्दोलन कतिपय दिवस पश्चात ही अपना अस्तित्त्व खो बैठे 'अकविता' व 'सहज कविता' सदृश काव्यान्दोलनों ने कुछ समय के लिए अपनी छाप छोड़ी।

▶ 1960 के पश्चात् प्रकाश में आने वाली कविताएँ

साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका

कल को आज से बहतर बनाने में विचार की भूमिका बहुत बड़ा होता है। विचार करना सामाजिक प्रगति की ओर पहला कदम है। जीवंत व्यक्ति हमेशा सोचते विचारते हैं। मनुष्य का जिंदा होने का सबूत है विचार करना। साहित्यकार बहुत दूर के सोचते हैं। और साठोत्तरी कविता में इन्हीं विचारों का प्रतिफलन हम देख सकते हैं। साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस काल में कविता ने सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक मुद्दों पर एक तीखी प्रतिक्रिया दी। यह कविता, मोहभंग, अस्वीकृति और विद्रोह के स्वरों से भरी हुई थी, और इसने समाज की जटिलताओं और विरोधाभासों को उजागर किया।

▶ साहित्यकार बहुत दूर के सोचते हैं

साठोत्तरी कविता ने तत्कालीन राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था पर सवाल उठाए, और व्यवस्था द्वारा थोपे गए मूल्यों को अस्वीकार किया। इस काल की कविता में यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया गया, और समाज में व्याप्त गरीबी, असमानता और भ्रष्टाचार को उजागर किया गया। साठोत्तरी कविता में आम आदमी के जीवन, उसकी समस्याओं और संघर्षों को आवाज दी गई, जो पहले साहित्य में कम ही दिखाई देते थे। यह कविता विद्रोह और क्रांति की भावना से प्रेरित थी, और सामाजिक परिवर्तन की वकालत करती थी। साठोत्तरी कविता ने नये मूल्यों की तलाश की, और पारंपरिक मूल्यों और मान्यताओं पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित किया। इस काल की कविता में भाषा और शिल्प के स्तर पर भी नये प्रयोग किए गए, और कविता को अधिक प्रभावी और सशक्त बनाने की कोशिश की गई।

▶ यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया गया

साठोत्तरी कविता ने हिन्दी साहित्य में एक महत्वपूर्ण बदलाव लाया, और कविता को एक नये दिशा दी। इसने न केवल सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों पर प्रकाश डाला, बल्कि भाषा और शिल्प के स्तर पर भी नये प्रयोगों को प्रोत्साहित किया।

▶ आम आदमी कविता के केंद्र में

आरंभ काल से ही कविता का विषय प्रकृति, सौन्दर्य, नारी, इतिहास, पुराण आदि रहा है। साहित्य में आज भी इन सबका पर्याप्त स्थान एवं महत्व है। आधुनिक काल में इसमें कुछ बदलाव होने लगा। पहले तो देशप्रेम, उपदेशात्मकता जैसी विषयों का बोलबाला था और फिर आम आदमी भी कविता का विषय बनने लगा। लोग वैयक्तिक वेदनाओं का चित्रण करने लगे, फिर दूसरों की वेदनाओं को खासकर आम आदमी की वेदनाओं का ज़िक्र होने लगा। नई कविता में लघु मानव की प्रतिष्ठा होने लगी। इस तरह धीरे धीरे आम आदमी कविता के केंद्र की ओर अग्रसर होने लगी।

▶ नई कविता में लघु मानव की प्रतिष्ठा

साठोत्तरी कविता में तो आम आदमी कविता का एक महत्वपूर्ण विषय रहा है। इस समय की कविताओं में सामान्य आदमी के जीवन, उसकी समस्याओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को केंद्र में रखा गया। साठोत्तरी कविता, जो 1960 के दशक के बाद हिन्दी साहित्य में उभरी, ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। इस दौर की कविता में आम आदमी के जीवन को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

▶ आम आदमी कविता का एक महत्वपूर्ण विषय रहा

साठोत्तरी कविता का सबसे बड़ी विशेषता सामाजिक यथार्थों का चित्रण हैं। साठोत्तरी कविता में आम आदमी के जीवन, उसकी समस्याओं और संघर्षों का यथार्थ चित्रण मिलता है। आज़ादी के पश्चात तत्कालीन सरकार और नेताओं ने आम आदमी के गरीबी की बात अपने भाषणों में तो करते थे लेकिन उनकी इस दुरवस्था का हल केलिए ऊँगली भी नहीं हिलाई। इस तरह सत्ता द्वारा उपेक्षित आम जनता की जीवन के चित्र को कवियों ने अपनी कविताओं में उकेरा है। अरुण कमल की कविता 'खुशबू रचते हैं हाथ' इसका एक उदाहरण है-

SGOU

कई गलियों के बीच
कई नालों के पार
कूड़े-करकट
के ढेरों के बाद
बदबू से फटते जाते इस
टोले के अंदर
खुशबू रचते हैं हाथ
खुशबू रचते हैं हाथ।

- सामाजिक यथार्थों का चित्रण

यहाँ कवि ने शहरी जीवन में आम आदमी की विवशता और गरीबी को बड़ी सहजता से चित्रित किया है।

- समाज में व्याप्त विषमताओं, विद्रूपताओं और विसंगतियों को उजागर किया

साठोत्तरी कविता ने समाज में व्याप्त विषमताओं, विद्रूपताओं और विसंगतियों को उजागर किया। और साथ ही आम आदमी की पीड़ा को भी व्यक्त किया । इस दौर की कविताओं में आम आदमी की पीड़ा, कुंठा, और संघर्षों को सहानुभूतिपूर्वक व्यक्त किया गया। आम आदमी की बदतर अवस्था की वजह से साठोत्तरी कविता में व्यवस्था के प्रति असंतोष और विद्रोह का स्वर भी मुखर था। इस दौर की कविता में एक नई भाषा और दृष्टिकोण का प्रयोग किया गया, जिसमें आम आदमी की भावनाओं और विचारों को सहजता से व्यक्त किया गया। इस समय के प्रमुख रचनाकारों में धूमिल, रघुवीर सहाय, मुक्तिबोध, और अशोक वाजपेयी जैसे कवियों ने आम आदमी को केंद्र में रखकर महत्वपूर्ण रचनाएँ कीं।

धूमिल की कविताएँ, 'संसद से सड़क तक' और 'सुदामा पाण्डेय का प्रजातंत्र', आम आदमी की समस्याओं पर प्रकाश डालता है और राजनीतिक व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य भी करती हैं। अशोक वाजपेयी की कविताओं में भी आम आदमी के जीवन, उसकी परिस्थितियों और मनोभावों का चित्रण गहराई से हुआ है।

संक्षेप में, साठोत्तरी कविता ने आम आदमी को साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाया और उसके जीवन के यथार्थ को एक नई दिशा दी।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

साठोत्तरी कविता एक आंदोलन नहीं बल्कि समूचे आन्दोलनों की समूह है। समय समय पर विभिन्न कवियों एवं रचनाकारों ने साहित्य में विभिन्न आंदोलनों का प्रवर्तन किया है। साठोत्तरी कविता से मतलब उस समय प्रवृत्त विभिन्न आंदोलनों का समूह से हैं। इसलिए साठोत्तरी कविता में विभिन्न प्रकार के आवाज़ें सुनाई देती है जैसे आक्रोश और संयम, अन्वेषण और अस्वीकार की भावना आदि।

साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। जैसे कि पहले कहा गया है, साठोत्तरी कविता में विभिन्न आंदोलनों का समन्वय है, इसलिए उसमें विभिन्न विचारधाराओं का प्रभाव भी होना सहज स्वाभाविक है।

साठोत्तरी कविता के केंद्र विषय के रूप में आम आदमी को रखा गया है। आम आदमी की दुःख, दर्द, कुंठा, संत्रास आदि का बखूबी वर्णन हुआ है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. साठोत्तरी कविता पर टिप्पणी लिखिए।
2. साठोत्तरी कविता में विचार की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
3. आम आदमी कविता के केंद्र में किस प्रकार रखा गयाा है? चर्चा कीजिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - डॉ गणपति चंद्र गुप्त
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ नगेन्द्र
3. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन
4. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ प्रतापनारायण टंडन
5. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ बच्चन सिंह
6. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ रमेश चंद्र शर्मा
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ ईश्वर दत्त शील, डॉ आभा रानी
9. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. विशवनाथप्रसाद तिवारी - समकालीन हिन्दी कविता
2. डॉ जगन्नाथ पंडित - समकालीन हिन्दी कविता का परिप्रेक्षय
3. नंदकिशोर नवल - आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- समकालीन कविता की वस्तुगत प्रवृत्तियों का जानकारी मिलती है
- समकालीन कविता की शिल्पगत प्रवृत्तियों से अवगत होता है

Background / पृष्ठभूमि

किसी भी काव्य आंदोलन को गहराई से समझने केलिए उसकी प्रवृत्तियों का अध्ययन करना ज़रूरी है। समकालीन कविता की प्रवृत्तियों का अध्ययन हम इस अध्याय के अंतर्गत करेंगे। अध्ययन की सुविधा केलिए हम प्रवृत्तियों को दो भागों में विभाजित कर विचार करेंगे। वस्तुगत प्रवृत्तियाँ और शिल्पगत प्रवृत्तियाँ। इसके अंतर्गत हम विभिन्न पहलुओं को विस्तार से समझने की कोशिश करेंगे।

वस्तुगत प्रवृत्तियों में विषयों का विश्लेषण किया जाएगा यथा - आम-आदमी का चित्रण, व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता, मूल्यों के संक्रमण की स्थिति, मानवीय रिश्तों की ऊष्मा, घर-परिवार में तनाव और विघटन, प्रेम एवं यौन चेतना, आदर्श और यथार्थ का द्वन्द्व, जीवन-संघर्ष आदि और शिल्पगत प्रवृत्तियों में भाषा, आम आदमी के शब्द, मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ, बिम्ब विधान, प्रतीक-विधान, अलंकार-योजना आदि का चर्चा करेंगे। यह अध्याय समकालीन कविता को थोड़ी और बारीकी से समझने में सहायक सिद्ध होगा।

Keywords / मुख्य बिन्दु

वस्तुगत, आम-आदमी, सामाजिक अस्मिता, मूल्यों के संक्रमण, तनाव और विघटन, प्रेम एवं यौन चेतना, आदर्श और यथार्थ का द्वन्द्व, जीवन-संघर्ष, शिल्पगत प्रवृत्तियाँ, भाषा, आम आदमी के शब्द, मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ, बिम्ब विधान, प्रतीक-विधान, अलंकार-योजना

SGOU

Discussion / चर्चा

समकालीन हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

समकालीन हिन्दी काव्य-साहित्य के अध्ययन-अनुशीलन के आधार पर उसकी निम्नलिखित प्रमुख वस्तुगत व शिल्पगत विशेषताओं को रेखांकित किया जा सकता है-

वस्तुगत प्रवृत्तियाँ

आम-आदमी का चित्रणः यद्यपि सातवें दशक से पूर्व की रचनाओं में भी आम आदमी पर लिखा जाता रहा है, लेकिन समकालीन कविता में इस विषय पर लेखन एक आन्दोलन के रूप में उभरा, जिसके अंतर्गत आम आदमी पर सिर्फ बयानबाजी नहीं हुई, बल्कि बड़े पैनेपन से उसके जीवन के एक-एक पक्ष को उभारा गया। यही वह काल है जब कि आम आदमी की मामूली से मामूली दिनचर्या को भी सहानुभूति और गरिमा के साथ काव्य का विषय बनाया गया। धोबी, नाई, दर्जी, मज़दूर, खलासी, चौकीदार, घरेलू नौकर, पोस्टमैन, सिपाही, पालकी वाला, सब्जी वाला, बूट पॉलिश वाला, भिखारी, कोयला खान में काम करने वाला, बोझा उठाने वाला, बिजली सुधारने वाला, गरीब किसान, क्लर्क, बर्तन वाली बाई, वेश्या सदृश छोटे-से-छोटे उपेक्षित चरित्रों पर बहुत अधिक विस्तार से लिखा गया। यही नहीं, इस काल के कवियों ने उपर्युक्त चरित्रों को वर्णन का विषय मात्र ही बनाकर नहीं छोड़ दिया, अपितु अपनी सम्पूर्ण संवेदनशीलता के साथ उनके अन्तस् से साक्षात्कार करने का प्रयास भी किया। फलतः उनके जटिल मानस में उपज रही सोच के एक-एक कतरे, उनकी इच्छा आकांक्षा, दृष्टि, निराशा, विवशता, आक्रोश, खीझ, कुण्ठा इत्यादि को विस्तृत वर्णन का विषय बनाया है। धूमिल की प्रथम काव्य-कृति 'संसद से सड़क तक' - राजनीति से मामूली आदमी के सम्बन्ध का खुला आख्यान है। इसकी अनेक कविताओं में कवि मानो स्वयं ही इस वर्ग का प्रतिनिधि बन गया है-

▶ छोटे-से-छोटे उपेक्षित चरित्रों पर बहुत अधिक विस्तार से लिखा गया

पत्नी का उदास और पीला चेहरा
मुझे आदत-सा आँकता है
उसकी फटी हुई साड़ी से झाँकती हुई पीठ पर
खिड़की से बाहर खड़े पेड़ की
बहशत चमक रही है
मैं झेंपता हूँ
और धूमिल होने से बचता हूँ
याने बाहर का दुर-दुर
और भीतर का बिल-बिल होने से
बचने लगता हूँ।

1. **व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता:** आम वर्ग को अपनी अस्मिता सुरक्षित रखने के लिए समाज में पग-पग पर संघर्ष करना पड़ रहा है। वह लगभग पहचानहीनता की स्थिति में जी रहा है-

मैं घास की तरह जन्मा
और बढ़ा। मुझे किसी ने नहीं बोया
सभी ने रौंदा। और सभी ने चरा।

घास की जैसे कोई विशिष्ट पहचान नहीं होती, कोई मूल्य नहीं होता- उसकी भी ऐसी ही स्थिति है। उसका जन्म लेना कोई अवधान-योग्य बात नहीं है और जब तक वह जीवित रहता है, उसकी न कोई पहचान बनती है, न उसे किसी प्रकार की प्रतिष्ठा ही मिल पाती है। वह इस अवमानना एवं उपेक्षा से अत्यन्त व्यथित है।

2. **मूल्यों के संक्रमण की स्थिति :** परिस्थितियों के अनुसार जीवन-मूल्य भी परिवर्तित होते रहते हैं। इस दृष्टि से समकालीन कविता का युग मूल्यों के संक्रमण का युग है। राजनीतिक-सामाजिक जागरूकता के फलस्वरूप आम आदमी में चेतना का स्फुरण हुआ है। आत्म सम्मान, आत्म गौरव की भावना उसके हृदय में स्फुरित होने लगी है। समकालीन कविता में इन संक्रमित मूल्यों को प्रामाणिक अभिव्यक्ति दी गयी है। धोखा खाते-खाते आम आदमी अविश्वासी हो उठा है, अनास्था से सम्पृक्त है। वह जानता है कि युगीन परिप्रेक्ष्य में ऐसा हो जाना नितान्त स्वाभाविक प्रक्रिया है। कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह की 'आधी रात' कविता इसी अनास्था एवं अविश्वास का वक्तव्य है-

अधिकांश लोग मुझे ऐसे मिले
जो ज़िन्दगी और रोटी के लिये खून-पसीना बहाते-बहाते
अब सब्र और यकीन से नफ़रत करने लगे थे,
और जिनकी आँखों में खून उतर आया था।

वह अपने को जीवित रखने के लिए कोई भी तरीके अपनाने को तैयार है। वह समझ चुका है कि ईमानदारी एवं सादगी से उसे कुछ भी हासिल नहीं होगा। इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है-

▶ समकालीन कविता का युग मूल्यों के संक्रमण का युग

पिछले साल मैंने एक नारा लगाया था
तुरन्त दुकानदार ने मुझे अन्दर बुलाया
और जास्ती राशन देकर एक सिगरेट पिलाया।

फलतः वह हिंसक हो उठा है। अपने मन को समझाने के लिए उसने अपने तर्क भी गढ़ लिये हैं। यह मूल्यहीनता की चरम सीमा है।

3. **मानवीय रिश्तों की ऊष्मा:** समसामयिक कविता आम वर्ग के मानव सम्बन्धों के प्रत्येक पहलू को समर्थ शब्दों के माध्यम से अंकित करती चली है। इस वर्ग में मानवीयता आज भी शेष है। यह सदैव दूसरों की सहायता हेतु तत्पर है। मंगलेश डबराल की 'ट्रेन में' कविता इसी मानवीयता की सहजाभिव्यक्ति है-

▶ मानव सम्बन्धों के प्रत्येक पहलू को समर्थ शब्दों के माध्यम से अंकित करती चली है

सोती हुई बच्ची को
जगह देने के लिये
एक बूढ़ा अपनी जगह से उठता है
और काँपते पैरों पर खड़ा हो जाता है।

4. **घर-परिवार में तनाव और विघटनः** आम आदमी का परिवार अभावों में जूझता परिवार है। यहाँ निर्धनता का वह अभिशाप है, जहाँ ऊष्मिल-स्नेहिल सम्बन्धों का स्वाद भी कसैला हो उठा है। उसे घर का स्मरण सुखद अनुभूतियों से नहीं मरता अपितु कर्तव्यबोध, अनेक कष्टों, तनाव एवं परेशानियों से बोझिल कर देता है। अधिकांश समकालीन कविता में यह विसंगत पारिवारिक स्वरूप ही अधिक झलका है। विसंगत परिस्थितियों की चोट आदमी को आदमी नहीं रहने देती, शैतान बनाकर छोड़ती है -

सायकिल से आया वह मर्द।
कालिख पुते कमीज और पाज़ामे में।
और बिन कुछ पूछे।
लेटी हुई औरत पर टूट पड़ा।
'हरामज़ादी खटिया तोड़ती हैं दिन-रात'।
कहते हुए -

▶ विसंगत पारिवारिक स्वरूप की झलक

पारिवारिक कलह का दृश्य आम-परिवार का एक चिर परिचित दृश्य है। आम परिवार में जिये जाते सुखद-खुशहाली के क्षण भी समकालीन कविता में जीवन्त हैं। यह अवश्य है कि ये चित्र बहुत कम ही अंकित हो पाये हैं, लेकिन जब भी ये क्षण कविता में आय हैं, बेहद सशक्त अभिव्यक्ति के साथ आए हैं।

प्रेम एवं यौन चेतनाः अभावों की विभीषिका में प्रेम का रोमांच खो-सा गया है और प्रेम एवं यौन-सम्बन्ध स्थापित करना उसकी बस एक आदत-सी बन गयी है। कभी-कभी तो उसे लगने लगता है कि यौन-समस्या भूख की समस्या के बाद की समस्या है क्योंकि वह जानता है कि प्यार करने से पहले उन्हें पेट की आग से गुज़रना पड़ा है। अधिकांश आम वर्ग के व्यक्ति के मन में, अभावों के बावजूद भी पत्नी के प्रति स्नेहिल भावनाएँ ही मिलती हैं। पत्नी का साथ उसके मन में जिजीविषा जगाता है। लेकिन कभी-कभी जीवन की आपा-धापी में वह इतना व्यस्त हो जाता है कि प्रेम के लिए अवकाश नहीं जुटा पाता। यह व्यस्तता इसीलिए उसे कचोटती है-

▶ यौन-समस्या भूख की समस्या के बाद की समस्या

सहसा चौरस्ते पर जली लाल बत्ती जब।
एक दर्द हौले से हिरदै को हूल गया।
ऐसी क्या हड़बड़ी कि जल्दी में पत्नी को
चूमना-देखो, फिर भूल गया।

5. **आदर्श और यथार्थ का द्वन्द्वः** आदर्श एवं यथार्थ की द्वन्द्वपरक संवेदनाओं की अभिव्यक्ति आज की कविताओं में बहुतायत से मिल जाती है, जो कि कवि के आम सोच से तदाकार हो उठने की परिचायिका है।

अभाव में जीता आदमी स्वाभाविक रूप से कृपण और स्वार्थी हो उठा है। उसकी आदर्श प्रपूरित मानवीय संवेदनाएँ प्रायः लुप्त-सी हो चली हैं। इसका स्थान यथार्थ से प्रेरित क्रूरता व स्वार्थान्धता की भावनाओं ने ले लिया है। कुँवर नारायण की 'जब आदमी आदमी नहीं रह जाता' कविता उक्त सत्य को उद्घाटित करती है। चरितनायक मुसीबत में फँसे भाई-बन्धु के पास सहायतार्थ पहुँचने से इसलिए हिचकिचाता है कि कहीं स्वयं भी मुसीबत में न फँस जाएँ और उसकी गुहार अनसुनी कर भाग खड़ा होता है। मन में गहरे तक घर कर गयी आदर्शपरक संवेदनाएँ जब उसे तुमुल अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति में ले जाती हैं तो वह अपनी सफाई में कह उठता है-

आपने मुझे भागते हुए देखा होगा
दर्द से हमदर्द की ओर
वक्त बुरा हो तो आदमी आदमी नहीं रह पाता
वह भी
मेरी ही और आपकी तरह आदमी रहा होगा
लेकिन आपको यकीन दिलाता हूँ वह मेरा कोई नहीं था,
जिसे आपने भी
या अँधेरे में मदद के लिये चिल्ला-चिल्लाकर
दम तोड़ते सुना था।

उक्त पंक्तियों में कवि द्वारा उसकी सोच को आत्मसात करने का प्रयत्न द्रष्टव्य है। उसके मन में आदर्श एवं यथार्थ का द्वन्द्व चल रहा है। मदद माँगते आदमी की सहायता न कर पाने के कारण उसकी आत्मा उसे कचोटती है और उसे यह अनुभव करने को बाचित करती है कि वह भी उसके समान आदमी था, जो मरणात्मक यन्त्रणा से जूझ रहा था लेकिन दूसरे ही क्षण उसके मन में पुनः यथार्थ हावी हो जाता है और 'वह मेरा कोई न था' कहकर छुटकारा पाना चाहता है।

▶ यथार्थ से प्रेरित क्रूरता व स्वार्थान्धता की भावनाएँ

6. **जीवन-संघर्षः** आम आदमी का जीवित रहने के लिए किया गया संघर्ष सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा बहुत अधिक है। अनवरत श्रम के पश्चात् ही उसे दो जून रोटी मयस्सर है, जिसके सहारे वह जीवित भर रह सकता है। समकालीन कविता में उसका यह संघर्ष बहुतायत से चित्रित है। खेतिहर दिन भर फावड़ा चलाता है, मजदूर दिन भर सड़क, मकान मरम्मत इत्यादि का काम करता है, नौकर कारखानों में श्रम-भार से जूझ रहा है हाड़-तोड़ काम करते हुए टूटते चले जाना ही उसकी नियति है, जिसे वह भली-भाँति जानता है-

मेरी कथा फावड़ा घिस जाने की
कारखाना उजड़ जाने की
सड़क टूट जाने की कथा है
मेरी कथा
पत्थर के रेत हो जाने, पेड़ के
लकड़ी हो जाने की
कोयले के
आग हो जाने की कथा है।

▶ आम आदमी का जीवित रहने के लिए किया गया संघर्ष

पत्थर के रेत, पेड़ के लकड़ी और कोयले के आग होने सदृश सन्दर्भों से यही अर्थ ध्वनित होता है कि एक-एक दिन जिन्दा रहने के लिए उसे अपनी समूची शक्ति, समूचा जोश लगाना पड़ जाता है। इसी प्रकार केदारनाथ सिंह की कविता 'रात की सिलाई' एक दर्जी के संघर्ष की कहानी है, जो परिवार के भरण-पोषण और अपने जीवनयापन के लिए देर रात तक कपड़े सीता रहता है।

शिल्पगत प्रवृत्तियाँ

समकालीन काव्य में शिल्प को 'साध्य' या 'कथ्य' से अधिक महत्त्वपूर्ण कभी नही माना गया। समकालीन कवियों ने कथ्य को प्राथमिकता दी और उसे समकालीन, यथार्थ से जोड़ा। उन्होंने आम आदमी का स्वरूपांकन उसके ही शब्द-तेवरों के साथ बड़ी सतर्कता और सार्थकता के साथ किया है। इसीलिए आज की कविता में आम जीवन की ही भाषा, शब्द-चयन, कथन-भंगिमा (मुहावरे, लोकोक्तियाँ इत्यादि) बिम्ब, प्रतीक, अलंकार इत्यादि मिलते हैं।

7. **भाषाः** भाषा ही वह सेतु है, जिससे होकर हम 'अनुभूति' या 'कथ्य' तक पहुँचते हैं। भाषा सिर्फ अभिव्यक्ति का ही नहीं, अनुभूति और संवेदना का भी माध्यम है धूमिल का मानना है कि कविता का मतलब है भाषा में आदमी होना। इसका सीधा अर्थ अभिव्यक्ति के सलीके और सादगी से जुड़ता है। यह सादगी आम आदमी की ग्राह सामर्थ्य से भी सम्बन्धित है।आज का कवि अधिकांशतः अभिव्यक्ति को सरलीकृत करता चला है और लोक-व्यवहार और बोलचाल की भाषा को काव्य में प्रयुक्त कर रहा है, लेकिन कविता को बोलचाल की भाषा के निकट लाने का अर्थ केवल बोलचाल के शब्दों को अपनाने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि सही मायने में आज के जीवन की धड़कन को व्यक्त करने वाली लय को गहरे स्तर पर पकड़ना है। इस दिशा में वह बहुधा सफल भी हुआ है।

▶ बोलचाल की भाषा के निकट लाना

▶ सादगी और सरलता

आज की कविता में भाषा के स्तर पर निहायत सादगी और सरलता है। कवि संस्कृतनिष्ठ क्लिष्ट भाषा-प्रयोग से बचा है और आम जन की बोलियों, शब्द-प्रयोगों को उनके ही अंदाज में कहने की चेष्टा कर रहा है। इस प्रयास में कभी-कभी उसकी कविता मात्र बयान बनकर भी रह जाती है और कभी नितान्त अखबारी, जैसे कि किसी स्थिति या व्यक्ति का ब्यौरेवार वर्णन कर दिया गया हो। लेकिन यह भी सच है कि आज जब

जन-भाषा कविता की ज़मीन बन रही है तो उसमें अधिक स्वाभाविकता भी आ गई है। वह सार्थक संवाद बन गयी है, अधिक संप्रेष्य बन गयी है।

(क) आम आदमी के शब्दः लोक जीवन के बीच प्रचलित अनेक तद्भव देशज शब्दों का प्रयोग विवेच्य वर्ग के प्रस्तुतीकरण को और भी प्रामाणिक बना सका है। कतिपय उद्धरण इस सन्दर्भ में द्रष्टव्य हैं-

"इसे बाँध्धो, उशे काट्टो, हियाँ ठोक्को, वहाँ पीट्टो
घिश्शा दो, अइशा चमकाओ, जुत्ते को ऐना बनाओ"
"गरज यह कि घण्टे भर खटवाता है
मगर नामा देते वक्त
साफ 'नट' जाता है।"

उपर्युक्त उदाहरण में इशे, बाँध्धो, काट्टो ठोक्को, पीट्टो, हियों, घिश्शा, अइशा, जुत्ते, ऐना, नट, नामा, खटवाना इत्यादि सभी शब्द आम जीवन की बोलियों से ग्रहीत हैं उक्त शब्दों के प्रयोग से 'कथ्य' सजीव एवं स्वाभाविक बना है। कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि कवि विवेच्य वर्ग पर बयानबाज़ी कर रहा है, अपितु ऐसा प्रतीत होता है कि आम आदमी विविध क्रिया कलापों के साथ बोलता हुआ 'काव्य' में जीवन्त है। कवि अपनी बात यदि जन-भाषा के माध्यम से नहीं कहना चाहता, तो ऐसे शब्दों का चयन करता है, जो आम ज़िन्दगी में बेहद परिचित हैं। इसके 'कथ्य' सहजगम्य हो उठता है। जैसे-

▶ लोक जीवन के बीच प्रचलित अनेक तद्भव देशज शब्दों का प्रयोग

करछुल
बटलोही से बतियाती है और चिमटा
तवे से मचलता है
चूल्हा कुछ नहीं बोलता
चुपचाप जलता
और जलता रहता है।

उक्त पंक्तियों में करछुल, बटलोही, तवा, चिमटा इत्यादि चिरपरिचित घरेलू उपकरणों के माध्यम से निर्धनता एवं अभाव को व्यक्त करने का सफल प्रयास द्रष्टव्य है। इसी प्रकार अनेक शब्द हैं जो विवेच्य वर्ग की दैनिक पूँजी हैं, उनका जीता-जागता संसार है। कवि अभिव्यक्ति की ताज़गी के साथ कथन की गरिमा इनके ही माध्यम से सुरक्षित रखता है।

(ख) मुहावरे एवं लोकोक्तियाँः मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग लोक-जीवन का अभिन्न अंग है। आम जन दैनिक जीवन में अनेक बार उनका सहज एवं स्वाभाविक प्रयोग करता है। समसामयिक कवि भी जब उक्त वर्ग की बात करता है तो इसकी ही कथन भंगिमा का चयन करता है, जिससे 'कथ्य' और 'कथन' की दूरी कम हो जाती है। यथा-

▶ मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग

दवा-दारू के अभाव में
उसका पिया
राम-प्यारा हो गया।

धूमिल की अति प्रसिद्ध कविता 'मोचीराम' का मुहावरा वस्तुस्थिति की खरी सार्थक पहचान बना है। यहाँ जीवन में सम्पृक्त आम अनुभव के खुरदरे प्रसंग नूतन 'कथन-भंगिमा' लेकर आये हैं।

(2) बिम्ब विधानः आज का कवि कथ्य' को संप्रेष्य बनाने के लिए इसका अधिकाधिक प्रयोग करने लगा है। यही नहीं, उसके बिम्ब भी आम जीवन से ही उठाये गये हैं-

(i) जागती रहेगी लालटेन
कील से टंगी हुई
जब सिलते-सिलते वह थक जायेगा।
(ii) आटे में नमक की तरह
तुम्हारी याद
मुझे स्वाद से
भर देगी।

प्रथम उद्धरण में चरितनायक के कार्याधिक्य के कारण थक जाने के परिप्रेक्ष्य में रात्रि के गहराने का भाव 'जागती लालटेन' के माध्यम से प्रस्तुत है। यहाँ लालटेन वही आम जीवन का चिरपरिचित उपादान है, जिसका सहारा लेकर बिम्ब-सृजन हुआ है। द्वितीय उद्धरण में प्रेयसी की मीठी याद को सुस्पष्ट स्वरूप दिया गया है। प्रेयसी की स्मृति प्रेमी मन को बेहद भली लगती है। जिसे कवि 'आटे में नमक' के आस्वादन के सहारे आस्वाद्य बिम्ब के रूप में प्रस्तुत कर रहा है। अनेक अन्य कविताओं में घर, परिवार, बचपन से जुड़ी स्मृतियों के वैविध्यमय बिम्ब मिलते हैं, जिनमें एक ऐसा जीवन धड़कते हुए महसूस होता है जो अपनी व्यक्तिगत के साथ ही साथ निम्न मध्यवर्गीय जीवन का सच्चा प्रतिनिधि है। बिम्ब-रचना में यह विशेषता मूलतः यथार्थ की अन्विति के कारण ही है। रोटी में नमक का बिम्ब बहुत जाना-पहचाना और आम जीवन से जुड़ा है।

▶ वैविध्यमय बिम्ब

लेकिन यह भी सत्य है कि कभी-कभी जन-जीवन से उठाये गये बिम्ब भी प्रस्तुतीकरण में इतने जटिल हो गये हैं कि आम मानस की ग्राह्य परिधि से दूर छिटक जाते हैं। उदाहरण के लिए केदारनाथ सिंह की कविता 'टमाटर बेचने वाली बुढ़िया' में। टमाटर के साथ बुढ़िया अपने समस्त इच्छाओं, उम्मीदों को हस्तान्तरित कर रही है, जहाँ नयी दुनिया के स्वप्न छिपे हैं। लेकिन यह अर्थ सहजता से अनावृत्त नहीं हो पाता।

▶ जटिल बिम्ब

3.**प्रतीक-विधानः** जहाँ कवि साधारण भाषा में भावाभिव्यक्ति करने में स्वयं को असमर्थ अनुभव करता है, वहीं प्रतीकात्मक भाषा का आश्रय लेता है। समकालीन कवि ने भी विवेच्य-विषय को अनेक स्थलों पर प्रतीकों के माध्यम से सहजाधिगम्य बनाने का प्रयत्न किया है। वे प्रतीक चुनते समय भी इतने सजग रहे हैं कि सहज-सम्प्रेषणीय परम्परागत प्रतीकों का चयन करते हैं। नवीन प्रतीक भी जन-जीवन से घुले-मिले उपादानों का आश्रय लेकर ही रचे गये हैं। कभी समूची कविता ही प्रतीकात्मक हो उठी है -

सबसे डरती गाय
घास चरती गाय
दूध देती गाय
दूध पीता बच्चा
दूध पीती बिल्ली
दूध पीता साँप
माँ, मुझको डर लगता
मेरा घर
कैसे-कैसे जीवों का घर लगता।

▶ सहज-सम्प्रेषणीय परम्परागत प्रतीकों का चयन

उपर्युक्त पंक्तियों में 'गाय' आम आदमी का प्रतीक बनी है। उसके श्रम का सदैव दोहन होता रहा है। 'दूध' उसके श्रम का प्रतीक बना है। बिल्ली 'चालाक नेता', सौंप 'उद्योगपति धनकुबेरों का', बच्चा 'पारिवारिक सम्बन्धियों' का प्रतीक बन गये हैं। इस प्रकार प्रतीक कथन से समूची कविता ही सहजगम्य हो उठती है। अन्यत्र अनेक स्थलों पर यह भी दृष्टिगत है कि जन-सामान्य के जाने-पहचाने प्रतीक तो लिये गये हैं, लेकिन प्रस्तुतीकरण अत्यन्त दुरूह एवं क्लिष्ट हो गया है लक्ष्मीकान्त वर्मा की 'एक व्यक्ति ही जब समूह बन जाता है' कविता ऐसी ही कविता है बकरी, चारागाह, मेमना सदृश सरल प्रतीक भर कविता को सरल नहीं बना सके हैं।

4. **अलंकार-योजना:** समकालीन कवियों की कृतियों में उपमादि अलंकारों का भरपूर प्रयोग अनूठी विशिष्टता के साथ दृष्टिगत होता है। अधिकांश उपमाएँ नूतन और आम जीवन में रची-बसी हैं। उदाहरणार्थ कतिपय पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं-

i) *'समय के सिलसिले में*
तुम पूस की तरह ठण्डे हो रहे हो।
ii) 'पत्नी का उदास और पीला चेहरा
मुझे आदत-सा आँकता है।

यहाँ जीवन में छायी उपेक्षा और उदासीनता के भाव को पूस के समान ठण्डा, निष्प्राण चेहरे को जीवन में रस-बस गयी आदत के समान कहा गया है। ये उपमाएँ आम आदमी की जुबान, उसकी समझ, उसकी कल्पना की पहुँच की उपमाएँ हैं। कवि की सूझ-बूझ का चमत्कार है कि वह विवेच्य वर्ग की अनुभूतियों को उसकी ही सोच के माध्यम से शब्द देने में सक्षम है। शिल्प सज्जा का एक अन्य उदाहरण अवलोकनीय है-

दाँतों की दुनियाँ में
एक भोला अजनबी मुख आयेगा
और परिवार की गिनी-चुनी रोटी में सहसा पैठ जायेगा।

▶ उपमादि अलंकारों का भरपूर प्रयोग अनूठी विशिष्टता के साथ

'दाँतों की दुनियाँ' एक सर्वथा नवीन प्रयोग है। इस प्रकार स्पष्ट है कि कवि शब्द-प्रयोग, कथन-भंगिमा एवं रचना की रूप-सज्जा में विशेष सजग रहा है। 'कथ्य' और 'कथन' की दूरी बहुत कम हो गयी है। आम आदमी उसकी ही बोलचाल के शब्दों

में साकार है। फलतः वास्तविकता का पुट सहज द्रष्टव्य है लेकिन इस तथ्य को भी नकारा नहीं जा सकता कि कहीं-कहीं जटिल बिम्बों और क्लिष्ट प्रतीकों का प्रयोग अभिव्यक्ति की स्वाभाविकता को छीन लेता है।

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

समकालीन कविता की प्रवृत्तियों का अध्ययन करने से हमें समकालीन कवि एवं कविताओं की जानकारी मिलती है। इस अध्याय में हमने समकालीन कविता की प्रवृत्तियों का अध्ययन किया है। अध्ययन की सुविधा पर नज़र रखते हुए प्रवृत्तियों को दो विभागों में बांटकर ही चर्चा किया गया है - वस्तुगत प्रवृत्तियाँ और शिल्पगत प्रवृत्तियाँ।

वस्तुगत प्रवृत्तियाँ के अंतर्गत आम-आदमी का चित्रण, व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता, मूल्यों के संक्रमण की स्थिति, मानवीय रिश्तों की ऊष्मा, घर-परिवार में तनाव और विघटन, प्रेम एवं यौन चेतना, आदर्श और यथार्थ का द्वन्द्व, जीवन-संघर्ष आदि का चर्चा हुआ है। और शिल्पगत प्रवृत्तियाँ, भाषा की विशेषताएँ यथा- आम आदमी के शब्द और मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ का प्रयोग, और फिर बिम्ब विधान, प्रतीक-विधान, अलंकार-योजना आदि के बारे में संक्षेप में चर्चा किया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. समकालीन कविता की प्रवृत्तियों को अध्ययन की सुविधा केलिए किस तरह बाँटा गया है? वे कौन कौन से हैं?
2. समकालीन कविता की वस्तुगत प्रवृत्तियों पर टिप्पणी लिखिए।
3. समकालीन कविता की शिल्पगत प्रवृत्तियों पर उदाहरण सहित प्रकाश डालिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - डॉ गणपति चंद्र गुप्त
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ नगेन्द्र
3. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन
4. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ प्रतापनारायण टंडन
5. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ बच्चन सिंह
6. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ रमेश चंद्र शर्मा
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ ईश्वर दत्त शील, डॉ आभा रानी
9. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. विशवनाथप्रसाद तिवारी - समकालीन हिन्दी कविता
2. डॉ जगन्नाथ पंडित - समकालीन हिन्दी कविता का परिप्रेक्षय
3. नंदकिशोर नवल - आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 4

समकालीन हिन्दी कविता के प्रमुख कवि - धूमिल, विजयदेव नारायण साही, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, श्रीकांत वर्मा
धूमिल - मोचीराम
लीलाधर जगूड़ी - एक रात की ज़िंदगी
विजयदेवनारायण साही - मेरे साथ कौन कौन आता है
रामदरश मिश्र - मैं तो यहाँ हूँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- कवि धूमिल का परिचय प्राप्त करता है
- कवि विजयदेव नारायण साही से परिचित होता है
- कवि लीलाधर जगूड़ी के बारे में जानकारी हाज़िल करता है
- कवि रामदरश मिश्र से परिचित होता है
- कवि श्रीकांत वर्मा के संबंध में जानता है
- धूमिल द्वारा विरचित 'मोचीराम' कविता समझता है
- लीलाधर जगूड़ी की कविता 'एक रात की ज़िंदगी' का अध्ययन करता है
- विजयदेवनारायण साही कृत 'मेरे साथ कौन कौन आता है' कविता समझता है
- रामदरश मिश्र की 'मैं तो यहाँ हूँ' कविता का अध्ययन करता है

Background / पृष्ठभूमि

इस अध्याय में हम समकालीन कविता के प्रमुख कवियों का परिचय प्राप्त करेंगे। धूमिल, विजयदेव नारायण साही, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, श्रीकांत वर्मा आदि प्रमुख समकालीन कवियों का जन्म एवं जीवन चरित, उनकी कर्मक्षेत्र, उनकी साहित्यिक योगदान एवं साहित्यिक विशेषताएँ आदि पर विस्तार से चर्चा किया जाएगा।

साथ ही प्रमुख समकालीन कविताओं पर भी संक्षिप्त रूप से नजर डाला जाएगा। धूमिल द्वारा विरचित 'मोचीराम', लीलाधर जगूड़ी की कविता 'एक रात की ज़िंदगी', विजयदेवनारायण साही कृत 'मेरे साथ कौन कौन आता है', रामदरश मिश्र की 'मैं तो यहाँ हूँ' आदि कविताओं का अध्ययन किया जाएगा।

Keywords / मुख्य बिन्दु

धूमिल, विजयदेव नारायण साही, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, श्रीकांत वर्मा, मोचीराम, एक रात की ज़िंदगी, मेरे साथ कौन कौन आता है, मैं तो यहाँ हूँ

SGOU

Discussion / चर्चा

सुदामा पांडे 'धूमिल'(1 नवम्बर 1936 - 10 फरवरी 1974)

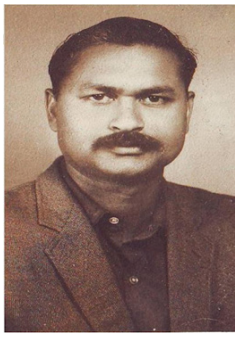

- हिन्दी के एकमात्र किसान कवि

धूमिल हिन्दी के एकमात्र किसान कवि हैं, जिनका जन्म उत्तर प्रदेश के बनारस जिले के खेवली गाँव में हुआ था। पिता शिवनायक पाण्डे थे जिनका शीघ्र देहान्त हो गया। पेशे से औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान आई.टी.आई. में अध्यापक थे। बनारस से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था और उन्हें विशेष प्रिय भी था। बलिया, सहारनपुर और वाराणसी में ही प्रायः रहे। शिक्षा इण्टर तक थी, शेष स्वाध्याय और अनुभव। सहारनपुर से प्रायः दिल्ली जाते थे। दिल्ली शहर उन्हें नापसन्द था। मूलतः वे सातवें दशक के कवि थे। अकविता, आरम्भ, आलोचना, आवेग, सर्वनाम, वाम, पुरुष, लहर आदि पत्रिकाओं में उनकी कविताएँ छपी हैं जो उनके पहले संकलन में नहीं हैं। उनका पहला संग्रह 1972 ई. में 'संसद से सड़क तक' प्रकाशित है जिस पर उन्हें पहला मुक्तिबोध पुरस्कार 1974 में प्राप्त हुआ। इसी पुस्तक पर साहित्य अकादमी पुरस्कार भी मिला। उनके कुछ पत्र और डायरी के अंश भी पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। 'संसद से सड़क तक', 'कल सुनना मुझे' 'सुदामा पांडे का प्रजातंत्र' आदि उनके काव्य संग्रह हैं।

- अपने समय के पाखण्ड का पर्दाफाश किया

धूमिल ने हिन्दी कविता के मुहावरे को बदल कर उसे सार्थक वक्तव्य और मुनासिब कार्रवाई के रूप में प्रयुक्त किया। किसान की तरह से अपनी प्रतिक्रिया को सीधे आक्रोश और तेवर के साथ व्यक्त करना उनकी कविता का गुण है। धूमिल ने अपने समय के पाखण्ड का पर्दाफाश किया और इसे उन्होंने कविता का अनिवार्य गुण माना है। धूमिल की कविता सामाजिक संघर्ष की कविता न होकर सामाजिक संघर्ष ही है। वह एक प्रकार से हथियार भी है और अभिव्यक्ति भी। उनकी कविता में जो कुछ भी है, चाहे वे पेड़-पौधे हों या पशु, सभी आने वाले मौसम का संकेत देते हैं ताकि उससे जूझने की तैयारी की जा सके। उनकी कविता में सूक्तियाँ, वक्तव्य, बातचीत और गाली मिलकर उनके शिल्प को निर्मित करते हैं। वे कविता शब्द के अर्थ और शब्द को काव्य में प्रयुक्त करने वाले महत्त्वपूर्ण कवि हैं जहाँ अर्थ और शब्द का आकार या शरीर भी अपना वजन रखता है।

SGOU

विजयदेव नारायण साही (7 अक्तूबर 1924 - 5 नवंबर 1982)

▶ जन्म 7 अक्टूबर 1924

विजय देव नारायण साही का जन्म 7 अक्टूबर 1924 को उत्तर प्रदेश के बनारस के कबीर चौरा मोहल्ले में हुआ। उनकी हाई स्कूल तक की शिक्षा बनारस में हुई, उसके बाद बड़े भाई के पास इलाहाबाद चले गए। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अँग्रेज़ी और फ़ारसी विषय में स्नातक की परीक्षा पास की, फिर वहीं से अँग्रेज़ी साहित्य में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान के साथ एम.ए. की परीक्षा पास की। उनके अध्यापन-कर्म का आरंभ काशी विद्यापीठ से हुआ, फिर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अँग्रेज़ी विभाग से संबद्ध हो गए।

▶ कवि, आलोचक और समाजवादी आंदोलन के प्रखर बौद्धिक नेता

विजय देव नारायण साही की मूल पहचान एक कवि, आलोचक और समाजवादी आंदोलन के प्रखर बौद्धिक नेता की है। उनकी कविताएँ सर्वप्रथम 'तीसरा सप्तक' में प्रकाशित होकर चर्चा में आईं। इसी पुस्तक में प्रकाशित उनके वक्तव्य से संकेत मिलता है कि पारिवारिक परिस्थितियों को ठंडे बौद्धिक स्तर पर सिद्धांत, मूल्यों एवं प्रतिमानों का जामा पहनाने की प्रवृत्ति से उनके विचारों और अनुभूतियों को काफ़ी सामग्री मिलती रही। आज़ादी के बाद का मोहभंग और किसान-मज़दूरों के बीच सक्रिय कम्यूनिस्ट प्रगतिवादियों की धूर्तताएँ भी उनके उत्प्रेरण का स्रोत रहीं जो रह-रहकर व्यक्त होती रहीं। मज़दूरों की हड़ताल की अगुवाई करने, गोलवलकर को काला झंडा दिखाने और जवाहरलाल नेहरू की मोटर के सामने किसानों का प्रदर्शन करने के लिए तीन बार जेल भी गए।

▶ साहित्य-जगत में 'बहस करता हुआ आदमी' के रूप में प्रख्यात

साहित्य-जगत में 'बहस करता हुआ आदमी' के रूप में प्रख्यात विजयदेव नारायण साही अपनी बहसतलब टिप्पणियों और व्याख्यानों से इसे एक ऊर्जा प्रदान करते रहे। उन्होंने कविताएँ कम लिखी, शेष लेखन के प्रकाशन के प्रति भी अनिच्छुक बने रहे। समाजवादी आंदोलनों में सक्रियता के कारण उन्हें लेखन का अधिक अवकाश भी प्राप्त नहीं हुआ। उनके जीवनकाल में उनका एक ही काव्य-संग्रह 'मछलीघर' (1966) प्रकाशित हुआ था। 5 नवंबर, 1982 को हृदयाघात से उनकी मृत्यु के बाद उनकी विदुषी पत्नी कंचनलता साही ने पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित-अप्रकाशित उनकी बहुतेरी रचनाओं का प्रकाशन कराया।

'मछलीघर' (1966), 'साखी' (1983) और 'संवाद तुमसे' (1990) उनके काव्य-संग्रह हैं 'जबकि आवाज़ हमारी जाएगी' (1995) में उनकी कुछ कविताओं और ग़ज़लों का संकलन किया गया है। उनके व्याख्यानों का संकलन 'साहित्य और साहित्यकार का दायित्व' और उनके समाज-राजनीति विषयक निबंधों का संकलन 'लोकतंत्र की कसौटियाँ' में किया गया हैं। 'जायसी' (1983) उनकी आलोचना-कृति

SGOU

▶ ललित-निबंध, कहानी, नाटक और प्रहसन जैसी विधाओं में भी कार्य किया

है जिसे हिन्दी-समालोचन में अत्यंत प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। अन्य आलोचनात्मक लेखों का संकलन 'छठवाँ दशक' (1987), 'साहित्य क्यों' (1988) और 'वर्धमान और पतनशील' (1991) में किया गया है। उन्होंने ललित-निबंध, कहानी, नाटक और प्रहसन जैसी विधाओं में भी कार्य किया था, जबकि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना एवं अन्य कुछ मित्रों के साथ उन्होंने 'सड़क साहित्य' का भी सृजन किया। 'आलोचना' और 'नई कविता' पत्रिकाओं के संपादन में उनका सहयोग रहा।

जायसी की 'दहाड़ती हुई चुप्पी', कविता में 'लघु मानव' की अवधारणा और समकालीन आलोचन-स्थापनाओं को चुनौती देते रहने के लिए उन्हें विशेष यश प्राप्त है। उन्हें 'कुजात मार्क्सवादी' भी कहा गया है जिन्होंने मार्क्सवाद को भारतीय लोकतंत्र की ज़मीन में प्रतिष्ठित करने के लिए संघर्ष किया।

लीलाधर जगूड़ी (1 जुलाई 1944 -)

▶ 'अनुभव के आकाश में चाँद' (1997) साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित

उत्तराखण्ड के टिहरी, धंगण गाँव में लीलाघर जगूड़ी का जन्म हुआ। ग्यारह वर्ष की अवस्था में घर से भागकर अनेक शहरों और प्रान्तों में कई प्रकार की जीविकाएँ करते हुए शालाबद्ध शिक्षा के अनियमित क्रम के बाद हिन्दी साहित्य में एम.ए.। 1959 में परिवार उत्तरकाशी जा बसा। 1961-62 में गढ़वाल रेजीमेंट में रंगरूट बने। लिखने-पढ़ने की उत्कट चाह के कारण तत्कालीन रक्षामंत्री को मुक्ति के लिए प्रार्थना पत्र भेजा, फलतः छुटकारा। 1966 से शासकीय विद्यालयों में शिक्षण कार्य। उत्तराखण्ड के शिक्षक आन्दोलन में पूरी शक्ति से सक्रिय। 'शंखमुखी शिखरों पर' (1964), 'नाटक जारी है' (1970), 'इस यात्रा में' (1973), 'रात अब भी मौजूद है' (1975), 'बची हुई पृथ्वी' (1977), 'घबराए हुए शब्द' (1981), 'भय भी शक्ति देता है' (1991) 'अनुभव के आकाश में चाँद' (1994) तथा 'ईश्वर की अध्यक्षता में (1999) काव्य-संग्रह। 'महाकाव्य के बिना' (1995) लम्बी कविताओं का संग्रह। 'अनुभव के आकाश में चाँद' (1997) साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित।

लीलाधर जगूड़ी वर्तमान हिन्दी कविता के अमिट हस्ताक्षर हैं। पिछले चार दशकों से अपने काव्य-वैविध्य, भाषिक प्रयोगशीलता के कारण जगूड़ी की कविता हमेशा अपने समय में उपस्थित रही है और उसमें समकालीनता का इतिहास दर्ज होता दिखता है। समय और समकालीन, प्रकृति और बाज़ार, मिथक और प्रौद्योगिकी, दृश्य और अदृश्य, पृथ्वी और उसमें मौजूद कीड़े तक का अस्तित्व उनकी कविता में परस्पर आते-जाते, हस्तक्षेप करते, खलबली मचाते नज़र आते हैं। जगूड़ी की कविताओं में समकालीन सन्दर्भों एवं महत्वपूर्ण घटनाओं की सांकेतिक अभिव्यक्ति हैं। उनकी कविताएँ सामाजिक पीड़ा-बोध, व्यवस्थाजन्य विसंगति बोध, आज़ादी, लोकतंत्र, भ्रष्टाचार और राजनीतिक

यथार्थ की कविताएँ हैं।-जगूड़ी की समकालीन कविता को पढ़ते हुए पाठक जीवन की एक नई विपुलता का इतिवृत्त पाने के साथ-साथ आधुनिक बाजार और वैश्वीकरण से पैदा हुए अवरोध, अनुरोध और विरोध की प्रामाणिक आवाज भी सुन पायेंगे। निरंतर होते जा रहे संसार के ताप से पके हुए आत्मस्थ सौन्दर्य की ये कविताएँ स्मृति, उपस्थिति और संभाव्यता के बीच सहज आवा-जाही करती हैं। इन कविताओं में अनुभव का आकाश एक साथ ऊँचा और गहरा, विस्तृत और सघन हुआ है। जगूड़ी की कविताएँ हमें हिन्दी कविता का एक नया व्यक्तित्व दिखाती हैं। इसकी वजह कथ्य के अलावा इनके उस शिल्प की विविधता में भी है जो अत्यंत संवेदनशील भाषा और जोखिम उठाती प्रयोगशीलता से भरी हुई।

रामदरश मिश्र (1924 ई.)

नई कविता के एक 'सशक्त हस्ताक्षर' डॉ. रामदरश मिश्र उन कवियों में से एक हैं जिन्होंने प्रगतिवादी या जनवादी या साम्यवादी आवाज़ को प्रयोगवादी साज़ के साथ पेश किया। शायद इसी झोंक में वे पूर्णविराम पर 'फुलस्टॉप' को वरीयता देते हैं! 'आधुनिकता' की 'साधना' का इससे बड़ा 'प्रतीक' और क्या हो सकता है! जब कॉमा, इनवर्टेड कॉमा, सेमोकोलन, कोलन, प्रश्नवाचक, विस्मयादिबोधक सारे चिह्न विदेशी, तब पूर्णविराम देशी या पारंपरिक क्यों !!! वे कहानीकार, उपन्यासकार एवं आलोचक भी हैं किंतु उनका कवि-रूप ही विशेष उल्लेख्य है। उन्होंने नवगीत भी बढ़िया रचे हैं। श्री राजेन्द्रप्रसाद सिंह संपादित 'नवगीत सप्तदशक' (पूर्वाब्द) में उनकी प्रथम-प्रतिष्ठा ठीक-सी लगती है। एक सुशिक्षित प्राध्यापक होने के कारण भी उनकी कविता का बिंबविधान विशेष विशद बन पड़ा है। गोरखपुर जनपद से जुड़े और काशी में पढ़े डॉ. रामदरश मिश्र का साम्यवाद ढूँठ-छाप कैसे हो सकता है? दिल्ली की ठसक में रहते भी उनका जनवाद तरल है। उनकी अनुभूति में गाँव की सोंधी माटी महकती है, उनकी अभिव्यक्ति में गाँव के नरम और लोचदार शब्द एक अनूठी कला की सृष्टि कर देते हैं। उनकी कविता में शोषण-प्रपीड़न में आकंठ निमग्न स्वातन्त्र्योत्तर व्यवस्था के प्रति आक्रोश तो नहीं है किंतु विरोध अवश्य है। शक्ति का अभाव उनके सृजन का प्रमुख दौर्बल्य है। किंतु वे अपनी तरल कला से प्रभावित करते हैं :

झट-झट-झट पत्ते झरने लगे
भर आया दर्द से हिया
बुझ-बुझ कर खेतों के रंग बिखरने लगे।
काँप उठा अनगिन छायाओं से सूना जल
विखर गए तिनको-से बँधे हुए टूटे पल

▶ प्रगतिवादी या जनवादी या साम्यवादी आवाज़ को प्रयोगवादी साज़ के साथ पेश किया

किसने फिर स्वप्न छू दिया
पत्थर से जमें प्राण फिर-फिर डरने लगे।
शिखर-शिखर नभ-गिरि का टूट उड़ा जाता है
बाँसों से आज पवन हाथ छुड़ा जाता है
खींच रहीं दीठि दूरियाँ
उजड़ी डाली-डाली पर स्वर फिरने लगे।

श्रीकांत वर्मा

▶ साम्यवाद की ओर रुझान

'मगध' के कवि एवं 'ज़िरह' के आलोचक श्रीकांत वर्मा (विलासपुर, मध्य प्रदेश, कार्यक्षेत्र दिल्ली) एक नेता और वह भी शासकदल नेता होने के कारण अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हुए। उनका रुझान साम्यवाद की ओर था जिससे लाभ भी हुआ क्योंकि साम्यवादी भाई (तत्त्वतः 'कॉमरेड') साहित्य पर छाए रहे हैं, किंतु लाभ-ही-लाभ काँग्रेसी होने में था अतः भारत और भारतीयता में उन्हें इंदिरा, संजय, राजीव गांधी-त्रयी के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा न लगता था। वे दो बार राज्य सभा सदस्य रहे, काँग्रेस के एक महामंत्री भी बने और इसी पद पर से बेहद बेमुरौवती से निकाले जाने के सदमे में ही चल बसे। 'हिन्दी के काँग्रेसी साहित्यकार' शोध का रोचक विषय है, जिसमें डॉ. राजेंद्रप्रसाद, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, मैथिलीशरण गुप्त, दिनकर, सेठ गोविंददास, नवीन इत्यादि प्रथम श्रेणी के व्यक्ति होंगे तथा बनारसीदास चतुर्वेदी, बच्चन इत्यादि द्वितीय श्रेणी के-अंततः सुधाकर पाण्डेय, रत्नाकर पाण्डेय, श्रीकांत वर्मा, बेकल उत्साही इत्यादि आएंगे।

संयोगात श्रीकांत वर्मा को प्राचीन में भी रुचि थी और सारे प्राचीन को एकबारगी धता बताने का राहुली जीवट उनमे न था जो भारत में प्रतिष्ठित बुद्धिजीवी बनने की सबसे बड़ी शर्त हैं, 'बारहबानी' खरा टकसाली साम्यवादी बनने के लिए अपरिहार्य है अतः कई 'सच्चे प्रगतिवादी' उन्हें 'सामंतवादी' भी कह मारते थे। जब श्रेष्ठतर कवि मुक्तिबोध तक को 'बूर्ज़वा' घोषित करने वाले 'खरे क्रांतिकारी' मिल जाते हैं तब श्रीकांत वर्मा की बात ही क्या! आलोचक-रूप में तुलसी पर प्रहार के फ़ैशन से श्रीकांत वर्मा को थोड़ा-सा सामयिक लाभ तो हुआ, पर इस दिशा में उनकी कोई पहचान न बन सकी। हाँ, दलगत एवं जातिगत लाभ उन्हें लगातार मिले और मरने के बाद भी उनके नाम पर पुरस्कार चलाया गया जो उनकी 'क्रांतिकारी' एवं 'प्रगतिशील' विचारधारा के अनुरूप लेखन पर दिया जाता है।

SGOU

कविता की बानगी पेश है:

1.

तब सुनो या मत सुनो
हस्तिनापुर के निवासियो ! होशियार
हस्तिनापुर में तुम्हारा एक शत्रु पल रहा है,
विचार-
और याद रखो
आजकल महामारी की तरह फैल जाता है
विचार।

2.

कपिलवस्तु में वृद्ध नहीं है
वृद्ध होने का भय है
कपिलवस्तु में कोई वृद्ध न हो
युवा होने का इतना ही आशय है।
मथुरा और अवंती
स्मृतियाँ नहीं हैं
और अगर हैं, भी
क्या कोई मानेगा

3.

मथुरा और अवंती
स्मृतियाँ नहीं हैं
और अगर हैं, भी
क्या कोई मानेगा
मथुरा और अवंती
केवल स्मृतियाँ हैं।

▶ भाषा एवं शैली न क्लिष्ट है न कृत्रिम

इसमें संदेह नहीं कि श्रीकांत वर्मा के पास विचार था और वे उसे प्रभावी शैली में व्यक्त कर सकते थे। उनके कवि के यहाँ एक व्यापक जीवन मिल जाता है और यह एक उपलब्धि है। उनकी भाषा एवं शैली न क्लिष्ट है न कृत्रिम; और इतने पर भी असर डालती है।

धूमिल - मोचीराम

राँपी से उठी हुई आँखों ने मुझे
क्षण-भर टटोला
और फिर
जैसे पतियाये हुये स्वर में
वह हँसते हुये बोला-

बाबूजी सच कहूँ-मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिये,हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिये खड़ा है।
और असल बात तो यह है
कि वह चाहे जो है
जैसा है, जहाँ कहीं है
आजकल
कोई आदमी जूते की नाप से
बाहर नहीं है
फिर भी मुझे ख्याल है रहता है
कि पेशेवर हाथों और फटे जूतों के बीच
कहीं न कहीं एक आदमी है
जिस पर टाँके पड़ते हैं,
जो जूते से झाँकती हुई अँगुली की चोट छाती पर
हथौड़े की तरह सहता है।
यहाँ तरह-तरह के जूते आते हैं
और आदमी की अलग-अलग 'नवैयत'
बतलाते हैं
सबकी अपनी-अपनी शक्ल है
अपनी-अपनी शैली है
मसलन एक जूता है:
जूता क्या है-चकतियों की थैली है
इसे एक आदमी पहनता है
जिसे चेचक ने चुग लिया है
उस पर उम्मीद को तरह देती हुई हँसी है
जैसे 'टेलीफ़ून' के खम्भे पर
कोई पतंग फँसी है
और खड़खड़ा रही है।
'बाबूजी! इस पर पैसा क्यों फूँकते हो?'
मैं कहना चाहता हूँ
मगर मेरी आवाज़ लड़खड़ा रही है
मैं महसूस करता हूँ-भीतर से
एक आवाज़ आती है-'कैसे आदमी हो

SGOU

अपनी जाति पर थूकते हो।'
आप यकीन करें, उस समय
मैं चकतियों की जगह आँखें टाँकता हूँ
और पेशे में पड़े हुये आदमी को
बड़ी मुश्किल से निबाहता हूँ।
एक जूता और है जिससे पैर को
'नाँघकर' एक आदमी निकलता है
सैर को
न वह अक्लमन्द है
न वक्त का पाबन्द है
उसकी आँखों में लालच है
हाथों में घड़ी है
उसे जाना कहीं नहीं है
मगर चेहरे पर
बड़ी हड़बड़ी है
वह कोई बनिया है
या बिसाती है
मगर रोब ऐसा कि हिटलर का नाती है
'इशे बाँध्धो, उशे काट्टो, हियाँ ठोक्को, वहाँ पीट्टो
घिस्सा दो, अइशा चमकाओ, जूत्ते को ऐना बनाओ
ओफ्फ़! बड़ी गर्मी है'
स्माल से हवा करता है,
मौसम के नाम पर बिसूरता है
सड़क पर 'आतियों-जातियों' को
बानर की तरह घूरता है
गरज़ यह कि घण्टे भर खटवाता है
मगर नामा देते वक्त
साफ 'नट' जाता है
शरीफों को लूटते हो' वह गुर्राता है
और कुछ सिक्के फेंककर
आगे बढ़ जाता है
अचानक चिंहुककर सड़क से उछलता है
और पटरी पर चढ़ जाता है
चोट जब पेशे पर पड़ती है
तो कहीं-न-कहीं एक चोर कील
दबी रह जाती है

SGOU

जो मौका पाकर उभरती है
और अँगुली में गड़ती है।
मगर इसका मतलब यह नहीं है
कि मुझे कोई ग़लतफ़हमी है
मुझे हर वक्त यह खयाल रहता है कि जूते
और पेशे के बीच
कहीं-न-कहीं एक अदद आदमी है
जिस पर टाँके पड़ते हैं
जो जूते से झाँकती हुई अँगुली की चोट
छाती पर
हथौड़े की तरह सहता है
और बाबूजी! असल बात तो यह है कि ज़िन्दा रहने के पीछे
अगर सही तर्क नहीं है
तो रामनामी बेंचकर या रण्डियों की
दलाली करके रोज़ी कमाने में
कोई फर्क नहीं है
और यही वह जगह है जहाँ हर आदमी
अपने पेशे से छूटकर
भीड़ का टमकता हुआ हिस्सा बन जाता है
सभी लोगों की तरह
भाषा उसे काटती है
मौसम सताता है
अब आप इस बसन्त को ही लो,
यह दिन को ताँत की तरह तानता है
पेड़ों पर लाल-लाल पत्तों के हजारों सुखतल्ले
धूप में, सीझने के लिये लटकाता है
सच कहता हूँ-उस समय
राँपी की मूठ को हाथ में सँभालना
मुश्किल हो जाता है
आँख कहीं जाती है
हाथ कहीं जाता है
मन किसी झुँझलाये हुये बच्चे-सा
काम पर आने से बार-बार इन्कार करता है
लगता है कि चमड़े की शराफ़त के पीछे
कोई जंगल है जो आदमी पर
पेड़ से वार करता है
और यह चौकने की नहीं,सोचने की बात है

मगर जो ज़िन्दगी को किताब से नापता है
जो असलियत और अनुभव के बीच
खून के किसी कमजात मौके पर कायर है
वह बड़ी आसानी से कह सकता है
कि यार! तू मोची नहीं ,शायर है
असल में वह एक दिलचस्प ग़लतफ़हमी का
शिकार है
जो वह सोचता कि पेशा एक जाति है
और भाषा पर
आदमी का नहीं,किसी जाति का अधिकार है
जबकि असलियत है यह है कि आग
सबको जलाती है सच्चाई
सबसे होकर गुज़रती है
कुछ हैं जिन्हें शब्द मिल चुके हैं
कुछ हैं जो अक्षरों के आगे अन्धे हैं
वे हर अन्याय को चुपचाप सहते हैं
और पेट की आग से डरते हैं
जबकि मैं जानता हूँ कि 'इन्कार से भरी हुई एक चीख़'
और 'एक समझदार चुप'
दोनों का मतलब एक है-
भविष्य गढ़ने में, 'चुप' और 'चीख'
अपनी-अपनी जगह एक ही किस्म से
अपना-अपना फ़र्ज अदा करते हैं।

अकविता आंदोलन के प्रमुख कवि सुदामा पाडेय 'धूमिल' अपनी प्रतिभा के बल पर साहित्य की ज़मीन तैयार करने वाले तार्किक एवं निर्भीक कवि हैं। धूमिल का काव्य संसार उनका स्वयं का भोगा हुआ और खुली आंखों से देखा हुआ यथार्थ है। इसलिए उनकी कविता में एक अलग प्रकार की आक्रामकता है। धूमिल की कविता आम आदमी की कथा-व्यथा से जुड़ी जनवादी कविता है। उन्होंने समाज की विसंगत, विकृत एवं विद्रूप स्थितियों का बारीक निरीक्षण कर उन पर भरपूर व्यंग्य-बाण छोड़े हैं। कविता लिखते समय उनकी दृष्टि कलापक्ष के बजाय अनुभूति की सच्ची, मार्मिक अभिव्यक्ति पर रही है। उन्होंने आम आदमी की भाषा के शब्दों में अणु-विस्फोट की ताकत भरकर उन्हें कविता में स्थान दिया है। देश में व्याप्त अराजकता से व्यथित कवि-मन के आक्रोश ने कविता में विकट व्यंग्य और आक्रोश का रूप धारण कर लिया है।

▶ आम आदमी की कथा-व्यथा से जुड़ी जनवादी कविता है

उनके तीन कविता संग्रह हैं- 'संसद से सड़क तक' (1972), 'कल सुनना मुझे' (1979), 'सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र' (1983)। इनमें अन्तिम दो संग्रह उनकी मृत्यु

के बाद प्रकाशित हुए। 'कल सुनना मुझे' काव्य संग्रह के लिये उन्हें 1979 का साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 'मोचीराम' नामक लंबी कविता उनके पहले काव्यसंग्रह 'संसद से सड़क तक' में संकलित है। इस कविता के मोचीराम की निगाह में हर आदमी एक जोड़ी जूता है। अर्थात् उसकी दृष्टि में सभी लोग समान हैं। मोचीराम आम जन का प्रतिनिधि है। समाज के निचले एवं शोषित हिस्से पर उसे पूरा विश्वास है।

▶ तीन कविता संग्रह

हाथों में रांपी पकड़े जूती गाँठने वाले मोचीराम की नज़रें जूते पर हैं। वह जूतों को देखने का अभ्यस्त है। चेहरे से वह आदमी को नहीं पहचानता, जूतों से पहचानता है। उसके लिए आदमी की पहचान बहुत स्पष्ट है- एक जोड़ी जूता जो उसके पास मरम्मत के लिए आता है। मोचीराम अपना काम पूरी ईमानदारी, निष्ठा और आत्मीयता के साथ करनेवाला आम आदमी है। वह मेहनतकश सर्वहारा है जो 'रोज़ कुआँ खोदकर पानी पीता है।' वह अपने व्यवसाय को सबसे बढ़कर मानता है। 'कर्म ही पूजा' के सिद्धान्त में वह पूरा यकीन रखता है। वह अपने ग्राहकों को समदृष्टि से देखता है। वह जाति या वर्ग के आधार पर किसी को बड़ा या छोटा नहीं मानता। लेखक जूतों की मरम्मत के बहाने समाज और व्यवस्था की मरम्मत करना चाहता है। वह मानता है कि जिस प्रकार हरेक जोड़ी जूते को मरम्मत की ज़रूरत है उसी प्रकार हर आदमी को भी सुधार की ज़रूरत है।

▶ मोचीराम की नज़रें जूते पर हैं

मोचीराम मानता है कि आज आदमी छोटा होता जा रहा है। वह अपनी विशिष्टता खो रहा है। आज जूता आदमी की पहचान बन गया है। जूता आदमी और आदमी के बीच वर्गभेद पैदा करता है। किन्तु मोचीराम इस वर्गभेद को अस्वीकार करके एक नए समाजवाद की प्रस्तावना करता है। वह व्यवस्था में मौजूद अमानवीयकरण के खिलाफ इन्सानियत को बचाए रखने की वकालत करता है। वह मानता है कि व्यवस्था या जूते को ठीक करने की प्रक्रिया में सबसे ज़्यादा चोट आम आदमी को सहनी पड़ती है। वह पूरी संवदेनशीलता के साथ आम आदमी के दर्द को सम्प्रेषित करता है। सम्बोधन शैली में लिखी गई इस कविता में कवि धूमिल मोचीराम के माध्यम से समाज के पूरे ढाँचे की जाँच-पड़ताल करते हैं। समाज में मौजूद गैर-बराबरी और नाइन्साफी को उभारकर उस पर चोट करते हैं। वे बताते हैं कि अलग-अलग हैसियत का आदमी, अलग-अलग किस्म के जूते पहनते हैं। एक तरफ श्रमजीवी वर्ग है, जिसके जूते में चकतियाँ-ही-चकतियाँ हैं। घनघोर अभाव और बेबसी ने उसके चेहरे पर झुर्रियों का जाल बुन दिया है। इस अथाह पीड़ा के बावजूद वह अपनी उम्मीद खत्म नहीं होने देता। अमीर आदमी का जूता पैर को सजाने-सँवारने के काम आता है। वह जमकर सैर-सपाट और मौज-मस्ती करता है। न वह अक्लमन्द है, न वक्त का पाबन्द है, फिर भी दुनिया की आँखों में बेहद सफल और सम्पन्न है। उसके अन्दर मानवीयता की जगह व्यापारी बुद्धि है जो हर चीज को नफा-नुकसान के तराजू पर तौलता है। यह लालची और लोलुप आदमी मोचीराम से घण्टे भर काम करवाकर भी उसका सही मेहनताना नहीं

▶ आज जूता आदमी की पहचान बन गया है

SGOU

देता क्योंकि शोषण उसकी धमनियों में बहता है। यहाँ कवि धूमिल व्यवस्था की उस विडम्बना को उभारना चाहते हैं जिसमें हर गरीब आदमी बदमाश और अमीर आदमी शरीफ माना जाता है।

श्रमजीवी और 'परजीवी' को आमने-सामने खड़ा करके धूमिल व्यवस्था की उस विसंगति को रेखांकित करते हैं जो सही आदमी को असफल और अभावग्रस्त बनाती है और गलत आदमी को सफल और सम्पन्न बनाती है। धूमिल इस विसंगति का सख्त विरोध करते हैं। मोचीराम के माध्यम से मेहनतकश आदमी में अन्तर्निहित मानवीयता और संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करते हुए धूमिल बताते हैं कि व्यवस्था के विरोधाभास पीड़ाजनक हैं। मोचीराम अपने निजी हित से अलग हटकर व्यापक मानवीय दृष्टि से घटनाओं, व्यक्तियों और व्यवस्था का विश्लेषण करता है। व्यवस्था में मौजूद अन्याय, असमानता और अराजकता लगातार उसकी छाती पर हथौड़े की तरह चोट करते हैं। वह मानता है कि अगर व्यक्ति का जीवन प्रामाणिक नहीं है तो धरम-करम और रण्डियों की दलाली में कोई खास फर्क नहीं है।

▶ व्यवस्था में मौजूद अन्याय, असमानता और अराजकता लगातार उसकी छाती पर हथौड़े की तरह चोट करते हैं

कवि बुद्धिजीवी वर्ग की कायरता और अवसरवादिता पर भी चोट करता है। वह मानता है कि बुद्धिजीवी वर्ग जनता के गुस्से को गुमराह करता है। उनके अनुसार कोई भी काम पर किसी भी जाति का विशेषाधिकार नहीं है। वह मानता है कि कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता। हर इन्सान के अन्दर सपने देखने और उन्हें साकार करने की क्षमता मौजूद होती है। हर आदमी के विरोध का तरीका, साधन और शब्दावली अलग-अलग होती है। कुछ ऐसे होते हैं, जिन्हें व्यवस्था की चालाकियों का अन्दाज़ा नहीं है और कुछ रोजमर्रा की ज़रूरतों के पीछे हैं। कुछ ऐसे होते हैं जो सीधे-सीधे व्यवस्था का विरोध करते हैं। कवि धूमिल भविष्य गढ़ने में 'इनकार से भरी हुई एक चीख' और 'एक समझदार चुप' दोनों को समान मानते हैं। शोषण तन्त्र का मौन प्रतिकार भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है क्योंकि यह मौन, मज़बूरी और बेचारगी का परिणाम होता है। समाज के एक हिस्से में व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह की चेतना जाग्रत हो जाती है तो दूसरे हिस्से में भूख से बेबसी और चुप्पी पैदा होती है। दुनिया की सबसे बड़ी सच्चाई पेट की भूख है। इसके बाद ही विद्रोह आता है। कवि धूमिल के मन में उस व्यवस्था के प्रति तीव्र असन्तोष, घृणा और गुस्सा है जिसने आदमी को पेट के सवाल तक सीमित करके गूँगा-बहरा बना दिया है।

▶ बुद्धिजीवी वर्ग की कायरता और अवसरवादिता पर भी चोट करता है

प्रस्तुत कविता में मोची सामन्तवादी, पूँजीवादी, साम्राज्यवादी व्यवस्था का विरोध करता है। इस व्यवस्था ने आम आदमी का खून चूस लिया है और खुद को समृद्ध बना दिया है। मोची इस शोषित तथा दमनकारी व्यवस्था का विरोध करता है। एक व्यवस्था में समस्त जनता सुखी एवं समृद्ध रहती है तो दूसरी व्यवस्था में आम जनता अनेक प्रकार की समस्याओं और संघर्षों का सामना करती है। 'मोचीराम' कविता व्यवस्था का तीव्र विरोध करने वाली सशक्त कविता है। कविता का मोची सामान्य जनता की भावनाओं, आकांक्षाओं, दुःख, दर्द, पीड़ाओं को समझता है और इनके विरुद्ध क्रान्ति की प्रेरणा भी देता है।

▶ सामन्तवादी, पूँजीवादी, साम्राज्यवादी व्यवस्था का विरोध

SGOU

लीलाधर जगूड़ी - एक रात की ज़िंदगी

एक रात की ज़िन्दगी भी चार दिन की ज़िन्दगी से कम नहीं
आधी दुनिया में भूख, आधी दुनिया में नींद बाँट देती है
गोलार्ध पर गुफा में आदिम घर-सी छायी हुई लंबी रात

जिसकी तारों से जड़ी पारदर्शी छत पर
समुद्रों जैसी गहराई और पहाड़ों जैसी ऊँचाई में
कई आधे-पूरे चाँद खिले हैं एक रात में कई तरह से

एक रात पहाड़ों से उतरती है और समुद्र तैर जाती है
एक रात तारों से उतरती है और ओस बन जाती है
एक रात आकाश से उतरती है और पाताल में समा जाती है
रात में समय की एक तारीख आती है और दिन भर नहीं बीतती

एक रात आँखों से उतरती है मन में
एक रात भीतर से बाहर फैल जाती है
दिन के उजाले में भी अपना सफर तय करती है
कई तरह से आती है जो बीतती नहीं है रातों में फैली हुई एक रात
हर रात समान नहीं होती
पर कोमल और समतल रात सबको समान देखती है अपनी अदृश्यता में
रात के अपारदर्शी शरीर पर पड़े पारदर्शी ओढ़ने से
लाखों सितारों से टपकती है एक-एक बूँद ओस
जो टकराकर वापस जाते दूर के मुसाफिर उजालों से झिलमिलाती है

रात की नाभि से सटी भूरे रंग की एक अदृश्य चिड़िया
नीले रंग की आभा में डुबकी लगाती उड़ जाती है
नारंगी उड़ान छोड़ती हुई

घनी-घनी रात में भी अधमरे हरे से पीले संकेत आते हैं
रात को भी रंग जीवित रहते हैं
वह अपने रंग में दूसरे रंगों को भी जीवित रहने देती है
यथास्थान गतिमय और जागे हुए

कीड़ों के बीच कीड़ों के क्या-क्या नाम हैं पता नहीं
पर कुछ रात के कीड़े दिन खा जाते हैं रात भर में
निकल पड़ते हैं नीले, पीले और काले में भी काले

SGOU

सफेद धारियों वाले पाँच तरह के भूरे और तीन तरह के लाल कीड़े
उनका अरुणाभ आधी रात को सूर्य जैसा उदित होता है
पूर्णाभ रात के ढेर में अपनी उद्विग्नता के साथ
जिसके सम्मान में
रात एक काई लगे सांवले आडंबरहीन स्तूप में बदल जाती है
पृथ्वी को अपने होने से पहले रातें नसीब नहीं थीं
पृथ्वी होती ही रात के लिए है

इस तरह रात कई तरह से आती-जाती है पृथ्वी पर
कभी चाँदनी में खिले हुए गेंदे की तरह
कभी खेतों में फैले हुए यूरिया की तरह
कभी गोबर के ढेर की तरह आकाश को छूकर
उसे भी उर्वर बना देती हुई

दिन के पहले सिरे पर देखो तो रात है दूसरे सिरे पर भी रात
दो रातों के बीच एक दिन फल की तरह पक रहा है
दो रातों के बीच एक दिन पराग की तरह उड़ जाता है
दिन में भी रात की परछाईं हमारे साथ रहती है
खिले हुए हरे पत्तों के बीच रात छिपी हुई है
दिन भर पीछा करती हैं तारों भरी अंधेरी रात

हर दिन की ज़िन्दगी में रात संपुट की तरह है
चार दिन की ज़िन्दगी में कमाल कर देती हैं पाँच रातें।

▶ कविता संग्रह 'शंखमुखी शिखरों पर' पर संकलित

हिन्दी साहित्य के जाने-माने लेखक लीलाधर जगूड़ी की चर्चित कविता है एक रात की ज़िंदगी'। यह कविता उनकी कविता संग्रह 'शंखमुखी शिखरों पर' पर संकलित है। इस कविता में कवि, जीवन के यथार्थ को, विशेष कर रात के समय के अनुभवों को एक अनोखे ढंग से प्रस्तुत करती है। कवि एक रात के दौरान होने वाली घटनाओं और भावनाओं का वर्णन किया है। इस कविता में कवि ने रात के अंधेरे में छिपी हुई जीवन की सच्चाइयों को उजागर किया है। यह कविता 'रात' की बहुआयामी प्रकृति, उसके गहरे प्रतीकात्मक अर्थों और जीवन पर उसके प्रभावों का एक गहन चिंतन है। यह रात को केवल समय के एक हिस्से के रूप में नहीं, बल्कि एक जीवंत, रहस्यमयी और अस्तित्वगत शक्ति के रूप में प्रस्तुत करती है।

कविता की शुरुआती पंक्तियों में कवि कहता है कि, एक रात की ज़िंदगी चार दिनों की ज़िंदगी से कम नहीं है। अर्थात एक रात का अनुभव चार दिनों की अनुभवों के समान है। एक रात आधी दुनिया में भूख और आधी दुनिया में नींद बांट देती है।

▶ एक रात की ज़िंदगी चार दिनों की ज़िंदगी से कम नहीं है

अर्थात दुनिया के आधे हिस्से में जब रात होगी, नींद होगी तभी दूसरे आधे हिस्से में सुबह - दोपहर होगी, भूख होगी। रात गोलार्थ पर गुफा में आदिम घर सी छाई हुई है, और उस घर की तारों से जड़ी हुई पारदर्शी छत है और उसमें समुद्रों जैसी गहराईयों और पहाड़ों जैसी ऊंचाइयों पर एक ही रात में कई तरह से कई आधे पूरे चांद खिलते हैं।

▶ रात में ही नया तारीख आता है

एक रात पहाड़ों से उतरकर समुद्र तैर जाती है, एक तारों से उतरकर ओस बन जाती है। एक रात आकाश से उतरकर पाताल में समा जाती है अर्थात प्रकृति में हर चीज जहाँ से शुरू होना होता है शुरू होता है और अंजाम तक पहुंचता है। रात में समय की एक तारीख आती है और दिन भर नहीं बीतता है और अगली रात में ही नया तारीख आता है।

▶ रात की अपारदर्शी शरीर पर पड़े पारदर्शी ओढ़ने

एक रात आंखों में से मन में उतरती है एक रात भीतर से बाहर फैल जाती है। यह रात दिन के उजाले में भी अपना सफर तय करता है। रात कई तरह से आती तो है मगर बीतती नहीं है। हर रात समान नहीं होती लेकिन कोमल और समतल रात सबको अपनी अदृश्यता में समान दृष्टि से देखती है। रात की इस अपारदर्शी शरीर पर पड़े पारदर्शी ओढ़ने से अर्थात् आकाश से लाखों सितारों से एक-एक बूंद ओस टकराकर झिलमिलाते हैं।

▶ रात की नाभि से ही उषा रूपी पक्षी अपनी नारंगी उड़ान भरती है

रात की नाभि से सटी भूरे रंग की अदृश्य चिड़िया नीले रंग की आभा में डुबकी लगाती हुई उड़ जाती है और जाने पर नारंगी उड़ान छोड़ती है। अर्थात रात की नाभि से ही उषा रूपी पक्षी अपनी नारंगी उड़ान भरती है। कवि आगे कहता है की घनी घनी रात में भी अधमरे हरे से पीले संगीत आते हैं। रंग रात को भी जीवित रखते हैं और दूसरी रंगों को भी जीवित रहने देती है।

▶ पृथ्वी होती ही रात के लिए है

कवि कहता है की कीड़ों के बीच कीड़ों का क्या नाम है यह तो पता नहीं लेकिन कुछ कीड़े दिन खा जाते हैं। रात भर में नीले, पीले और काले में भी काले सफेद धारियों वाले पाँच तरह के भूरे और तीन तरह के लाल कीड़े निकल पड़ते हैं। उनका अरुणाभ (सूर्योदय जैसा लालिमा) आधी रात को सूर्य जैसा उदित होता है। पूर्णाभ (पूर्ण चमक) रात के ढेर में अपनी उद्विग्नता (बेचैनी) के साथ आती है, जिसके सम्मान में रात एक काई लगे सांवले आडंबरहीन स्तूप में बदल जाती है। पृथ्वी को अपने होने से पहले रातें नसीब नहीं थीं, पृथ्वी होती ही रात के लिए है।

इस तरह रात पृथ्वी पर कई तरह से आती-जाती है: कभी चाँदनी में खिले हुए गेंदों की तरह, कभी खेतों में फैले हुए यूरिया की तरह, कभी गोबर के ढेर की तरह, आकाश को छूकर उसे भी उर्वर बना देती हुई।

▶ दिन के पहले सिरे और दूसरे सिरे पर रात है

दिन के पहले सिरे पर देखो तो रात है, दूसरे सिरे पर भी रात। दो रातों के बीच एक दिन फल की तरह पक रहा है। दो रातों के बीच एक दिन पराग की तरह उड़ जाता है। दिन में भी रात की परछाईं हमारे साथ रहती है। खिले हुए हरे पत्तों के बीच रात छिपी हुई है, दिन भर तारों भरी अंधेरी रात पीछा करती है।

हर दिन की ज़िंदगी में रात संपुट (दोहरी परत) की तरह है। चार दिन की ज़िंदगी में पाँच रातें कमाल कर देती हैं।

आंतरिक अर्थ

कविता रात को एक अत्यंत जटिल और बहुस्तरीय अवधारणा के रूप में प्रस्तुत करती है, जो केवल अंधकार का समय नहीं, बल्कि जीवन, मृत्यु, रहस्य, और अस्तित्व के गहरे पहलुओं का प्रतीक है।

▶ गहरे अनुभव और उसकी तीव्रता

1. रात का अस्तित्वगत महत्व: 'एक रात की ज़िंदगी भी चार दिन की ज़िंदगी से कम नहीं' - यह पंक्ति रात के गहरे अनुभव और उसकी तीव्रता को दर्शाती है। रात भौतिक समय से परे एक आध्यात्मिक और भावनात्मक आयाम रखती है। यह न केवल भूख और नींद बाँटती है, बल्कि जीवन के मौलिक द्वंद्वों को भी समाहित करती है।
2. रहस्य और असीम का प्रतीक: 'तारों से जड़ी पारदर्शी छत पर समुद्रों जैसी गहराई और पहाड़ों जैसी ऊँचाई' - यह रात के अनंत विस्तार और उसके भीतर छिपे रहस्यों का वर्णन है। रात ब्रह्मांडीय गहराई और ऊँचाई को समाहित करती है, जहाँ भौतिक और आध्यात्मिक सीमाएँ धुंधली हो जाती हैं।

▶ रात की गतिशीलता, उसकी परिवर्तनीय शक्ति

3. रात का परिवर्तनशील रूप: रात पहाड़ों से उतरकर समुद्र तैरती है, तारों से उतरकर ओस बनती है, आकाश से पाताल में समाती है - ये बिंब रात की गतिशीलता, उसकी परिवर्तनीय शक्ति और हर रूप में उपस्थित रहने की क्षमता को दर्शाते हैं। रात केवल एक निष्क्रिय समय नहीं, बल्कि एक सक्रिय शक्ति है जो विभिन्न रूपों में प्रकट होती है।
4. मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक आयाम: 'एक रात आँखों से उतरती है मन में एक रात भीतर से बाहर फैल जाती है' - यह रात के मानवीय चेतना पर पड़ने वाले प्रभाव को दर्शाता है। रात introspective (आत्मनिरीक्षण) और reflective (चिंतनशील) होती है। यह बाहरी दुनिया के शोर से हटकर व्यक्ति को अपने भीतर झाँकने का अवसर देती है, जहाँ भावनाएँ और विचार गहरे होते हैं।

▶ जीवन और मृत्यु के निरंतर चक्र का प्रतीक

5. जीवन और मृत्यु का चक्र: कविता में कीड़ों का ज़िक्र और उनका 'दिन खा जाना' जीवन और मृत्यु के निरंतर चक्र का प्रतीक हो सकता है। रात के भीतर भी जीवन की हलचल है, और यह नए जीवन के उद्भव का समय भी है। 'पृथ्वी होती ही रात के लिए है' यह एक गहरी दार्शनिक पंक्ति है जो सुझाती है कि रात केवल एक खगोलीय घटना नहीं, बल्कि पृथ्वी के अस्तित्व के मूल में है, शायद सृजन और विश्राम का आदिम स्रोत।
6. रंगों का जीवन: 'रात को भी रंग जीवित रहते हैं' - यह अंधकार में भी जीवन और विविधता की उपस्थिति का सुंदर चित्रण है। रात केवल कालापन नहीं है; इसमें सूक्ष्म रंग और जीवन की गति है जो दिन के उजाले में अक्सर अनदेखी रह

SGOU

जाती है। यह सुझाव देता है कि जीवन की पूर्णता को समझने के लिए हमें उसके सभी पहलुओं, यहाँ तक कि उसके 'अंधेरे' पहलुओं को भी स्वीकार करना होगा।

7. रात का उर्वरक स्वभाव: रात को यूरिया या गोबर के ढेर से तुलना करना, जो आकाश को भी उर्वर बना देती है, रात की सृजनात्मक और पोषणकारी शक्ति को दर्शाता है। रात सिर्फ आराम का समय नहीं, बल्कि विचारों, सपनों और नई संभावनाओं को जन्म देने वाली शक्ति है।

▶ विजयदेवनारायण साही - मेरे साथ कौन कौन आता है

8. रात की व्यापकता: 'दिन में भी रात की परछाईं हमारे साथ रहती है' - यह दर्शाता है कि रात केवल भौतिक अंधकार नहीं, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक स्थिति या एक प्रतीकात्मक उपस्थिति है जो दिन के उजाले में भी हमें घेरे रहती है। जीवन के हर पल में रात के कुछ अंश, कुछ रहस्य, कुछ अनकही बातें छिपी होती हैं।

विजयदेवनारायण साही

मेरे साथ कौन आता है?
मैं फिर उन कांतारों की यात्रा करने जा रहा हूँ

जहाँ बरसों में भटक चुका हूँ।
मैं मानता हूँ कि वहाँ मेरे पदचिह्नों के अलावा

कुछ नहीं मिलेगा।
लड़खड़ाते हुए मैंने जिस चट्टान पर हाथ टेका था

वहाँ मेरी ज़ख़्मी उँगलियों की छाप
अभी भी होगी

और वह पगडंडी भी
जो कहीं ले नहीं जाती

सिर्फ़ जिसे हम जानते हैं
उससे परिचय थोड़ा और घना कर देता है।

मेरे साथ कौन आता है?
यह चुनौती नहीं है।

क्योंकि चुनौती की भाषा अब मुझसे बोली नहीं जाती।
मैं इतने दिनों तक निस्तब्ध सोचता रहा हूँ

SGOU

कि मेरी आवाज़ भारी हो गई है
और मुझसे सिवाय विनय के

कोई दूसरी बेपाखंड मुद्रा बाक़ी नहीं रह गई है।
इसलिए मैं भरसक साधारण आवाज़ में पूछता हूँ

मेरे साथ कौन आता है?
हम यहाँ फिर उस खुले आकाश का साक्षात्कार करेंगे

जो हमें उस सबकी याद दिलाएगा
जिसे हम भूल चुके हैं।

और उस हवा से हमारी भेंट होगी
जिसका स्पर्श

हताश भटकते पाँवों की गति को
तीर्थ यात्रा में बदल देता है

और जिसकी पारदर्शिता में
ज़ख़्मी उँगलियों की छाप

चट्टानों के माथे पर
अभिषेक की तरह चमकती है।

मेरे साथ कौन आता है?
मैं देख रहा हूँ

अभी सूरज चमक रहा है
तेज़ और थकाने वाला

लेकिन तीसरे पहर
बादल घिरेंगे

बारिश होगी और ओले गिरेंगे
मैं नहीं जानता

SGOU

कि उस समय मैं हाथों से पकड़ कर
पैरों को आगे बढ़ाता

रास्ते में हूँगा
या उस मंज़िल पर

जहाँ पीछे छूटा हुआ विघ्न
एक सामान्य-सी यादगार मालूम पड़ता है।

मेरे साथ कौन आता है?
वहाँ चलते वक़्त

इसका ख़याल करना कि हम कितनी दूर निकल आए
संभव नहीं होता।

उस वक़्त तो सिर्फ़ रानों और पिंडलियों की ऐंठन ही
पहली और आखिरी अनुभूति होती है।

रास्ते का ख़याल तो
थक कर बैठ जाने पर ही आता है

हो सकता है कि हम पहाड़ की छाया में सो जाएँ
पास से एक पतली धारा बह रही हो

जिसकी तरी के कारण
स्रोत पर जीवित घास और हरी पत्तियाँ

उग आई हों
हो सकता है कि झाड़ी से निकल कर

गेहुँअन हमारे मस्तिष्क पर
छाया करे।

मेरे साथ कौन आता है?
ऐसा नहीं है

SGOU

कि वहाँ लोग नहीं होंगे
हमें सोता देखकर वे आएँगे

और जागने पर हालचाल पूछेंगे।
हम उनसे कहेंगे

कि हम भी उनके साथ कांतारों में
गुमनाम होने के लिए आए हैं

वे खुल कर हँसेंगे
और हमारी इस विचित्र आकांक्षा का मतलब

नहीं समझ सकेंगे।
क्योंकि उन्होंने अपने देश के बारे में

वह सब नहीं सुन रखा है
जो हमने सुना है।

मेरे साथ कौन आता है?
हाँ, मैंने अच्छी तरह तौल लिया है।

एक बार तय कर लेने के बाद
गुमनाम हो जाना उतना डरावना नहीं लगता

जितना हमने समझ रखा है
आखिरकार यह हमेशा संभव है

कि हम अब तक के तमाम कोलाहल को
एक झटके के साथ त्याग दें

और खड़े होकर कहें
हाँ, हमने माना कि एक ज़िंदगी हमने

ग़लत परिणामों को सिद्ध करने में गुज़ार दी।
अब हमें नई शुरुआत के लिए
नए सिरे से गुमनामी चाहिए।
भरी सभा में एक ही सवाल है

मेरे साथ कौन आता है? कविता की शुरू में कवि एक सवाल करता है। कवि पूछता है कि मेरे साथ कौन-कौन आता है। कवि फिर से उन कांतारों की यात्रा करने जा रहा है और वह उससे पहले सबसे पूछता है कि उनके साथ कौन जाना चाहता है। कवि कहता है कि यह कोई नई मंजिल की और की यात्रा नहीं है यह वहाँ की यात्रा है जहाँ बरसों से भटक चुका है।

▶ मेरे साथ कौन-कौन आता है

कवि यह जानता है और मानता भी है कि वहाँ उनके पदचिन्हों के अलावा और कुछ नहीं मिलेगा। कवि आगे कहता है कि लड़खड़ाती हुई जिस चट्टान पर कवि ने हाथ टेका था वहाँ पर उनकी ज़ख्मी उंगलियों की छाप अभी भी होगी। और इस यात्रा से कवि का लक्ष्य उस पगडंडी से परिचय घना करने से है जो कहीं ले नहीं जाती और जिसे सिर्फ कवि ही जानते हैं।

▶ लक्ष्य उस पगडंडी से परिचय घना करने से है

कवि फिर से पूछता है कि मेरे साथ कौन-कौन आता है। कवि कहता है कि यह कोई चुनौती नहीं है। और ना ही अब मुझसे चुनौती की भाषा बोली जाती है। कवि कहता है कि मैं इतने दिनों तक निस्तब्ध होकर सोचता रहा है कि मेरी आवाज़ भारी हो गई है। और अब विनय के अलावा और किसी भी तरह की मुद्रा बाकी नहीं रह गया है। इसलिए कवि साधारण से साधारण एवं विनयपूर्ण आवाज़ में पूछता है कि मेरे साथ कौन आता है।

▶ अब कवि से चुनौती की भाषा नहीं बोली जाती है

और कवि आगे कहता है कि हम फिर से खुले आसमान का साक्षात्कार करेंगे और वह हमें भूले हुए सब लोगों की याद दिलाएँगे। और कवि कहता है कि हमारी भेंट हवा से होगी जिसके स्पर्श, हताश होकर भटकने वाले पाँव की गति को भी तीर्थ यात्रा में बदल देती है। और उसकी पारदर्शिता ज़ख्मी उंगलियों की उन छापों को चट्टानों की माथे पर अभिषेक की तिलक की तरह चमकाती है।

▶ हताश होकर भटकने वाले पाँव की गति को भी तीर्थ यात्रा में बदल देनेवाली हवा से भेंट

कवि फिर से पूछता है कि मेरे साथ कौन आता है। कवि कहता है कि मैं देख रहा हूँ कि अभी सूरज तेज होकर थकाने वाला होकर चमक रहा है। लेकिन आगे चलकर तीसरे पहर पर बादल घिरेंगे, बारिश भी होगी और ओले भी गिरेंगे। लेकिन मुझे बस यह नहीं पता है कि तब मैं हाथों से पैरों को आगे बढ़ाता हुआ रास्ते पर होगा या फिर उस मंजिल पर जहाँ पहूँचने पर पीछे छूटा सारी विघ्न बस एक सामान्य सी याद बन जाती है।

▶ पीछे छूटा सारी विघ्न बस एक सामान्य सी याद बन जाती है

कवि फिर से पूछता है कि मेरे साथ कौन-कौन आता है। मंजिल की और चलते वक्त हम यह सोच नहीं पाएँगे कि हम कितनी दूर निकल आए हैं। रास्ते का ख्याल तो थक कर बैठ जाने पर ही आता है। अर्थात वे कभी थक कर बैठने वाले नहीं है, बस आगे बढ़ जाने वाले हैं। कवि आगे कहता है कि हो सकता है कि हम पहाड़ की छाया में सो जाए, तब पास में से एक पतली धारा बह रही होगी, जिसके किनारों पर जीवित खास एवं हरी पत्तियाँ उग आई होगी। हो सकता है कि इन झाड़ियों से गेहूँअन निकलकर हमारे मस्तिष्क पर छा जाएगी।

कवि फिर से पूछता है कि मेरे साथ कौन आता है। कवि कहता है कि ऐसा नहीं है कि वह जगह बिल्कुल निर्जन है। वहाँ पर लोग होंगे और हमें देखकर वह आएँगे और हाल-चाल पूछेंगे। बस जब हम उनसे कहेंगे कि हम भी उनके साथ कांतारों में गुमनाम होने के लिए आए हैं वह खुलकर हँसेंगे और हमारी इस विचित्र आकांक्षा का मतलब नहीं समझ पाएँगे। क्योंकि उन्होंने अपने देश के बारे में वह सब नहीं सुना है जो हमने सुन रखा है।

▶ वह हमारी इस विचित्र आकांक्षा का मतलब नहीं समझ पाएँगे

कवि फिर से पूछता है कि, मेरे साथ कौन आता है। और कहता है कि, हाँ मैं अच्छी तरह तौल लिया है। और एक बार गुमनाम होने के लिए तय करने के बाद गुमनाम होना उतना डरावना नहीं लगता। कवि कहता है कि संभव है अब तक के तमाम कोलाहल को एक झटके के साथ त्याग कर और खड़े होकर यह कहना कि हाँ मैं मानता हूँ कि एक ज़िंदगी हमने गलत परिणामों को सिद्ध करने में गुज़ार दी। कवि आगे कहता है कि अब नयी शुरुआत के लिए नये सिरे से गुमनामी चाहिए। और भरी सभा में कवि एक ही सवाल उठाता है कि मेरे साथ कौन आता है।

▶ नयी शुरुआत के लिए नये सिरे से गुमनामी चाहिए

रामदरश मिश्र - मैं तो यहाँ हूँ

सभी चले गये थे
मंदिर में अपनी मुरादों के चीथड़े छोड़ कर
मैं अकेले बैठा था प्रभु-मूर्ति के सामने
और बातें कर रहा था सुख-दुःख की
लेकिन मूर्ति जड़ बनी रही
ऊब कर मंदिर से बाहर निकला तो देखा-
चारों ओर पुष्पित खेत खिलखिला रहे थे
चहचहाती चिड़ियों का महारास मचा था
हवाएँ खुशबू में नहा रही थीं
और जड़-चेतन की त्वचा पर
स्पंदन की कथा लिख रही थीं
पास बहती हुई नदी में
तरंगों का नर्तन और गान चल रहा था
लगता था-
धरती और आकाश के बीच संवाद हो रहा है
प्रतीत हुआ
जैसे चारों ओर एक आवाज़ गूँज रही है-
"अरे, मैं तो यहाँ हूँ, यहाँ हूँ, यहाँ हूँ"।

हिन्दी साहित्य के जाने-माने लेखक रामदरश मिश्र की छोटी एवं सुंदर कविता है मैं तो यहाँ हूँ। ईश्वरीय सत्ता की कण कण में वास करने की बयान कवि करते हैं। लोग

ईश्वर को मंदिरों में ढूँढते हैं और ईश्वर वहाँ नहीं है। कवि सबको यही बताना चाहते हैं कि ईश्वरीय सत्ता को जो अपने चारों ओर है उसे महसूस करने की कोशिश करो।

कविता की शुरुआती पंक्तियों में कवि कहते हैं कि मंदिरों में अपनी मुरादों के, इच्छाओं के चीथड़े छोड़कर सब चले गए हैं। अर्थात सब लोग अपनी इच्छाओं के बारे में कहकर और उद्दिष्ट कार्य की सिद्धि हेतु कर्मकांड करके चले गए हैं। सब व्यस्त है।

▶ ईश्वरीय सत्ता को महसूस करने की कोशिश करो

लेकिन कवि ऐसा नहीं है। वह प्रभु मूर्ति के सामने अकेला बैठा रहकर उनसे सुख-दुःख की बातें कर रहा था, लेकिन वह मूर्ति जड़ ही बनी रही। और तब कवि ऊबकर मंदिर से निकलकर देखा। मंदिर से बाहर निकलने पर कवि बहुत कुछ देख पा रहा था। चारों और पुष्पित होकर खिलखिलानेवाला खेत थे, चहचहाती चिड़ियों का महारास मचा रहा था, अर्थात चिड़ियों का झुंड चहक रहे थे, हवाओं में भी खुशबू भरी हुई थी। और यह सब जड़ चेतन की त्वचा पर स्पंदन की कथा लिख रही थी। कवि की जड़ चेतन में यह सब ऊर्जा का प्रवाह बनकर स्पंदन उत्पन्न कर रही थी।

▶ कवि की जड़ चेतन में ऊर्जा का प्रवाह

पास में से बहती हुई नदी में तरंगों का नृत्य एवं गान चल रहा था और वह सुनकर लग रहा था कि धरती और आकाश के बीच संवाद हो रहा है। और यह सब देखकर सुनकर कवि को ऐसा प्रतीत होता है कि चारों ओर एक आवाज़ गूँज रही है कि - 'अरे मैं तो यहाँ हूँ, यहाँ हूँ, यहाँ हूँ।' अर्थात मंदिरों में ईश्वर को खोजने वाले मनुष्य से वह अदृश्य शक्ति कह रहा है कि मैं तो यहाँ हूँ।

▶ धरती और आकाश के बीच संवाद

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने प्रमुख समकालीन कवि धूमिल, विजयदेव नारायण साही, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र और श्रीकांत वर्मा के बारे में संक्षिप्त परिचय प्राप्त किया है। समकालीन कविता एवं हिन्दी साहित्य को उनके द्वारा दिया गया योगदान पर भी प्रकाश डाला गया है। उनकी रचना संसार एवं साहित्यिक उपलब्धियों पर भी पर्याप्त चर्चा हुआ है।

साथ ही समकालीन काव्यों में प्रमुख मोचीराम, एक रात की ज़िंदगी, मेरे साथ कौन कौन आता है, मैं तो यहाँ हूँ आदि कविताओं का भी चर्चा हुई है। 'मोचीराम' कविता में समानता के बारे में कहा गया है, 'एक रात की ज़िंदगी' में रात की विशेषताएँ एवं रात में अंतर्निहित बातों के बारे में कही गई है। 'मेरे साथ कौन कौन आता है', 'मैं तो यहाँ हूँ' कविता का भी चर्चा हुआ है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. कवि धूमिल का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. कवि विजयदेव नारायण साही का साहित्यिक योगदान पर टिप्पणी लिखिए।
3. कवि लीलाधर जगूड़ी की रचना संसार पर प्रकाश डालिए।
4. कवि रामदरश मिश्र का परिचय दीजिए।
5. कवि श्रीकांत वर्मा की साहित्यिक विशेषताओं पर टिप्पणी लिखिए।
6. 'मोचीराम' कविता में कवि क्या कहना चाहता है?
7. लीलाधर जगूड़ी की कविता 'एक रात की ज़िंदगी' का आस्वादन टिप्पणी तैयार कीजिए।
8. 'मेरे साथ कौन कौन आता है' कविता का सारांश लिखिए।
9. 'मैं तो यहाँ हूँ' कविता की विशेषताऐं लिखिए।

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - डॉ गणपति चंद्र गुप्त
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ नगेन्द्र
3. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन
4. हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास - डॉ प्रतापनारायण टंडन
5. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास - डॉ बच्चन सिंह
6. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास - रामप्रसाद मिश्र
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ रमेश चंद्र शर्मा
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ ईश्वर दत्त शील, डॉ आभा रानी
9. हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास - डॉ हरिश्चंद्र अग्रहरी

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. विश्वनाथप्रसाद तिवारी - समकालीन हिन्दी कविता
2. डॉ जगन्नाथ पंडित - समकालीन हिन्दी कविता का परिप्रेक्षय
3. नंदकिशोर नवल - आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

BLOCK 04

हिन्दी कविता का वर्तमान परिदृश्य

SGOU

Unit 1: अस्सी के बाद की हिन्दी कविता, परिवेश और स्वरूप, भूमंडलीकरण का प्रभाव, कथ्य और शिल्प की नई प्रवृत्तियाँ, प्रमुख कवि

Unit 2: कविता का प्रतिरोधात्मक स्वर-दलित, आदिवासी, किन्नर, स्त्री

Unit 3: अस्मितामूलक विमर्श के अन्य रूप-पारिस्थितिक, प्रवासी, बाल, वृद्ध

इकाई 1

अस्सी के बाद की हिन्दी कविता, परिवेश और स्वरूप, भूमंडलीकरण का प्रभाव, कथ्य और शिल्प की नई प्रवृत्तियाँ, प्रमुख कवि

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- अस्सी के बाद की हिन्दी कविता की परिवेश और स्वरूप समझता है
- अस्सी के बाद की हिन्दी कविता में भूमंडलीकरण का प्रभाव समझता है
- अस्सी के बाद की हिन्दी कविता की प्रमुख कवियों से परिचित होता है
- अस्सी के बाद की हिन्दी कविताओं से परिचय प्राप्त करता है

Background / पृष्ठभूमि

अज्ञेय से लेकर आज तक की कई पीढ़ियाँ काव्य रचनाओं में सक्रिय रहीं। अज्ञेय, नागार्जुन, भवानी प्रसाद मिश्र, शमशेर बहादूर सिंह के कई महत्वपूर्ण काव्य संग्रह इस अवधि में प्रकाशित हुए और बीच की पीढ़ी के कवियों की रचनाएँ भी बहुलता से प्रकाशित हुई। प्रभाव की दृष्टि से आज की कविता के दो रूप हैं - पहली वह कविता है स्वरूप और स्वभाव से बोझिल, दुरूह एवं जटिल है। ये कविताएँ दुरूह प्रतीकों बिम्बों से पूर्ण होने के कारण पाठकों के ह्रदय प्रदेश में सीधा प्रवेश करने के स्थान पर हर कदम पर बौद्धिकता की छाप छोड़ती हैं कि वह उनकी उलझन को सुलझाने का प्रयास कर रही हैं। इन कविताओं को पढ़ने के बाद पाठक एक प्रकार की मानसिक थकान का अनुभव करता है। ऐसी कविताएँ अपने कुछ एक प्रशंसकों के बल बूते पर जीती हैं और गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेती हैं।

प्रयोगवाद, नई कविता, अकविता और, आज की कविता के कई कवि ऐसे हैं जिनका स्वभाव ही दुरूह कविता लेखन है। दूसरी कविता वह है जो सहज, स्वाभाविक और पारदर्शी है। इसकी गहनता आसानी से समझी जा सकती है। यह कविता पाठक के ह्रदय प्रदेश में सहजता से प्रवेश कर लेती है। नागार्जुन, धर्मवीर भारती, मुक्तिबोध, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, धूमिल आदि की कविताएँ इसी श्रेणी में आती हैं। विजय देव नारायण साही का पहला काव्य संग्रह 'मछली घर' नई कविता की दुरूह परिपाटी से प्रभावित दिखती है। किन्तु 'साखी' में वह फिर अपने सहज स्वभाव वाली कविता में लौट आए हैं। सन् 75 के बाद आने वाली कविताओं का स्वर दूसरे प्रकार की कविताओं का अधिक है। ये कविताएँ सामाजिक सरोकार से जुड़ी हुई हैं।

Keywords / मुख्य बिन्दु

भूमंडलीकरण, राजेश जोशी, पवन करण, उदय प्रकाश, अरुण कमल, बच्चे काम पर जा रहे हैं, स्त्री मेरे भीतर, घोड़े की सवारी, मुक्ति

Discussion / चर्चा

1.1.1 अस्सी के बाद की हिन्दी कविता - परिवेश और स्वरूप

▶ कविता की वापसी का दौर

सन् 80 के दशक को कविता की वापसी का दौर माना जाता है। क्योंकि मुक्तिबोध, शमशेर, त्रिलोचन, नागार्जुन से लेकर केदारनाथ सिंह, कुंवर नारायण, राजेश जोशी जैसे अनेक जाने अनजाने कवियों की रचनाएँ इस वर्ष प्रकाशित हुई। आठवें दशक के अंतिम वर्ष में अपने युग के विरोधों एवं षड़यन्त्रों से संघर्ष करती आ रही कविता की अचानक वापसी हुई। वस्तुतः कविता कहीं गई नहीं थी लेकिन मान लिया कविता चली गई ताकि वापसी का सेहरा किसी के सिर पर बाँधा जा सके। अशोक वाजपेई ने वर्ष 1980 कविताओं की वापसी का वर्ष कहा इनके द्वारा सम्पादित पूर्वाग्रह कवितांक में उन्होंने प्रयोगवादी, अकवितावादी, और जनवादी तीन पीढ़ियों के करीब 14 कवियों के कविता संग्रहों पर समीक्षाएँ और टिप्पणियाँ प्रस्तुत कीं। इसमें मुक्तिबोध की 'भूरि भूरि खाक धूल, कुँवर नारायण की 'आमने-सामने', शमशेर की 'इतने पास अपने', केदार नाथ सिंह की 'ज़मीन पक रही है' आदि रचनाओं का रचनाकाल पिछले 25-30 वर्षों का है परन्तु इनका प्रकाशन काल 1980 का है। इसलिए इनकी कविताओं को भी कविताओं की वापसी में शामिल कर लिया गया।

▶ विचारवादी कविताएँ इसी दौर की देन हैं

अशोक वाजपेई और इन जैसे अन्य कवियों ने अपनी कविताओं में दुनिया का उद्घाटन किया इसलिए इनकी दृष्टि में कविता की वापसी हुई। ये कविताएँ पहले भी थीं और कई कवि बगैर किसी नारे के जीवन के खुलेपन को स्वीकार कर रहे थे। वहाँ भी चिड़ियाँ, फूल, मौसम, पानी के साथ-साथ ये सब अपने प्राकृतिक बिम्ब सौन्दर्य के साथ मानवीय सौन्दर्य का एक नया प्रतीकार्थ भी खोलते थे, किन्तु एक नारे के साथ कविता की वापसी होना निश्चित था सो कविता की वापसी हुई। ये विचारवादी कविताएँ भी इसी दौर की देन हैं। यह एक आन्दोलन न होकर एक पहचान के रूप में उभरा। आज भी कविता की केन्द्रीय प्रेरणा क्या है इसकी पहचान का प्रयास किया गया था। इस समय ऐसा अनुभव किया गया था कि समकालीन कविता में अनुभव के स्थान पर विचार-प्रधान हो गया था। इसी पहचान के अन्तर्गत डॉ. नरेन्द्र मोहन ने अपने कवि मित्रों के सहयोग से संचेतना का विचार अंक प्रकाशित किया उसमें विचारों के सम्बन्धों को विश्लेषित करने वाली कई कविताएँ और निवन्ध थे। विचार कविता ने एक आन्दोलन का रूप अख्तियार किया। विचार कविता का कोई ठोस रूप खड़ा नहीं किया जा सकता और अनुभव के स्थान पर विचार कविता के केन्द्र में भी नहीं लाया जा सकता। इसकी सार्थकता इसी में थी कि तत्कालीन कविता के विचार के बढ़ते दबाव को वर्णित किया गया।

इस अवधि में जनवादी कविता का भी स्वर उठा। इस दौर की कविता आम आदमी के संघर्ष और सुख-दुख की अनुभूत सच्चाई पर आधारित रही। इस काल खण्ड में 'पहल' का समकालीन विशेषांक प्रकाशित हुआ। 'संचेतना', 'गवाह', 'दस्तावेज' आदि

SGOU

पत्र - पत्रिकाओं द्वारा जनवादी कविता दर्शन का प्रयास हुआ। नौवें एवं दसवें दशक की कविता आम जन की कविता के रूप में दिखाई देती है। यह काल समाज - राष्ट्र और व्यक्ति चेतना का काल माना गया। अतः इस काल की कविता जनवादी कविता के रूप में जानी गई। घोषित - अघोषित काव्यान्दोलनों से जुड़े कवियों ने इस जनवादी काव्य के विकास में अपना योगदान दिया। प्रगतिवादी खेमें के केदार नाथ अग्रवाल, नागार्जुन आदि को जनवादी कवि होने से कैसे वंचित किया जा सकता है। इस कविता के युवा रचनाकारों में डॉ. जर्रा, शुक्ला 'तन्मय', दामोदर खड़से, कैलाश सेंगर, इन्दु वशिष्ठ, श्री हर्ष, राजीव सक्सेना, केदार नाथ कोमल, दिनकर सोनवलकर, मनोज सोनकर, दूधनाथ सिंह, आलोक धन्वा, विजयेन्द्र, वेणुगोपाल, कुमार विकल, रोहिताश्व, डॉ. विनय, बलदेव वंशी, ऋतुराज, हर दयाल, रमेश दिविक, अशोक चक्रधर, महेन्द्र भटनागर, नरेन्द्र मोहन, गुप्ता गोरे अश्वघोष आदि प्रमुख तौर पर स्मरणीय हैं।

▶ इस काल की कविता जनवादी कविता के रूप में जानी गई

इस नौवें और दसवें दशक में काव्य चिन्तन का क्षेत्र विषय की व्यापकता असीमित थी। जीवन का कोई भी पक्ष अछूता नहीं रह गया। सर्वांगीण जीवन की अभिव्यक्ति इस उत्तरार्ध के काल में हुई। आज का कवि केवल सौन्दर्य के प्रति ही आकृष्ट नहीं होता अपितु कुरूप और असुन्दर पहलू को भी अभिव्यक्ति प्रदान करता है। संवेदनशील रचनाकार समसामयिक स्थितियों से प्रभावित होकर काव्य सृजन करता है। परिवर्तन ही विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। यह परिवर्तनशीलता ही काव्य की नवीनता और मौलिकता का आधार है। इसीलिए आज की कविता के काल को समाज-राष्ट्र-व्यक्ति-चेतना काल के नाम से जाना जाता है।

▶ सर्वांगीण जीवन की अभिव्यक्ति

भूमंडलीकरण का प्रभाव

हिन्दी की समकालीन कविता छायावादोत्तर काव्यधाराओं में एक महत्वपूर्ण काव्यधारा है, काव्य आन्दोलन है, जिसके समारम्भ, सीमा, प्रवर्तक कवि, प्रमुख प्रवृत्तियों और मानवीय मूल्यों के प्रतिपादन को लेकर गत कुछ समय में विवाद रहा है। इस काव्यधारा के पक्षधर कवि एवं समीक्षक इसे पूर्व काव्यधाराओं से कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से महत्वपूर्ण काव्यधारा प्रतिष्ठित करते हैं, जबकि दूसरे पक्ष के कुछ कवि, समीक्षक इसे कविता मानने से इनकार करते हैं।

▶ छायावादोत्तर काव्यधाराओं में एक महत्वपूर्ण काव्यधारा

हिन्दी में आधुनिकता सम्बन्धी विचारों की व्याख्या करते समय अधिकांश आलोचक इसे 'मॉडर्निज़म' शब्द से मिलाने का प्रयास करते हैं। वस्तुतः आधुनिकता अंग्रेजी के 'मोडर्निटी' शब्द का हिन्दी पर्याय है। आधुनिकता, समसामयिकता तथा समकालीनता को लेकर काफी विवाद रहा है। समकालीन कविता की सही व्याख्या के लिए इसकी सम्यक् जानकारी अपेक्षित है। आधुनिक भाव-बोध एवं अभिव्यक्ति की सच्चाई उसका केन्द्रीय तत्व है। नितान्त आधुनिक होना कवि के लिए अनिवार्य है। आधुनिकता का सीधा अर्थ समसामयिकता है, परन्तु दूसरा मत इन दोनों में भेद करता है और आधुनिकता को अधिक आन्तरिक और मूल्यगत भाव मानता है। आधुनिकता मात्र देशकाल का बोध

▶ अंग्रेजी के 'मोडर्निटी' शब्द का हिन्दी पर्याय है

नहीं है, समकालीन कवि अनुभव करता है कि आज के समस्त साहित्य की संवेदना में कहीं गहरा पविर्तन आ गया है जो साहित्य के सभी रूपों और दिशाओं में परिलक्षित होता है।

समकालीन कविता जहाँ आम-आदमी के लिए वरदान है, उसकी मुसीबत के विरुद्ध एक हथियार है, वहीं आदमी के हर विरोधी तत्व के लिए यह प्रतिपक्ष की कविता है। आज सर्वाधिक चर्चित शब्द 'भूमण्डलीकरण' से यह भ्रम पैदा होता है कि यह ऐसी व्यवस्था है जिसमें अपने छोटे स्वार्थ से ऊपर उठकर लोग सारे संसार के मंगल के लिए जुड़ जायेंगे। लेकिन भूमण्डलीकरण के निहितार्थ इसके ठीक उलटा है। इससे निकलने वाली 'सब जन हिताय सब जन सुखाय' की ध्वनि के विपरीत यह व्यवस्था सारे संसार को कुछ सशक्त पूँजीवादी प्रतिष्ठानों यानी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और उनके सबसे सबल केन्द्र अमेरिका के हितों की रक्षा का माध्यम बनी हुई है। पूँजीवाद की मृत्यु की कामना करते हुए कार्लमार्क्स ने 1848 में ही कम्यूनिस्ट घोषणा पत्र में इसके गुणों का बखान यों किया था - 'अपने उत्पादों के बाज़ार की तलाश बुर्जुआ को पूरे भूमण्डल में दौड़ाती है। इसे अपना नीड़ सर्वत्र बनाना है, इसे हर जगह बसना है, इसे अपना सम्बन्ध सर्वत्र फैलाना है।' औद्योगिक क्रान्ति से जब उत्पादन की मात्रा का तेजी से विस्तार हुआ तो अपने देश की सीमा से बाहर जाकर बड़े पैमाने पर व्यापार फैलाने की ज़रूरत महसूस की जाने लगी। उदारीकरण के नाम से आज इसी सिद्धान्त का गुणगान किया जा रहा है। भूमण्डलीकरण नाम तो अब प्रचलित हुआ है लेकिन पूँजीवाद के उदय से ही सभी पूँजीवादी प्रतिष्ठानों की महत्वाकांक्षा सारे संसार में अपना वर्चस्व फैलाती रही है। भूमण्डलीकरण दर असल पूँजीवाद की तात्कालिक एकछत्रता का उद्घोष है। लेकिन भूमण्डलीकरण शब्द से जैसी एकता का भ्रम पैदा होता है, हकीकत में वैसा है नहीं। इसके भीतर अनेक तरह के अन्तर्विरोध है। पूँजीवाद की वर्तमान लम्बी प्रक्रिया भूमण्डलीकरण के स्तर तक पहुँचने की रही है जिस में भय और प्रलोभन दोनों की भूमिका रही थी।

▶ भूमण्डलीकरण शब्द से जैसी एकता का भ्रम पैदा होता है, हकीकत में वैसा है नहीं

वैश्वीकरण का एक आयाम यह भी है कि सामाजिक संघर्ष भी वैश्विक हो गए हैं। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दिनों में ब्राहमाण्ड और समाज की सारी गुत्थियों को समझने और इस ज्ञान से समाज की समस्याओं का निराकरण ढूँढ़ने का जो आत्मविश्वास और संकल्प था वह इक्कीसवीं शताब्दी के शुरू में नहीं दिखाई देता है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ की दुनिया मानव चेतना में खुली सीमा की दुनिया थी। उसे यह विश्वास था कि वह अपनी ज़रूरतों को चाहे जितना बढ़ाए, चाहे कितनी भी वस्तुओं का उत्पादन करें प्रकृति उस पर आपूर्ति की कोई सीमा नहीं लगाती। हवा और पानी ही नहीं कृषि के लिए भूमि, ऊर्जा के स्त्रोत और आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि सीमाहीन लगती थी। संस्कृतियाँ अपने मूल्यों के अनुसार इससे एक दूसरे को प्रोत्साहित करती रही है। लेकिन यह द्वंद्व सदा बना रहा है।

▶ बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ की दुनिया मानव चेतना में खुली सीमा की दुनिया

मतलब यह है कि आज के शोषित वर्गों को समता और बन्धुत्व की भावना में पुनः

प्रशिक्षित करना होगा, नहीं तो शोषण के नए केन्द्र विकसित होंगे। वर्तमान की चुनौतियाँ ही समकालीन चुनौतियाँ कहलाती हैं। समकालीन हिन्दी कविता को वर्तमान परिवेश ने कई चुनौतियाँ दी हैं। आज बाजारवाद, भूमण्डलीकरण, आर्थिक उदारीकरण, बहुराष्ट्रीय साम्राज्यवादी नीतियाँ वर्तमान पर हावी हैं। राजनीति से लेकर साहित्य तक इनकी जड़ें फैली हुई हैं। इस सन्दर्भ पर विचार करना आवश्यक हो जाता है कि ये तत्व समकालीन हिन्दी कविता पर किस तरह का दबाव डाल रहे हैं। भूमण्डलीकरण समकालीन कविता के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। बाज़ारवाद माल से पूँजी और पूँजी से माल बनाता है। लाभ कमाने के नए बाज़ारवाद अमूल्य चीजों को भी बिकाऊ बनाकर अपने माल में शामिल कर लेता है। यह देखना जरूरी है कि कविता का नाम बाजार के माल की सूची में कैसे आया। अब कविताएँ कविताओं में जिन्दा रहती हैं। इस बात में कोई दो राय नहीं कि किताबों के जरिए व्यक्ति के विचार दूर-दूर तक फैलाए जा सकते हैं, लेकिन हकीकत का एक पहलू यह भी है कि किताब रूपी यह सशक्त माध्यम बाजारवाद का एक मोहरा भी है। इसे पाने से पहले हर साहित्य प्रेमी को अपनी जेब टटोलनी पड़ती है और इसे छपवाने के लिए साहित्यकार को पूँजीवाद की कठिन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। वास्तव में कविता को जन-जन तक पहुँचाने के मार्ग में बाजारवाद की लाभ कमाने की प्रवृत्ति रोड़े अटकाती है। इतना ही नहीं, इस प्रवृत्ति ने कुछ कवियों पर हावी होकर उन्हें बाजार में जगह पा लेने के लिए संवेदना के सहारे कविताएँ लिखने की राह भी दिखाई। भूमण्डलीकरण के कारण आज अधिकतर कवियों के विचार और लेखनी के बीच एक खाई बन गई है। इसे हम कवियों में दोहरे चरित्र का विकास कह सकते हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कविता साहित्य की सबसे बड़ा अव्यावसायिक विधा है। इसे कहानी, उपन्यास या नाटक की तरह बेचा नहीं जा सकता। कविता में संवेदना होती है। इसलिए भूमण्डलीकरण के लिए इसे माल बनाकर बेचना मुश्किल हो जाता है। समकालीन कवियों का यह वर्ग संवेदनाओं को बचाने की कोशिश में लगा है और बाजारवाद को बार-बार अलग-अलग ढंग से दुतकारता है। एकान्त श्रीवास्तव इसी वर्ग का कवि है। अपने काव्य संकलन 'मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद' की 'दुनिया के हाट में' शीर्षक कविता में एकान्त श्रीवास्तव का बाजार से टकराने का अंदाज देखा जा सकता है, वे कहते हैं

- वर्तमान की चुनौतियाँ ही समकालीन चुनौतियाँ कहलाती हैं

'मैं
ज़मीन नहीं बेचता
बेचता हूँ आँखें जल और स्वप्न से भीगी
अपनी दो अदद आँखें।

संवेदनाओं और सपनों के लिए चुनौती साबित होने वाले बाजारवाद को आँसू और सपनों से भीगी आँखें ही चुनौती दे सकती हैं। आज भूमण्डलीकरण और आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के जरिए विश्व को एक गाँव का रूप देने की बात की जाती है। असल में इन नीतियों के पीछे विकसित राष्ट्रों की पूँजी बटोरने की मानसिकता है।

▶ संवेदनाओं और सपनों के लिए चुनौती साबित होने वाले बाजारवाद

इन नीतियों के चलते भारत में नब्बे फीसदी लोग बेरोजगार बन गये हैं तो दस फीसदी लोग लालची उपभोक्ता। बेरोज़गारों की संवेदना जहाँ परिस्थिति की मार से दबती जा रही है वहीं लालची उपभोक्ताओं ने संवेदनाओं को स्वयं मार डाला है। सवाल यही है कि इस भूमंडलीकरण की चक्की में पिसे तमाम निम्नवर्गीय लोगों के पक्ष में कौन खड़ा होगा? निश्चित रूप से यह पीडा, समकालीन कविता को उठाना होगा। समकालीन कवि भूमण्डलीकरण की इस नीति से बखूबी टकरा रहे हैं।

▶ भूमण्डलीकरण का दौर निजीकरण का भी दौर है

भूमण्डलीकरण का दौर निजीकरण का भी दौर है। कविता लिखते वक्त समकालीन कवि अगर निजी अनुभवों में उलझकर रह गया तो समकालीन हिन्दी कविता समाजोपयोगी विचारों को पाठकों तक सम्प्रेषित नहीं कर पाएगी। हर कवि में एक पाठक भी होता है। समकालीन कवियों को साधारण पाठक के मन को छूना होगा। इस कोशिश में कविता की भाषा टूटकर सहज होगी और कवि का संवेदना से उत्पन्न ज्ञान कविता में ढलकर पाठकों की संवेदना को उद्वेलित करेगा। वर्तमान समाज भूमण्डलीकरण के चलते एक कठिन दौर से गुज़र रहा है। वैश्वीकरण ने एक ओर लोक संस्कृति को अपदस्थ किया है तो दूसरी ओर जातीय पहचान के सवाल को गौण बना दिया है। समकालीन कविता को भूमण्डलीकरण से लड़ने के लिए लोक संस्कृति और जातीय पहचान को विशेष महत्व देना होगा। जहाँ तक लोक संस्कृति से जुड़ाव का सवाल है, मदन कश्यप, निलय उपाध्याय, उदयप्रकाश, जैसे समकालीन कवि इससे जुड़े हुए दिखाई देते हैं। उदाहरण के लिए मदन कश्यप के 'कुआँ' शीर्षक कविता की ये पक्तियाँ देखिए -

"पृथ्वी गर्भ में गहरे धँसी अपनी जमुअट पर,
दृढ़ता के साथ खड़ा रहता है कुआँ,
छाती में परोस भर जामुनी जल समेटे
थोड़े से जतन और जुगत से कोई भी
पा सकता है उसका पानी।
अन्यथा जनता पर सिर पटक - पटक कर मर जाओ
तब भी प्यास बुझाने के लिए अपना जल ऊपर नहीं
उछालता कुआँ।"

▶ विकृत पूँजीवादी मूल्यों ने सामाजिक हालत को जटिल बना दिया

युग की यह माँग है कि समकालीन कवि लोक संस्कृति से न सिर्फ जुड़े, बल्कि उसे एक हथियार बनाकर भूमण्डलीकरण के खिलाफ इस्तेमाल करे, लेकिन यहाँ एक बात पर गौर करना चाहिए कि लोक संस्कृति का जुड़ाव क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा दे सकता है। इस खतरे से बचने के लिए यह ज़रूरी है कि समकालीन कवियों को लोक संस्कृति से जुड़ने के साथ-साथ जातीय पहचान को भी अनिवार्य रूप से महत्व देना। विकृत पूँजीवादी मूल्यों ने सामाजिक हालत को जटिल बना दिया है। समाज को इस जटिलता से मुक्त कराने का दायित्व समकालीन कवियों पर ही है। यह युग की माँग है समकालीन कवि, कविता के ज़रिए समाज के लिए नए विकल्प खोजें, पर समकालीन कवि को

SGOU

यह बात बराबर ध्यान में रखनी होगी कि इस खोज के दौरान वह मिथ्या आशावाद को प्रश्रय न दे।

संक्षेप में, जनवादी कविता के दौर से लेकर अब तक वक्त ने काफी करवटें बदली हैं। सामाजिक, आर्थिक सम्बन्धों के साथ राजनीतिक परिदृश्य भी बदला है। इसी के साथ नव पूँजीवाद की जड़ें भी भूमण्डलीकरण के साथ गहराई में जमती गई हैं जिसने मानव-मन पर अमिट छाप छोड़ी है। समकालीन हिन्दी कविता में यह छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

► व पूँजीवाद की जड़ें भी भूमण्डलीकरण के साथ गहराई में जमती गई

कथ्य और शिल्प की नई प्रवृत्तियाँ

अस्सी के बाद की हिंदी कविता में कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इस दौर में, कविता का स्वर अधिक यथार्थवादी, सामाजिक और राजनीतिक हो गया। शिल्प के स्तर पर, भाषा, प्रतीक और बिम्बों का प्रयोग अधिक सहज और आम बोलचाल के करीब हो गया।

अस्सी के बाद की हिन्दी कविता की कथ्यगत प्रवृत्तियाँ:-

भाषा का सरलीकरण:

कविता की भाषा अधिक सरल, सहज और आम बोलचाल के करीब हो गई।

प्रतीकों और बिम्बों का नया प्रयोग:

पुराने प्रतीकों और बिम्बों के स्थान पर नए प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग किया गया, जो अधिक सम्प्रेषणीय (communicative) थे।

मुक्त छंद:

मुक्त छंद का प्रयोग अधिक होने लगा, जो कविता को अधिक लयबद्ध और प्रभावशाली बनाता था।

संवाद शैली:

कविता में संवाद शैली का प्रयोग भी देखने को मिलता है, जो कविता को अधिक जीवंत बनाता है।

भाषा का प्रयोग:

भाषा के प्रति सजगता और राजनीतिक चेतना का प्रभाव भी कविता में दिखाई देता है।

अस्सी के बाद की हिंदी कविता ने कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर महत्वपूर्ण बदलाव

SGOU

▶ सामाजिक विद्रूपताओं और हाशिये पर पड़े लोगों के दुख-दर्द की अभिव्यक्ति

लाए, जिससे कविता का दायरा और प्रभाव दोनों ही बढ़े।

राजेश जोशी (जन्म : 1 जुलाई 1946 । नरसिंहगढ़, मध्य प्रदेश)

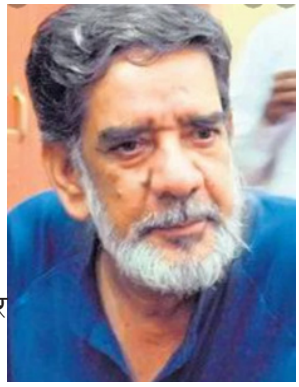

समकालीन कविता के महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर राजेश जोशी का जन्म 18 जुलाई 1946 को नरसिंहगढ़, मध्य प्रदेश में हुआ। शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने कुछ समय पत्रकारिता की और फिर कुछ वर्षों तक अध्यापन भी किया। राजेश जोशी अपनी कविताओं में सामाजिक विद्रूपताओं और हाशिये पड़े लोगों के दुख-दर्द को मुखरता से व्यक्त करते हैं। उनकी कविताएँ प्रायः आधुनिक समाज की जटिलताओं, असमानता और मानवीय मूल्यों के क्षरण पर केंद्रित होती हैं। जोशी अपनी सरल, सीधी और प्रभावपूर्ण भाषा के लिए जाने जाते हैं, जो सामान्य अनुभवों को गहन विचारों में ढाल देती है। उनकी कविताएँ पाठक के अंतर्मन को झकझोरती हैं और उन्हें सोचने पर मजबूर करती हैं।

▶ उनकी कविताओं में स्थानीय बोली-बानी, मिज़ाज और मौसम सबसे परिचय हो जाता है

उनकी राजनीतिक कविताएँ बारीकी और नफ़ासत का नमूना पेश करती हैं। वे समय, स्थान और गतियों के अछूते संदर्भों से भरी हैं। इनमें काल का बोध गहरा और आत्मीय है। वे अपने मनुष्य होने के अहसास और उसे बचाए रखने का जद्दोजहद करती हैं। उनकी कविताओं में सामाजिक यथार्थ गहरे उतरता है। वे जीवन के संकट में भी गहरी आस्था को बनाए रखती हैं। उनकी कविताओं में बचपन की स्मृतियों, स्थितियों व प्रसंगों की बहुलता है। स्थानीयता उनकी कविता की एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। उनकी कविताओं में स्थानीय बोली-बानी, मिज़ाज और मौसम सबसे परिचय हो जाता है। अपनी प्रतिबद्धता को वे अब एक ज़िद की तरह सामने लेकर आए हैं। वह स्वयं कहते हैं कि "...इस समय के अंतर्विरोधों और विडंबनाओं को व्यक्त करने और प्रतिरोध के नए उपकरण तलाश करने की बेचैनी हमारी पूरी कविता की मुख्य चिंता है! उसमें कई बार निराशा भी हाथ लगती है और उदासी भी लेकिन साधारण जन के पास जो सबसे बड़ी ताक़त है और जिसे कोई बड़ी से बड़ी वर्चस्वशाली शक्ति और बड़ी से बड़ी असफलता भी उससे छीन नहीं सकती, वह है उसकी ज़िद।"

▶ रचनाएँ

'एक दिन बोलेंगे पेड़', 'मिट्टी का चेहरा', 'नेपथ्य में हँसी', 'दो पंक्तियों के बीच' और 'ज़िद' उनके काव्य-संग्रह हैं। 'गेंद निराली मिद्दू की' नाम से बाल कविताओं का भी एक संग्रह प्रकाशित हुआ है। उन्होंने गद्य रचनाएँ भी की हैं। उनके दो कहानी-संग्रह 'सोमवार और अन्य कहानियाँ' और 'कपिल का पेड़' छप चुके हैं। 'जादू जंगल', 'अच्छे आदमी', 'कहन कबीर', 'टंकारा का गाना', 'तुक्के पर तुक्का' उनकी नाट्य-कृतियाँ हैं। 'एक कवि की नोटबुक' और 'एक कवि की दूसरी नोटबुक' के रूप में

आलोचनात्मक टिप्पणियों की दो किताबें प्रकाशित हुई हैं। इसके अतिरिक्त, उन्होंने भर्तृहरि की कविताओं की अनुरचना 'भूमि का कल्पतरु यह भी' शीर्षक से और मायकोव्स्की की कविताओं का अनुवाद 'पतलून पहिना बादल' शीर्षक से किया है। उन्होंने कुछ लघु फ़िल्मों के लिए पटकथाएँ भी लिखी हैं।

'दो पंक्तियों के बीच' कविता-संग्रह के लिए उन्हें वर्ष 2002 के साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

राजेश जोशी - बच्चे काम पर जा रहे हैं

कुहरे से ढँकी सड़क पर बच्चे काम पर जा रहे हैं
सुबह-सुबह
बच्चे काम पर जा रहे हैं
हमारे समय की सबसे भयानक पंक्ति है यह
भयानक है इसे विवरण की तरह लिखा जाना
लिखा जाना चाहिए इसे सवाल की तरह
काम पर क्यों जा रहे हैं बच्चे?
क्या अंतरिक्ष में गिर गई हैं सारी गेंदें

क्या दीमकों ने खा लिया है
सारी रंग-बिरंगी किताबों को
क्या काले पहाड़ के नीचे दब गए हैं सारे खिलौने
क्या किसी भूकंप में ढह गई हैं
सारे मदरसों की इमारतें
क्या सारे मैदान, सारे बग़ीचे और घरों के आँगन
ख़त्म हो गए हैं एकाएक
तो फिर बचा ही क्या है इस दुनिया में?
कितना भयानक होता अगर ऐसा होता
भयानक है लेकिन इससे भी ज़्यादा यह
कि हैं सारी चीज़ें हस्बमामूल
पर दुनिया की हज़ारों सड़कों से गुज़रते हुए
बच्चे, बहुत छोटे छोटे बच्चे
काम पर जा रहे हैं।

▶ बाल श्रम की मार्मिक और शक्तिशाली आलोचना

हिन्दी साहित्य के जाने माने लेखक राजे जोशी जी द्वारा विरचित छोटी, सुंदर एवं सोचने को बाधय करनेवाली कविता है 'बच्चे काम पर जा रहे हैं'। यह कविता राजेश जोशी द्वारा रचित बाल श्रम की मार्मिक और शक्तिशाली आलोचना है, जो पाठकों को एक ऐसी कठोर वास्तविकता से परिचित कराती है जिसे अक्सर अनदेखा कर दिया जाता है।

शाब्दिक अर्थ

कविता का शाब्दिक अर्थ है कि धुंध से ढकी सड़क पर सुबह-सुबह छोटे बच्चे काम पर जा रहे हैं। कवि इस दृश्य को 'हमारे समय की सबसे भयानक पंक्ति' बताता है और प्रश्न करता है कि इसे एक सामान्य विवरण की तरह क्यों लिखा जा रहा है, जबकि इसे एक प्रश्न की तरह लिखा जाना चाहिए। वह फिर कई आलंकारिक प्रश्न पूछते हैं, जैसे कि क्या सारी गेंदें अंतरिक्ष में गिर गई हैं, क्या दीमकों ने सारी रंग-बिरंगी किताबें खा ली हैं, क्या सारे खिलौने काले पहाड़ के नीचे दब गए हैं, क्या किसी भूकंप में सारे मदरसे (स्कूल) ढह गए हैं, या क्या सारे मैदान, सारे बगीचे और घरों के आँगन अचानक खत्म हो गए हैं? कवि कहता है कि यदि ऐसा होता तो कितना भयानक होता। हालाँकि, वह अंत में निष्कर्ष निकालते हैं कि इससे भी ज़्यादा भयानक यह है कि सब कुछ 'हस्बमामूल' (पहले जैसा) है, फिर भी दुनिया की हजारों सड़कों पर बहुत छोटे-छोटे बच्चे काम पर जा रहे हैं।

▶ सुबह-सुबह छोटे बच्चे काम पर जा रहे हैं

आंतरिक अर्थ

कविता का आंतरिक अर्थ सामाजिक उदासीनता और बाल श्रम के सामान्यीकरण की आलोचना में निहित है। गेंदों, किताबों, खिलौनों, स्कूलों और खेल के मैदानों के गायब होने के बारे में पूछे गए आलंकारिक प्रश्न शाब्दिक नहीं हैं। इसके बजाय, वे इन कामकाजी बच्चों के छिने हुए बचपन का प्रतीक हैं। कवि इस बात पर जोर दे रहा है कि एक बच्चे की दुनिया खेल, शिक्षा और बेफिक्री से जुड़ी होती है। जब बच्चों को काम करने के लिए मजबूर किया जाता है, तो उन्हें उनके विकास के इन मूलभूत पहलुओं से वंचित कर दिया जाता है।

▶ बच्चों को काम करने के लिए मजबूर किया जाता है

'कुहरे से ढँकी सड़क' बाल श्रम के मुद्दे के इर्द-गिर्द की अस्पष्टता और अदृश्यता का प्रतीक हो सकती है, या शायद उन बच्चों के अनिश्चित भविष्य का प्रतीक। कवि का यह आग्रह कि इस दृश्य को 'विवरण' नहीं, बल्कि एक 'सवाल' के रूप में देखा जाना चाहिए, समाज से सक्रिय प्रश्न और हस्तक्षेप का आह्वान करता है। केवल अवलोकन करना पर्याप्त नहीं है; किसी को मूल कारणों पर सवाल उठाना चाहिए और समाधान की मांग करनी चाहिए। कविता के अंत में सबसे चौंकाने वाला रहस्योद्घाटन यह है कि सभी संसाधनों और एक सामान्य दिखने वाली दुनिया के बावजूद, बाल श्रम का शोषण जारी है। यह एक गहरी सामाजिक बीमारी की ओर इशारा करता है जहाँ आर्थिक असमानताएँ और व्यवस्थागत विफलताएँ बचपन के बलिदान का कारण बनती हैं।

▶ समाज से सक्रिय प्रश्न और हस्तक्षेप का आह्वान

पवन करण

जन्म : 18 जून, 1964

शिक्षा : जनसंचार में स्नातकोत्तर।

सम्प्रति : राज्य शासन के स्वास्थ्य विभाग में नौकरी।

प्रकाशनः देश की महत्त्वपूर्ण साहित्यिक पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों में कविताओं के साथ-साथ समीक्षाएँ, साक्षात्कार और लेख प्रकाशित, कविताओं का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद, प्रमुख प्रतिनिधि समकालीन कविता संकलनों में कविताएँ संकलित,

म.प्र. साहित्य परिषद्, प्रगतिशील लेखक संघ एवं अन्य महत्त्वपूर्ण साहित्यिक आयोजनों में युवा कवि के तौर पर सक्रिय भागीदारी।

▶ 2000 के लिए म.प्र. साहित्य अकादमी का रामविलास शर्मा पुरस्कार

सम्मान एवं पुरस्कार : म.प्र. साहित्य परिषद् के सहयोग से वर्ष 2000 में पहला कविता-संग्रह इस तरह मैं प्रकाशित। कविता-संग्रह पर वर्ष 2002 में म.प्र. कला- परिषद् का प्रतिष्ठित रजा पुरस्कार एवं वर्ष 2000 के लिए म.प्र. साहित्य अकादमी का रामविलास शर्मा पुरस्कार।

अन्य : म.प्र. के प्रमुख समाचार पत्र नवभारत के ग्वालियर से प्रति रविवार प्रकाशित होनेवाले साहित्यिक पृष्ठ 'सृजन' का सम्पादन।

▶ चार काव्य-संग्रह

पवन करण आज के सलामी हिन्दी कवि हैं, हिन्दी काव्य जगत के, हिन्दी कविता के वर्तमान विकास-पथ के अमिट हस्ताक्षर हैं।वपररूपपुप मध्य प्रदेश के ग्वातियर में जन्मे पवन करण ने पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। अब तक पवन करण के चार काव्य-संग्रह निकले हैं। इस तरह मैं उनका प्रथम काव्य-संग्रह है। स्त्री मेरे भीतर पवन करण का दूसरा काव्य-संग्रह है जो बहुचर्चित एवं पुरस्कृत रचना है। अस्पताल के बाहर टेलीफ़ोन उनका तीसरा काव्य-संग्रह है जिसे स्त्री मेरे भीतर के समान व्यापक लोकप्रियता मिली है। कहना नहीं आता पवन करण का अद्यतन काव्य-संग्रह है।

▶ सूक्ष्म काव्याभिव्यक्ति

पवन करण की कविता वर्तमान जन-जीवन का आँखों देखा विवरण है। अपने आस-पास के परिवेश से, नित्य जीवन के प्रकरणों से, काव्य-सत्ता को समृद्ध करने की अद्भुत क्षमता पवन करण में है। जीवन के हर क्षण में, हर चाल में, हर हलन में वे कविता को तलाशते नज़र आते हैं। अतः उनकी कविता किसी दायरे में बन्द कविता नहीं। जीवन के जिन प्रसंगों को हम अनदेखा करते हैं, पवन की कविता में उनकी सूक्ष्म काव्याभिव्यक्ति है। पवन करण की पैनी दृष्टि आस-पास के, रोज़मर्रा के जीवन के विभिन्न आयामों पर पड़ती है, उन्हें तूलिका में भर देती है। विषय चयन के समान पवन करण के अभिव्यक्ति-पक्ष भी सहज, सरल एवं पठनीय हैं। पवन की कविता जनसाधारण के जीवन सरोकारों की व्याख्या है, इसलिए उनकी भाषा भी जनसाधारण की है।

पवन करण - स्त्री मेरे भीतर

एक स्त्री मेरे भीतर दीवार से पीठ टिकाए खड़ी है उदास
वह मेरे भीतर ही रहती है हमेशा
भीतर ही बुदबुदाती है रोती है भीतर ही

SGOU

भीतर ही अपनी ख़ामोशी बिछाकर लेट जाती है

किसी ज़रा-सी बात पर हो उठती है वह द्रवित
कोई बात ज़रा से में भर देती है उसकी आँख
किसी बात पर सुबकने लगती है वह
किसी बात पर हिचकियाँ भरते हुए करने लगती है विलाप

वह उसी तरह कराहती है मेरे भीतर जैसे मेरे जन्म के बाद
एक-एक कर चार लड़कियों को जन्म देकर
अपनी देह में जड़ें जमा चुके रोग से लड़ते हुए मेरी माँ
बिस्तर पर पड़े-पड़े मृत्यु से पहले जीवन के लिए कराहती थी

वह उसी तरह अपने को करती है अपमानित महसूस
जैसे सामूहिक बलात्कार के बाद एक स्त्री
अकेले में अपनी देह के बारे में सोचती है
और ख़ुद के प्रति ग़ुस्से और घृणा से भर उठती है

वह उसी तरह तिल-तिल मरती है मेरे भीतर
जैसे पति की मृत्यु के बाद एक स्त्री की आँख से
हमेशा के लिए खदेड़ दिया जाता है पुरुष का चेहरा
और एक चेहराविहीन पुरुष लगातार
उसके अँधेरे में उतरकर लूटता है उसे बर्बर

वह उसी तरह मेरे भीतर खीझती है
जैसे खूँटे पर बँधे-बँधे एक स्त्री
अपने सपनों को सड़ता हुआ देखती है
और सलाख़ों को अपने दाँतों से काटने की करती है कोशिश

आधी रात को आकाश उसकी नींद में
विषैला होकर बरसता है निरंतर
वह मेरे भीतर उसी तरह ख़ाली हाथ रहती है
जैसे ख़ाली हाथ बाहर दुनिया की सारी स्त्रियाँ

उसे इस तरह रहता देख लगता है जैसे
उसने अपने बदन पर जो कपड़े पहन रखे हैं
वे कपड़े भी न हों उसके, उसने जो चप्पलें पहन रखी हैं
अपने पैरों में, वे भी न हों उसके नाप की

वह जो मेरे भीतर बैठी है, मुँह सिए चुपचाप
किसी दृश्य के लिए मुझे मानते हुए ज़िम्मेवार
होते हुए चाहती है देखना मेरे साथ संगसार
किसी घटना के लिए वह थूकना चाहती है मेरे मुँह पर
किसी अन्याय के लिए चढ़ा देना चाहती है मुझे वह फाँसी

'स्त्री मेरे भीतर' कविता स्त्री जीवन की सच्चाईयों को उजागर करनेवाली कविता है। स्त्री हर रोज विभिन्न तकलीफों से गुजरती है। इन सबका विस्तार से इस कविता में कहा गया है।

शाब्दिक अर्थ

कविता की शुरुआती पंक्तियों में कवि कहता है कि एक स्त्री उनके भीतर उदास होकर दीवार से पीठ टिकाकर खड़ी है। कवि आगे कहता है कि वह स्त्री हमेशा उनके भीतर ही रहती है। वह स्त्री उनके भीतर ही बुदबुदाती है रोती है और भीतर ही खामोशी से रह जाती है। वह ज़रा ज़रा सी बात पर द्रवित हो उठती है ज़रा सी बात पर ही उसकी आंखें भर आती है छोटी-छोटी बातों पर वह सुबकने लगती है और हिचकियाँ करते हुए विलाप करने लगती है। कवि कहता है कि वह मेरे भीतर कराहने लगती है, जैसे लेखक की मां उनके बाद चार लड़कियों को जन्म देने के बाद अपनी देह में जड़ें जमा चुके रोग से लड़ते हुए जिस प्रकार मृत्यु से पहले जीवन के लिए कराहती थी, उसी प्रकार यह स्त्री भी कराहती है। कवि कहता है कि एक सामूहिक बलात्कार के बाद अपने देह के बारे में सोचते हुए खुद के प्रति गुस्सा और घृणा अनुभव करने वाली स्त्री के समान अपमान महसूस करती है। कवि आगे कहता है कि वह पति के मृत्यु के बाद पुस्त्रों की चेहरा उधेडी गई मन में अंधेरे में किसी चेहराविहीन पुस्त्र द्वारा लूट जाने पर जिसप्रकार स्त्री तिल तिल मरती है, उसी तरह मरती है। खूँटे पर बँधे एक स्त्री जिस प्रकार अपने सपनों को सड़ता हुआ देखती है उसी प्रकार वह खींचती है। और वह अपने दांतों से सलाखों को काटने की कोशिश करती है। हर दिन आधी रात को आकाश उसकी नींद में विषैला होकर बरसने लगता है। वह स्त्री कवि के भीतर इस तरह खाली हाथ रहती है जैसे इस दुनिया की सारी स्त्रियाँ खाली हाथ रहती है। उसकी इस तरह खाली हाथ रहने से ऐसा मालूम पड़ता है जैसे कि उसने जो कपड़े पहने हैं वह भी उसकी नहीं है उसने जो चपपलें पहन रखी है वह भी उसके पैरों के नाप की नहीं है। और वह कवि के ही भीतर मुंह को सिए हुए चुपचाप बैठी रहती है। किसी दृश्य के लिए वह लेखक को जिम्मेदार मानती है, किसी घटना के लिए वह

लेखक के मुंह पर थूकना चाहती है और किसी अन्याय के लिए वह लेखक को फाँसी पर चढ़ाना चाहती है।

आंतरिक अर्थ

इस कविता के माध्यम से कवि स्त्री जीवन की बारीकियों को पाठकों के सामने प्रस्तुत करना चाहते हैं। कवि स्त्री को अच्छी तरह से समझ लिया है, इसलिए उसके सारे तकलीफों से कवि वाकिफ है, स्त्री उनके भीतर ही रहती है। पहली पंक्तियों में कवि कहता है कि स्त्री उनके भीतर ही रहती है। इस 'भीतर' का तीन अर्थ निकाल सकते हैं। एक यह कि स्त्री लेखक के भीतर ही रहती है, अर्थात लेखक स्त्री को अच्छी तरह समझ ली है। दूसरी अर्थ यह निकलता है कि स्त्री घर के अंदर ही रहती है। और तीसरा अर्थ यह है कि स्त्री सारे दुख एवं दर्द अपने अंदर ही समाकर रखती है। स्त्री कवि के भीतर, घर के भीतर और अपने आप के भीतर ही बुदबुदाती है, रोती है, ख़ामोशी बिछाकर लेट जाती है।

▶ 'भीतर' का तीन अर्थ

आगे की पंक्तियों में कवि स्त्री की विशेषताएँ उद्घाटित करते हैं। स्त्री ज़रा सी बात पर डॉ हो उठती है और ज़रा सी बात पर उसकी आँखें भर आती है। किसी बात पर पर वह सुबकने और विलाप करने लगती है। यानी छोटी छोटी बातों में ही स्त्री का दिल पिघल जाता है। कवि आगे स्त्री जीवन की वेदनाओं का मर्म को आँकता है, वेदना की गहराईयों को हमारे सामने रखता है। मृत्यु से पहले जिस तरह जीवन केलिए कराहा जाता है उसी प्रकार स्त्री इस सामाजिक व्यवस्था की चंगुल में फँसकर कराहती है। हर रोज़ की तिरसकार एवं अवमाननाओं से वह बलात्कारित नारी की तरह अपमान महसूस करती है। वह अपने आपसे, अपने वजूद से, अपने शरीर से नफरत करने लगती है। वह अपनी अवस्था को सोचकर तिल तिल मरती है। और पुरुष उसकी इन अवस्थाओं को देखकर उसका फायदा उठाता है।

▶ स्त्री जीवन की वेदनाओं का मर्म को आँकता है

अपनी सपनों को सड़ता हुआ देखकर खूँटे पर बँधे-बँधे कुछ ना कर पाने को विवश स्त्री की तरह वह भीतर खीझती है, उसे अपनी भावनाओं को बाहर दुनिया के सामने रखने का भी अधिकार नहीं। वह समाज की सलाख़ों के अंदर कैद हैं, और इन सलाख़ों को अपने दाँतों से काटने की कोशिश करती है अर्थात वह इन सामाजिक व्यवस्थाओं को तोड़ देना चाहती है। रात को वह अपनी जीवन के बारे में सोचकर आँसू बहाती है, रात उसकी दर्द को तीव्र बना देता है और आकाश उसपर विषैला होकर बरसता है। दुनिया की ज्यादातर स्त्रियों के समान वह भी खाली हाथ रहती है। अर्थात अपने पास कुछ न होकर और दूसरों के आश्रय में रहती है। उसके इस तरह से रहने को कवि कुछ भी उसके हिज़ाब के ना होना कहता है। जो कुछ उसके जीवन में होता है वह ना उसकी इच्छा के हिज़ाब के होता है ना ही वह जो कपड़े और चप्पलें उसके नाप के। उसके पास खुद का कहने केलिए कुछ भी नहीं हैं।

▶ कुछ भी उसके हिज़ाब के ना होना

यह स्त्री कवि के भीतर, घर के भीतर और अपने आप के भीतर मुँह को सिए हुए

चुपचाप रहती है और लेखक को या फिर लेखक समेत इस समूह को अपनी तरफ हो रही अन्याय केलिए ज़िम्मेदार मानती है। इस समूह की गंदी चेहरे पर थूकना चाहती है और अपनी तरफ की गई अन्यायों केलिए इस समाज को फाँसी पर चढ़ा देना चाहती है।

उदय प्रकाश

जन्म : 1952, मध्य प्रदेश के शहडोल (अब अनूपपुर) जिले के गाँव सीतापुर में।

शिक्षा : सागर वि.वि. सागर और जवाहरलाल नेहरू वि.वि., नई दिल्ली में।

कार्य : जवाहरलाल नेहरू वि.वि. और इसके मणिपुर केन्द्र में लगभग चार वर्ष तक अध्यापन। संस्कृति विभाग, मध्य प्रदेश, भोपाल में लगभग दो वर्ष विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी। इसी दौरान 'पूर्वग्रह' का सहायक संपादन। नौ वर्षों तक टाइम्स ऑफ इंडिया के समाचार पाक्षिक 'दिनमान' के सम्पादकीय विभाग में नौकरी। बीच में एक वर्ष टाइम्स रिसर्च फाउंडेशन के स्कूल ऑफ सोशल जर्नलिज्म में अध्यापन। लगभग दो वर्ष पी.टी.आई. (टेलिविज़न) और एक वर्ष इंडिपेंडेंट टेलीविज़न में विचार और पटकथा प्रमुख। कुछ समय 'संडे मेल' में वरिष्ठ सहायक संपादक रहे। इन दिनों स्वतंत्र लेखन तथा फिल्म और मीडिया के लिए लेखन।

▶ स्वतंत्र लेखन तथा फिल्म और मीडिया के लिए लेखन

▶ चेतना पर निरंतर जमती जाती धूल को हटाकर उसके अन्दर झाँकना

उदयप्रकाश कविता को हर बार वहाँ से पकड़ने की कोशिश करते हैं जहाँ से उसका मूल उत्स है। इसलिए वह अपने अनुभव - लोक में हमेशा इस तरह प्रवेश करते हैं- 'विकसित सभ्यताएँ जिस तरह लौट जाती हैं धरती के गर्भ में' या 'इतिहास जिस तरह विलीन हो जाता है समूह की मिथकगाथा में', हमारी चेतना पर निरंतर जमती जाती धूल को हटाकर उसके अन्दर झाँकने का यह उनका अपना ढंग है, जहाँ यथार्थ और स्वप्न के बीच के सारे कामचलाऊ विभाजन अर्थहीन हो जाते हैं। यह कवि उदय प्रकाश की एक ऐसी काव्य युक्ति है जिसे उन्होंने अपने लम्बे आत्मसंघर्ष के भीतर से अर्जित किया है।

▶ कृतियाँ

कृतियाँ : 'सुनो कारीगर', 'अबूतर-कबूतर', 'रात में हारमोनियम, एक भाषा हुआ करती है' (कविता संग्रह)। 'दरियाई घोड़ा', 'तिरिछ', 'और अंत में प्रार्थना', 'पॉल गोमरा का स्कूटर', 'पीली छतरी वाली लड़की', 'दत्तात्रेय के दुख', 'मोहन दास', 'अरेबा परेबा', 'मैंगोसिल' (कहानी संग्रह)। 'ईश्वर की आँख', 'अपनी उनकी बात' और 'नयी सदी का पंचतंत्र' (निबंध, आलोचना, साक्षात्कारों का संकलन)

अनुवाद : 'लाल घास पर नीले घोड़े' (मिखाइल शात्रेव के नाटक का अनुवाद और रूपान्तर), 'कला अनुभव' (प्रो. हरियन्ना की सौन्दर्यशास्त्रीय पुस्तक का अनुवाद), 'इंदिरा गांधी की आखिरी लड़ाई' (बी.बी.सी. संवाददाता मार्क टुली-सतीश जैकब की

किताब का हिन्दी अनुवाद), 'रोम्याँ रोलां का भारत' (आंशिक अनुवाद और सम्पादन)।

पुरस्कार : भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार (1980), ओमप्रकाश साहित्य सम्मान (1982), श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार (1992), मुक्तिबोध पुरस्कार (1996), साहित्यकार सम्मान, हिंदी अकादेमी, दिल्ली (1999), रामकृष्ण जयदयाल सद्भावना सम्मान (1997), पहल सम्मान (2003), कथाक्रम सम्मान (2005), पुश्किन सम्मान (2006), द्विजदेव सम्मान (2006-07)।

▶ मुक्तिबोध पुरस्कार (1996)

उदय प्रकाश - घोड़े की सवारी

लड़का उसे बड़ी देर से
घोड़ा कहकर
उसकी टाँगों पर
चढ़ रहा था ।

वह लेटा हुआ था पीठ के बल ।
बायें घुटने पर
दायीं टाँग थी
जो लड़के लिए घोड़े की
पीठ थी ।
उसके पैर के अँगूठे को लड़का
घोड़े के कान की तरह
एंठ रहा था ।

उसने टाँगें हिलाईं धीरे से कि
लड़का गिरे नहीं
'चला घोड़ा, चला' लड़के ने
ताली पीटी और जीभ से
चख-चख की आवाज़ निकाली ।

उसके सिर में दर्द था सुबह से ही
वह सोना चाहता था तुरंत
लेकिन लड़के ने घंटे भर से उसे
घोड़ा बना रखा था

अचानक लड़का गिरा फ़र्श पर
उसका माथा दीवार से टकराया
उसे लगा, लड़के को

SGOU

चोट ज़रूर आई होगी

उसने वापस आदमी होने की
कोशिश की और
उठकर बैठ गया'

वह लड़के को चुप कराना
चाहता था'

लेकिन उसके गले में से
थके हुए घोड़े की
हिनहिनाहट निकली सिर्फ़ !

उदय प्रकाश हिंदी साहित्य के एक बहुमुखी और प्रभावशाली लेखक हैं, जिन्होंने कहानी, कविता और निबंध तीनों विधाओं में अपनी गहरी छाप छोड़ी है। उनकी कहानियाँ विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं, जो अक्सर यथार्थवादी चित्रण, व्यंग्य और कभी-कभी जादुई यथार्थवाद के पुट के लिए जानी जाती हैं। वे समाज के निचले तबके, ग्रामीण जीवन और आधुनिकता के प्रभावों को अपनी रचनाओं में बखूबी दर्शाते हैं। उदय प्रकाश अपनी चुभती हुई भाषा, सूक्ष्म अवलोकन और जटिल मानवीय संबंधों को सरलता से प्रस्तुत करने की क्षमता के कारण हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनकी लेखन शैली सीधी और प्रभावी होती है, जो पाठक को सीधे विषय से जोड़ती है।

▶ जादुई यथार्थवाद

घोड़े की सवारी कविता उदय प्रकाश द्वारा रचित, पिता-पुत्र के रिश्ते की एक सूक्ष्म और मार्मिक झलक प्रस्तुत करती है, जहाँ एक पिता अपने बच्चे की खुशी के लिए अपने दर्द को भी गौण कर देता है।

शाब्दिक अर्थ

कविता में एक लड़के का वर्णन है जो बहुत देर से एक आदमी को घोड़ा बनाकर उसकी पीठ पर चढ़कर खेल रहा है। वह आदमी पीठ के बल लेटा हुआ है और उसकी दायीं टाँग उसके बायें घुटने पर है, जो लड़के के लिए घोड़े की पीठ बनी हुई है। लड़का उसके पैर के अंगूठे को घोड़े के कान की तरह मरोड़ रहा है। आदमी धीरे से अपनी टाँगें हिलाता है ताकि लड़का गिरे नहीं, और लड़का खुश होकर ताली पीटता है और जीभ से 'चख-चख' की आवाज़ निकालता है, जैसे घोड़ा चल रहा हो। उस आदमी के सिर में सुबह से दर्द था और वह तुरंत सोना चाहता था, लेकिन लड़के ने उसे एक घंटे से घोड़ा बना रखा था। अचानक लड़का फर्श पर गिर जाता है और उसका माथा दीवार से टकराता है। आदमी को लगता है कि लड़के को ज़रूर चोट लगी होगी। वह वापस 'आदमी' बनने की कोशिश करता है और उठकर बैठ जाता है। वह लड़के को

▶ एक आदमी को घोड़ा बनाकर उसकी पीठ पर चढ़कर खेल रहा लड़के का वर्णन

चुप कराना चाहता था, लेकिन उसके गले से थके हुए घोड़े की हिनहिनाहट निकलती है, जो एक खाली आवाज है ('सफ!')।

आंतरिक अर्थ

- पिता के निस्वार्थ प्रेम, त्याग

कविता का आंतरिक अर्थ पिता के निस्वार्थ प्रेम, त्याग और बच्चे के प्रति उसकी गहरी भावनात्मक संलग्नता में निहित है। आदमी का सिर दर्द और सोने की इच्छा उसके अपने कष्ट और आवश्यकताओं का प्रतीक है, जिन्हें वह अपने बच्चे की खुशी के लिए दरकिनार कर देता है। उसका 'घोड़ा' बनना सिर्फ एक खेल नहीं, बल्कि अपने बच्चे के साथ जुड़ने और उसे खुशी देने का एक रूपक है, भले ही इसके लिए उसे शारीरिक कष्ट क्यों न उठाना पड़े।

- पिता की अथाह थकान, लाचारी

जब लड़का गिरता है, तो आदमी तुरंत 'आदमी' बनने की कोशिश करता है - यह उसके पिता की भूमिका में वापस आने और बच्चे की देखभाल करने की तात्कालिकता को दर्शाता है। उसकी तत्काल चिंता लड़के की चोट को लेकर है। हालाँकि, अंत में उसके गले से निकली 'थके हुए घोड़े की हिनहिनाहट' बहुत प्रतीकात्मक है। यह सिर्फ एक आवाज़ नहीं, बल्कि पिता की अथाह थकान, लाचारी और उस भूमिका से उत्पन्न आंतरिक कष्ट की अभिव्यक्ति है जिसे वह चुपचाप निभा रहा है। यह हिनहिनाहट दर्शाती है कि शारीरिक रूप से वह भले ही 'आदमी' बन गया हो, लेकिन भावनात्मक और मानसिक रूप से वह अभी भी उस 'घोड़े' की थकान को महसूस कर रहा है। 'सफ!' शब्द उसकी बेबसी, उसकी आवाज़ के खालीपन और शायद समाज की उस उदासीनता को दर्शाता है जो इस तरह के अदृश्य त्याग को पहचानती नहीं। यह कविता पिता के उस मौन त्याग को उजागर करती है जो अक्सर अनदेखा रह जाता है।

अरुण कमल (जन्म-14 फरवरी, 1954 ई.)

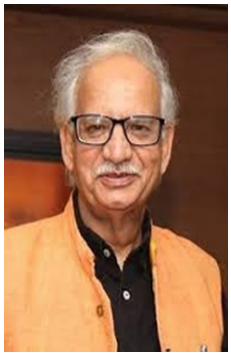

- चार कविता संग्रह

अरुण कमल का जन्म बिहार में रोहतास जिले के नासरीगंज में हुआ। वे पटना विश्वविद्यालय के छात्र रहे और वहीं अंग्रेजी के प्रोफेसर हैं। प्रगतिशील कविता की वर्तमान पीढ़ी के रचनाकारों में अरुण कमल सर्वाधिक चर्चित कवि हैं। उनके अब तक चार कविता संग्रह प्रकाशित हैं-'अपनी केवल धार' (1980) 'सबूत' (1989), 'नये इलाके में' (1996) 'पुतली में संसार' (2004)। एक आलोचना-पुस्तक 'कविता और समय' प्रकाशित। इनके अलावा वियतनामी कवि तो हूँ की कविताओं-टिप्पणियों की एक अनुवाद- पुस्तिका, 'मायकोव्स्की' की आत्मकथा का अनुवाद तथा अंग्रेजी में 'वायसेज' नाम से भारतीय युवा-कविता के अनुवाद प्रकाशित। अनेक पत्र-पत्रिकाओं तथा इंटरनेट पत्रिका 'लिटरेट वर्ल्ड' के लिए स्तंभ-लेखन। 'नये इलाके में' काव्य- संग्रह के लिए वर्ष 1998 का साहित्य अकादमी पुरस्कार। अफ्रो-एशियाई युवा लेखक सम्मेलन में भारत के प्रतिभागी।

SGOU

▶ पुतली में संपूर्ण संसार को समेटने की क्षमता रखनेवाले आज के अपूर्व कवि

अरुण कमल की कविता संपूर्ण मानव-स्थिति की कविता है, जीवन के प्रति गहरी लालसा की कविता है। इसलिए छोटे-छोटे विषयों पर लिखी गई कविता भी अपने अर्थ दूर तक प्रक्षेपित करती है। उनकी कविताओं में मानव-जीवन और समाज की विसंगतियों का मार्मिक उद्‌घाटन और उन के प्रति एक सुलझी हुई विवेचक दृष्टि मिलती है, एक नई कोशिश मिलती है जीवन को देखने परखने की, एक गहरा नैतिक-बोध जो पहले मुखर नहीं था। राजनीतिक सत्ता द्वारा किये जा रहे मानव-जीवन के निरन्तर क्षरण एवं दरिद्रीकरण तथा आभ्यंतर के अतिक्रमण को तीक्ष्णता से प्रस्तुत करते हुए उनकी कविताएँ उन स्वरों, उन प्रसंगों की खोज भी करती हैं जो सत्ता का निषेध या प्रतिरोध हैं और इसलिए जीवन के श्रेष्ठतम मूल्यों का स्वीकार व समर्थन। अपने को और अपने समाज को लगातार खोजने, उद्‌घाटित करने और पारिभाषित करने की रचनात्मक कोशिश में उनकी कविताएँ भाषा और शिल्प के स्तर पर साहसिक और प्रयोगधर्मी हैं। ताज़े बिम्ब, लक्षणाएँ और बातचीत के लहज़े उनके विशिष्ट लक्षण हैं। अरुण कमल अपनी पुतली में संपूर्ण संसार को समेटने की क्षमता रखनेवाले आज के अपूर्व कवि हैं।

अरुण कमल - मुक्ति

आज जब पढ़ते-पढ़ाते मैंने तुझे
मारा, मेरे बच्चे
तब क्यों भर गयीं मेरी आँखें
नम क्यों हो गए मेरे नाखून तक?

तुम रोए नहीं, तुम हिले भी नहीं
बैठे रहे चुपचाप पाँव पर पाँव धरे
और मैंने देखे तुम्हारे उघरे हुए
लम्बे साँवले पाँव।

अब जब सोचता हूँ ठण्डे मन से
अब जब उतरी है बाढ़
देखता हूँ अपने ही अन्दर दुर्गन्ध और
पाँक से
भरी हुई गलियाँ
टूटे मकान, दही भित्तियाँ
देखता हूँ अपना विनाश।

दोष मेरा ही था
मैंने कभी पूछा नहीं, कैसे हो तुम
जानता भी नहीं था क्या-क्या पढ़ते हो

तुम
और आज जब अचानक देखा मैंने तुम
कुछ भी नहीं जानते
मेरा लड़का कुछ भी नहीं जानता

तब ...
सोचो मैं कितना दुखी था
ह्रदय ने बाँटे थे धमनियों में जो रक्त
आज
वे ही रक्त घोंटते थे ह्रदय।

दोष लेकिन मेरा भी क्या था
मैं एक रिटायर्ड स्कूल मास्टर
जो सुबह से शाम तक घूमता है यहाँ से
वहाँ

इस-उसके बेटे-बेटियों को ट्यूशन पढ़ाता
बैठता कैसे थोड़ी भी देर खुद अपने बेटे के पास-
जब घर से निकलता, तुम सोए होते
जब लौटता, तुम सोए होते।

चार साल हो गए,
चार साल हो गए अवकाश मिले-
कितना अच्छा था देखना एक भरा हुआ
कमरा
सूर्यमुखी फूलों-सी सैकड़ों आँखें घूमतीं
मेरे साथ
मैं खिच्चा उँगलियों में खल्लियाँ
पकड़ाता-और आज मैं सेवा-मुक्त हूँ, आजाद;
क्या किया मैंने इस जीवन में
सयानी लड़कियाँ, बच्चे, कच्ची गृहस्थी
अभी भी जिन्दगी ढूँढ़ती है धुरी
अभी भी जिन्दगी ढूँढ़ती है मुक्ति
कहाँ अवकाश, कहाँ समाप्ति
अभी ही तो शुरू हुई जिन्दगी
अभी ही तो चरखे में डाली है पूनी।

SGOU

क्यों उठ गए थे हाथ
आज क्यों उठे मेरे हाथ।

▶ सीधी, मारक और संवेदनात्मक भाषा के लिए जाने जाते हैं

अरुण कमल समकालीन हिंदी कविता के एक महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। उनकी कविताओं में सामाजिक विसंगतियों, राजनीतिक चेतना और मानवीय संवेदना का गहरा मेल दिखाई देता है। वे अपनी सीधी, मारक और संवेदनात्मक भाषा के लिए जाने जाते हैं। अरुण कमल अपनी कविताओं में आम आदमी के जीवन, उसके संघर्षों और उसकी आकांक्षाओं को बड़ी बारीकी से चित्रित करते हैं। उनकी भाषा में एक सहज प्रवाह और गेयता होती है, जो उनके विचारों को पाठक तक प्रभावी ढंग से पहुँचाती है। वे उन कवियों में से हैं जो सामाजिक यथार्थ को अपनी कविता का आधार बनाते हुए भी उसमें एक गहरी दार्शनिकता और मानवीयता भर देते हैं।

'मुक्ति' कविता एक पिता के पश्चाताप, आत्म-चिंतन और अपने बच्चे के प्रति उपेक्षित कर्तव्य-बोध की मार्मिक प्रस्तुति है, जिसमें शिक्षा और जीवन के संघर्षों के बीच मानवीय संबंधों की जटिलता को दर्शाया गया है।

शाब्दिक अर्थ

▶ अपने बच्चे को पढ़ाते हुए मारता है

कविता की शुरुआत में कवि (पिता) बताता है कि आज जब वह अपने बच्चे को पढ़ाते हुए मारता है, तो उसकी आँखें नम क्यों हो जाती हैं और उसके नाखून तक क्यों भर आते हैं। बच्चा रोता नहीं, हिलता भी नहीं, चुपचाप पैर पर पैर धरे बैठा रहता है। पिता उसके उघड़े हुए लंबे साँवले पाँव देखता है।

▶ दोष उसी का था

पिता अब ठंडे मन से सोचने पर पाता है कि जैसे बाढ़ उतरने के बाद दुर्गंध और कीचड़ रह जाती है, वैसे ही उसके भीतर भी गली हुई गलियाँ, टूटे मकान और दही-भत्तियाँ (नष्ट हुई चीजें) दिखती हैं - उसे अपना ही विनाश दिखाई देता है। वह स्वीकार करता है कि दोष उसी का था क्योंकि उसने कभी बच्चे से यह नहीं पूछा कि वह कैसा है, न ही वह जानता था कि बच्चा क्या पढ़ता है। जब उसे अचानक पता चला कि उसका लड़का कुछ भी नहीं जानता, तो वह बहुत दुखी हुआ। उसका हृदय रक्त धमनियों में संचारित करने की बजाय, खुद ही रक्त को घोंट रहा था (यानी अत्यधिक पीड़ा में था)।

पिता फिर अपने बचाव में कहता है कि दोष उसका भी क्या था। वह एक सेवानिवृत्त स्कूल मास्टर है जो सुबह से शाम तक यहाँ-वहाँ घूमकर दूसरों के बेटे-बेटियों को ट्यूशन पढ़ाता है। उसे खुद अपने बेटे के पास बैठने का समय नहीं मिलता था - जब वह घर से निकलता, तो बेटा सोया होता और जब लौटता, तब भी वह सोया होता।

पिता बताता है कि उसे अवकाश मिले चार साल हो गए हैं। उसे याद आता है कि स्कूल में एक भरा हुआ कमरा देखना कितना अच्छा लगता था, जहाँ सूरजमुखी के फूलों जैसी सैकड़ों आँखें उसके साथ घूमती थीं, और वह अपनी उंगलियों में खिल्लियाँ (लिखने की चीजें) पकड़ाता था। लेकिन अब वह सेवा-मुक्त (सेवानिवृत्त), आज़ाद है।

▶ उसे अवकाश मिले चार साल हो गए हैं

वह पूछता है कि उसने इस जीवन में क्या किया। अब भी सयानी लड़कियाँ, बच्चे, कच्ची गृहस्थी हैं। अभी भी जिंदगी धुरी और मुक्ति ढूँढ़ रही है। कहाँ अवकाश, कहाँ समाप्ति? जिंदगी तो अभी शुरू हुई है, अभी तो चरखे में पूनी डाली है (यानी काम अभी शुरू ही हुआ है)।

अंत में, वह फिर से खुद से पूछता है कि आज उसके हाथ क्यों उठ गए, क्यों उसने अपने बच्चे को मारा।

आंतरिक अर्थ

▶ पितृत्व के संघर्ष

कविता का आंतरिक अर्थ पितृत्व के संघर्ष, अपेक्षाओं के बोझ और आत्म-उपलब्धि बनाम पारिवारिक कर्तव्यों के बीच के द्वंद्व को दर्शाता है। पिता का बच्चे को मारना और फिर तुरंत पछताना यह दिखाता है कि वह अपने बच्चे के प्रति अपनी अनजानी उपेक्षा से कितना व्यथित है। बच्चे का चुपचाप बैठे रहना और न रोना उसके भावन्-ाात्मक अलगाव या शायद डर को दर्शाता है, जो पिता को और अधिक अपराधबोध से भर देता है।

'अपने ही अन्दर दुर्गंध और पाँक से भरी हुई गलियाँ, टूटे मकान, दही भत्तियाँ' का बिंब पिता के आंतरिक पश्चाताप, आत्म-ध्वंस और अपने जीवन की विफलताओं का प्रतीक है। उसे यह एहसास होता है कि दूसरों को शिक्षा देने में वह इतना व्यस्त रहा कि अपने ही बच्चे की शिक्षा और भावनात्मक ज़रूरतों को पूरा नहीं कर पाया।

▶ जीविका कमाने में व्यस्त लोग अपने परिवार को पर्याप्त समय नहीं दे पाते

पिता का खुद को एक 'रिटायर्ड स्कूल मास्टर' बताना और दूसरों को ट्यूशन पढ़ाने का उल्लेख उसकी आर्थिक विवशता और समय के अभाव को दर्शाता है। वह यह कहने की कोशिश कर रहा है कि वह चाहता तो था अपने बेटे के साथ समय बिताना, लेकिन जीवन की मजबूरियों ने उसे ऐसा करने नहीं दिया। यह आधुनिक समाज में समय की कमी और प्रतिस्पर्धा के दबाव को भी दर्शाता है, जहाँ लोग जीविका कमाने में इतने व्यस्त हो जाते हैं कि अपने ही परिवार को पर्याप्त समय नहीं दे पाते।

▶ जिम्मेदारियों और अनसुलझे सवालों के बोझ तले दबा हुआ है

कविता के अंत में 'कहाँ अवकाश, कहाँ समाप्ति अभी ही तो शुरू हुई जिंदगी अभी ही तो चरखे में डाली है पूनी' पंक्तियाँ जीवन के प्रति एक अनवरत संघर्ष और अथक यात्रा को दर्शाती हैं। 'मुक्ति' का अर्थ केवल सेवा-निवृत्ति से स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि जीवन के दायित्वों से मुक्ति, या शायद अपने ही अपराधबोध से मुक्ति है जो उसे नहीं मिल पाती। वह यह महसूस करता है कि बाहरी रूप से वह आज़ाद है, लेकिन अंदरूनी तौर पर अभी भी जिम्मेदारियों और अनसुलझे सवालों के बोझ तले दबा हुआ है। 'क्यों उठ गए थे हाथ आज क्यों उठे मेरे हाथ' यह दोहराव पिता के आत्म-संघर्ष और इस बात की गहरी पीड़ा को दर्शाता है कि उसे अपने बच्चे पर हाथ क्यों उठाना पड़ा, जो उसके अपने ही अधूरेपन और निराशा का परिणाम था।

SGOU

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने अस्सी के बाद की हिन्दी कविताओं के बारे में चर्चा की है। पूर्ववर्ती काव्य से भिन्न एवं नित नवीन विषय एवं शिल्प का इस काल में प्रयोग हुआ। इस दौर की कविताओं में भूमंडलीकरण का प्रभाव भी दृष्टिगत होता है। इस समय के कुछ प्रमुख कवियों का ज़िक्र भी इस अध्याय में किया गया और कुछ प्रमुख कविताओं का भी चर्चा हुआ है।

'बच्चे काम पर जा रहे हैं' कविता में बालश्रम की गंभीरता पर चर्चा किया गया है। कवि बालश्रम की विभीषिका को सवाल की तरह देखने को कहता है। 'स्त्री मेरे भीतर' कविता में तो स्त्री जीवन की उस्त व्यस्तता एवं दुख दर्द की बखान हुआ है। 'घोड़े की सवारी' कविता में पिता का बच्चे के प्रति प्रेम एवं उसकी थकावट की चर्चा हुई है और 'मुक्ति' कविता में ज़िम्मेदारियों की बोझ तले दबे व्यक्ति की मुक्ति की चाह और गुजरे हुए समय की बात होती है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. अस्सी के बाद की हिन्दी कविता पर प्रकाश डालिए।
2. अस्सियोत्तर हिन्दी कविता की कथ्यगत एवं शिल्पगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. हिन्दी कविता पर भूमंडलीकरण का प्रभाव पर टिप्पणी लिखिए।
4. 'बच्चे काम पर जा रहे हैं' कविता पर टिप्पणी लिखिए।
5. 'बच्चे काम पर जा रहे हैं' कविता पर चित्रित समस्या क्या है? क्या आज भी समाज में इस तरह की समस्याओं का वर्चस्व है?
6. 'स्त्री मेरे भीतर' कविता की आस्वादन टिप्पणी तैयार कीजिए।
7. 'घोड़े की सवारी' कविता पर चित्रित पिता की अवस्था पर चर्चा कीजिए।
8. 'मुक्ति' कविता की पिता ज़िंदगी में सफल हुआ है की नहीं? अपना मत व्यक्त कीजिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. प्रो जयमोहन एम एस - अध्यतन हिन्दी कविताएँ
2. संतोष कुमार चतुर्वेदी - काव्य सरगम
3. सत्यप्रकाश मिश्र - हिन्दी काव्य सोपान

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. समकालीन कवि और काव्य - कल्याण चन्द्र।
2. नई कविता का सामाजिक पक्ष - डॉ. लालता प्रसाद सक्सेना
3. समकालीन कविता में मानव मूल्य - डॉ. हुकुमचन्द्र राजपाल
4. नई कविता : एक मूल्याँकन - डॉ. शुभदत्त पाण्डेय
5. भूमंडलीकरण की चुनौतियाँ - सच्चिदानंद सिन्हा
6. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

SGOU

इकाई 2

कविता का प्रतिरोधात्मक स्वर - दलित, आदिवासी, किन्नर, स्त्री दलित - बस्स बहुत हो चुका - ओमप्रकाश वाल्मीकि आदिवासी - हरिराम मीणा - एकलव्य पुनर्पाठ किन्नर - अनीता मिश्रा - किन्नर स्त्री - अनामिका - स्त्री कवियों की जहालतें

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- दलित साहित्य के बारे में अवगत होता है
- आदिवासी विमर्श से परिचय प्राप्त करता है
- किन्नर विमर्श की मतलब समझता है
- स्त्री विमर्श के संबंध में जानकारी हाज़िल करता है
- 'बस्स बहुत हो चुका' कविता का विषय समझता है
- 'एकलव्य पुनर्पाठ' कविता का अध्ययन करता है
- 'किन्नर' कविता से परिचित होता है
- 'स्त्री कवियों की जहालतें' कविता की जानकारी प्राप्त करता है

Background / पृष्ठभूमि

हिन्दी साहित्य में समय समय पर विभिन्न विषयों को लेकर प्रतिरोधात्मक स्वर निकाले गए हैं। समूह में हाशिएकृत एवं हीन समझे जानेवाले लोगों के साथ हिन्दी साहित्य एवं साहित्यकार हमेशा रहा है। इस तरह दलित, आदिवासी, किन्नर, स्त्री आदि विमर्शों का उद्भव हुआ। प्रत्येक विमर्श के अंतर्गत उसमें हो रही अत्याचार एवं अनाचारों का पर्दाफाश हुआ है। साहित्य के विभिन्न विधाओं में इन विमर्शों का चर्चा हुआ है जैसे कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध आदि। उसी तरह हिन्दी कविता में भी पर्याप्त मात्रा में इन विमर्शों का चर्चा हुआ है। इसका परिचय इस अध्याय से हम प्राप्त कर सकते हैं। इस अध्याय में उल्लिखित विमर्शों से प्रत्येक के अंतर्गत आनेवाले कविताओं को शामिल किया हुआ है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

प्रतिरोधात्मक स्वर, दलित, आदिवासी, किन्नर, स्त्री, बस्स बहुत हो चुका, ओमप्रकाश वाल्मीकि, हरिराम मीणा, एकलव्य पुनर्पाठ, अनीता मिश्रा, किन्नर, अनामिका, स्त्री कवियों की जहालतें

SGOU

Discussion / चर्चा

कविता का प्रतिरोधात्मक स्वर - दलित, आदिवासी, किन्नर, स्त्री दलित

दलित कौन है? ' सामान्यतः परंपरागत वर्ण व्यवस्था में शूद्र और पंचम वर्ण के अंतर्गत आने वाले समुदाय को, जो सवर्णों द्वारा अस्पृश्य माना जाता रहा है, 'दलित' कहा जाता है।' इन लोगों को इस वजह से जीवन में अनगिनत तकलीफों एवं चुनोतियों का सामना करना पड़ता है। इन सबका ज़िक्र दलित विमर्श के अंतर्गत होता है। हिन्दी में दलित विमर्श की वर्तमान में तीन धाराएँ परिलक्षित होती हैं, प्रथम श्रेणी में वे लेखक आते हैं जिनका जन्म दलित जातियों में हुआ है, जिनके पास सहानुभूति का विराट संसार है। दूसरी श्रेणी में सवर्ण लेखक आते हैं जिन्होंने दलितों का चित्रण सौन्दर्य की विषयवस्तु मानकर किया। तीसरी श्रेणी उन प्रगतिशील लेखकों की है जो दलितों के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त कर उन्हें सर्वहारा की स्थिति में देखते हैं।

▶ परंपरागत वर्ण व्यवस्था में शूद्र और पंचम वर्ण के अंतर्गत आने वाले समुदाय

आधुनिक हिन्दी साहित्य में आधुनिक दलित साहित्य का आरंभ अछूतानन्द जी से माना जाता है, जिनपर कबीर, रैदास और नानकदेव की रचनाओं का गहरा प्रभाव पड़ा था। स्वामी अछूतानन्द जी ने लोक साहित्य के माध्यम से जन-जागरण का प्रयास किया। शम्बूक नाटक उन्होंने लोकभाषा में लिखा। दलित हित चिंतन का साहित्य कौन सा है, यह अभी विवाद का विषय बना हुआ है। इस साहित्य लेखन में जातिगत विभाजन केन्द्र में है। दलित साहित्य और चिन्तन से जुड़े अधिकांश विद्वत मनीषियों का मानना है कि वास्तविक दलित साहित्य वहीं है जो दलितों द्वारा लिखा गया है। गुलामी की यातना को जो सहता है वहीं इसे जानता है और जो भोगता है वही पूरा सच कह सकता है।

▶ दलित साहित्य का आरंभ अछूतानन्द जी से

'सचमुच राख ही जानती है, जलने का अनुभव कोई और नहीं- फूले की इस पंक्ति से स्पष्ट है कि दलित जीवन की वास्तविक पीड़ा को वह व्यक्त कर सकता है जो स्वयं दलित हो। चाहे वह संत रैदास की वाणी हो या हीराडोम की शिकायत। हिन्दी साहित्य में आज भी दलित साहित्य को लेकर दो धाराओं में विद्वान विभक्त हैं। पहला वर्ग डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ. शिव कुमार मिश्र, डॉ. ज्योतिष जोशी, डॉ. नामवर सिंह, डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव, श्री खगेन्द्र ठाकुर, प्रेम कुमार मणि आदि आलोचकों का है, जो यह मानते हैं, कि सवर्ण लेखक द्वारा दलित जाति से सम्बन्धित लिखी गयी रचनाएँ भी 'दलित-साहित्य' है। इन लेखकों के अपने-अपने तर्क हैं।

▶ दलित साहित्य को लेकर दो धाराओं में विद्वान विभक्त हैं

साहित्य की रचना प्रक्रिया में सहानुभूति और स्वानुभूति में वैसा फर्क नहीं रह जाता, जैसा विचारों के स्तर पर हम समझते हैं। वहाँ तो सब रचनाकार की आत्मानुभूति का अंग बन जाता है। रचना-प्रक्रिया में सहानुभूति का आभ्यंतरीकरण होता है, अंगीकरण होता है, फिर तो वह रचनाकार की चेतना में रच-बसकर रचनाकार की संवेनदशीलता का अंग बन जाता है। रचनाकार रचना करता है। सृजन करता है। वह अपने अपार काव्य संसार का प्रजापति होता है। रचना के जरिये दूसरों को जगाता है, नई चेतना, नये

▶ रचना प्रक्रिया में सहानुभूति और स्वानुभूति में फर्क नहीं रह जाता

मूल्य और नये सम्बन्ध का निर्माण करना चाहता है, इसलिए कोई लेखक दलित नहीं होता है। दलितों के बारे में केवल दलित ही लिखे, इस सिद्धान्त का स्रोत आश्रम में वह राजनीति है, जिसके अनुसार कहा जा रहा है कि दलित केवल दलितों को ही वोट दें।'

▶ हजारों वर्षों से दलित समाज ने जो यातना भोगी है, उसकी पीड़ा गैर दलित अनुभव नहीं कर सकता

दूसरा वर्ग भी ओमप्रकाश बाल्मीकि, डॉ. पनता वर्ण, अखिलेश, चंचल चौहान, कमला प्रसाद, जयप्रकाश कर्दम, दिनेशराम, कंवल भारती, विवेक कुमार, श्यौराज सिंह बेचैन, मुद्राराक्षस आदि का है, जिनका कहना है कि दलित ही दलित लेखन कर सकता है, क्योंकि हजारों वर्षों से दलित समाज ने जो यातना भोगी है, उसकी पीड़ा गैर दलित अनुभव नहीं कर सकता। इसलिए उनका साहित्य करुणाजन्य व सहानुभूतिपरक है, उनमें आक्रोश और बदलाव की प्रक्रिया की तीव्रता नहीं है; इन विद्वानों के तर्क हैं- दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है, जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रूपायित किया है। अपने जीवन-संघर्ष में दलितों ने जिस यथार्थ को भोगा है, दलित साहित्य उसी की अभिव्यक्ति का साहित्य है। यह कला के लिए कला का नहीं, बल्कि जीवन और जीवन की जिजीविषा का साहित्य है, जो मानव को मानवता में रहने की सीख देता है।

आदिवासी

▶ समाज का वह हिस्सा है जो अपने रहन-सहन खान-पान आदि के कारण दूसरे वर्गों से भिन्न

आदिवासी, समाज का वह हिस्सा है जो अपने रहन-सहन, खान-पान आदि के कारण दूसरे वर्गों से भिन्न नज़र आता है या कहा जा सकता है कि वह अन्य समुदायों का हिस्सा बनने से कतराता है, वह अपनी पहचान बनाये रखने के लिए जद्दोजहद करता है। विमर्शों के इस युग में आदिवासी विमर्श भी महत्त्वपूर्ण हो गया है जिसके कारण आदिवासियों के बीच अपनी पहचान को बनाये रखने का प्रश्न खड़ा होता है। यह आदिवासी समाज आदिम युग से वन जंगलों में निवास करने के कारण 'वनवासी' कहलाये जाते हैं। भारत में यह आदिवासी जनजाति के रूप में जाना जाता है। आदिवासी विभिन्न राज्यों में व देशों में मौजूद हैं, यह समाज जिनकी संस्कृति रीति रिवाज, परम्पराएं, रहन-सहन, अलग-अलग प्रदेशों में रहने के बावजूद भिन्न होते हुए भी सभी जनजाति शब्द में समाहित हो जाते हैं। आदिवासी समुदाय पेड़, प्रकृति, जंगलों के बीच ही स्वयं को जुड़ा हुआ महसूस करते है। किन्तु वैश्वीकरण के दौर में आदिवासी समाज के सामने अपने अस्तित्व का संकट गहराता जा रहा है उन्हें जल, जंगल, जमीन से काटने का प्रयास किया जा रहा है। किसी भी समाज को जबरन मूल स्थान, मूल भाषा तथा मूल पहचान से अलग किया जाता है तो उस समाज में असुरक्षा की भावना पनपती है, स्वयं के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए संघर्ष करता है और यही संघर्ष एक सीमा के बाद आन्दोलन का रूप लेता है। इसी आन्दोलन में वह अपने शोषण के प्रति विरोध दर्ज कराता है।

अस्सी-नब्बे के दशक में आदिवासी विमर्श भी उभर कर आया है आदिवासी को जंगल से बाहर निकालने की साजिश की गयी उन जंगलों, वनों को व्यापारिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण बनाया जाए। बाज़ारवाद की वजह से ही आदिवासियों के ऊपर

स्थानान्तरित होने का दबाव महसूस किया जाने लगा। जिन आदिवासियों से इस स्थानान्तरण को आसानी से स्वीकार कर लिया वह अपने स्थानों से निकलकर दिल्ली, मुम्बई, कलकत्ता जैसे महानगरों में अपना जीवन यापन करने के लिए मजबूर हुए। किन्तु जो आदिवासी समाज अपने स्थान को छोड़ना नहीं चाहता या कहे कि वे अपनी अस्मिता को बचाये रखना चाहता था उसने इस स्थानान्तरण की चुनौती को अस्वीकार कर अपने लिए संघर्ष का रास्ता चुना, अब प्रश्न यह उठता है कि जो आदिवासी समाज अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है तो उसे क्यों अपने ही समाज के द्वारा उपेक्षित समझा जा रहा है और दूसरी तरफ वह आदिवासी समाज है जो स्वयं को आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण के कारण अपनी परम्पराओं और संस्कृति से कट चुका है या कटता जा रहा है, वह कहाँ खड़ा है? क्योंकि किसी भी समाज की अस्मिता उसके मूल निवास से भी सम्भवतः जुड़ी होती है ऐसे में क्या इस आधुनिक आदिवासी समाज के सामने अस्मिता का प्रश्न नहीं खड़ा होता?

▶ आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण

किन्नर

साहित्यिक दृष्टिकोण से आज हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अनेक विमर्शों पर चर्चा होती रहती है। समाज के अनेक उपेक्षित समस्याओं एवं वर्गों पर चिंतन और बहस हो रहे हैं।किन्नर विमर्श इनमें प्रमुख है। इन सभी विमर्शों के अन्तर्गत हाशिए पर दबाये हुए एवं तिरस्कृत समुदाय की चर्चा होती है। समाज से बहिष्कृत लिंग निरपेक्ष 'किन्नर विभाग' के संबंध में आज बहुत अधिक चर्चा होती है। दरअसल समाज में स्त्री और पुरुष के अतिरिक्त एक और वर्ग भी है जिन्हें हम घृणा की दृष्टि से देखे जाते हैं। संसार में केवल दो लिंगों के लिए मान्यता मिली है कि स्त्री और पुरुष के लिए लेकिन इनके अतिरिक्त एक और जाति भी है जिन्हें हम किन्नर हिजड़ा, उभयलिंग, ट्रांसजेंडर आदि नाम से पुकारते हैं। वर्तमान समय में इन्हें हिजड़े नाम से जाने जाते हैं।

▶ स्त्री और पुरुष के अतिरिक्त एक और वर्ग

'किन्नर' शब्द हिमाचल प्रदेश के किन्नौर निवासियों के लिए प्रयुक्त होता था। इन वर्गों के पेशे थे कि विशेष संदर्भ में घर-परिवार जाकर बधाइयाँ गाकर आशीर्वाद देकर और रुपये लेकर विदा होना। इन जातियों को दक्षिण में हिजड़े के नाम से जानने लगे जो एक प्रकार की भिक्षावृत्ति से जीवन-यापन करने को विवश थे। पारिवारिक मांगलिक कार्यों, पर्वों, उत्सवों पर इनकी उपस्थिति को प्रायः संदिग्ध दृष्टि से देखा जाता है। ट्रेनों, बसों, बाज़ारों में भी इनको देखा जा सकता है जो मुख्य रूप से वसूली करते हुए पाए जाते हैं। शास्त्रों में इनकी उपस्थिति शुभ सगुन के रूप में माने जाते हैं। परन्तु समाज में उनके प्रति मानवीय और संवेदनशील व्यवहार का घोर अभाव है। किन्नर या हिजड़ों से तात्पर्य उन लोगों से हैं जिनके जननांग पूरी तरह से विकसित न हो पाए, अथवा पुरुष होकर भी स्त्रैण स्वभाव के लोग, जो पुरुषों की जगह स्त्रियों के बीच रहने में सहजता अनुभव करते हैं। इन किन्नरों को चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। वे हैं- बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। वास्तविक हिजड़ा तो बुचरा ही होते हैं, क्योंकि ये जन्मजात न पुरुष, न स्त्री

▶ हिमाचल प्रदेश के किन्नौर निवासियों के लिए प्रयुक्त शब्द

SGOU

होते हैं। नीलिमा वे हैं जो किसी कारणवश स्वयं को हिजड़ा बनने के लिए समर्पित हैं। मानसा तन के स्थान पर मानसिक तौर पर स्वयं को विपरीत लिंग अथवा स्त्रीलिंग के अधिक निकट महसूस करते हैं। हंसा शारीरिक कमी या यौन न्यूनताओं के कारण किन्नर बने होते हैं। नकली हिजड़ों को अबुआ कहा जाता है जो वास्तव में पुरुष होते हैं किन्तु धन के लोभ में हिजड़े का स्वांग रख लेते हैं। जबरन बनाये गये हिजड़े छिबरा कहलाते हैं, परिवार से रंजिश के कारण इनका लिंगविच्छेदन कर इन्हें हिजड़ा बनाया जाता है।

▶ अनेक कथाएँ प्रचलित

किन्नरों के उद्भव के संबंध में अनेक कथाएँ प्रचलित है। इनमें सर्वाधिक प्रचलित एक कथा भगवान श्रीरामचन्द्र जी से संबन्धित है। जब दशरथ की आज्ञा पालन करते हुए राम सीता और लक्ष्मण के साथ चित्रकूट आ गए तो उन्हें मना कर अयोध्या वापस लाने के लिए अयोध्या के सारे लोग चित्रकूट आऐ। लेकिन भरत तथा अयोध्यावसियों की प्रार्थना अस्वीकार करते हुए राम ने सभी नर-नारियों को वापस जाने को कहा। लेकिन हिजड़ों के संबन्ध में उन्होंने कुछ नहीं कहा। कहा जाता है कि श्रीरामचन्द्र जी का कोई स्पष्ट आदेश न होने के कारण हिजड़ों ने चौदह वर्ष तक वहीं रुक कर प्रभु की प्रतीक्षा करते रहे।

▶ महाभारत कथा

प्रचलित एक अन्य कथा का संबंध महाभारत कथा से है। इसके अनुसार एक बार अर्जुन को द्रौपदी से विवाह की एक शर्त के उल्लंघन के कारण राज्य से निष्कासित कर तीर्थयात्रा पर भेजा जाता है। भ्रमण के अवसर पर अर्जुन उत्तर-पूर्व प्रदेश में पहुँच गया जहाँ उनकी मुलाकात एक विधवा नाग राजकुमारी उलूपी से होती है। दोनों के बीच प्यार पलते हैं और विवाह कर लेते हैं। उलूपी एक पुत्र को जन्म देती है और उसका नाम अरावन रखा जाता है। कुछ समय बाद अर्जुन दोनों को वहीं छोड़ कर आगे निकल जाते हैं। अरावन अपनी माँ के साथ नागलोक में रहता है। युवा होने पर अरावन अपने पिता के पास आता है। इस समय कुरुक्षेत्र में महाभारत युद्ध चल रहा था। अर्जुन अरावन को युद्ध करने के लिए रणभूमि में भेज देता है।

युद्ध के अन्त में पांडवों को अपनी जीत के लिए माँ 'काली' के चरणों में नरबलि हेतु एक राजकुमार की ज़रूरत पड़ती है। कोई भी राजकुमार तैयार नहीं होता तो अरावन खुद प्रस्तुत करता है। अरावन बलि के लिए शर्त रखी कि बलि करने से पूर्व की रात एक सुन्दर स्त्री से विवाह करना है। शर्त के कारण बहुत संकट की स्थिति उत्पन्न होती है। कोई भी राजा यह जानते हुए कि अगले दिन अपनी बेटी विधवा हो जाएगी, अरावन से शादी के लिए तैयार नहीं होता है। जब कोई भी रास्ता नहीं बचता है तो भगवान श्रीकृष्ण स्वयं मोहिनी रूप स्वीकार कर अरावन से शादी करते हैं। अगले दिन अरावर अपना जीवन 'काली' के चरणों पर अर्पित करता है। मृत्यु के बाद मोहिनी काफी देर विलाप भी करती है। पुरुष होते हुए भी स्त्री में श्रीकृष्ण अरावन से शादी की। इसलिण किन्नर जो स्त्री रूप में पुरुष माने जाते हैं। समाज में किन्नरों की प्रतिष्ठा अत्यंत हेय दृष्टि से देखी जाती है। यदि किसी परिवार में बुचरा अर्थात् हिजड़े का जन्म होता है, तो परिवार के सदस्य उसे अपने परिवार से दूर करने का प्रयास करते हैं। हिजड़े के माँ-

▶ छिबरा नामक किन्नर बर्ग

बाप भी यही संदेह करते हैं कि बच्चा परिवार की प्रतिष्ठा नष्ट करेगा। अतः वे जल्द से सन्तान को हिजड़ों के बीच छोड़ देते हैं। छिबरा नामक किन्नर बर्ग अत्यंत क्रूर एवं भयावह काम करने वाले हैं। वे लोग शत्रु के परिवार के लड़के-लड़कियों को उठाकर उनके लिंग हटवाकर किन्नर बना देते हैं। ऐसे व्यक्ति को आजन्म नरक तुल्य जीवन बिताना पड़ता है।

▶ उपेक्षित किन्नर वर्गों पर चिंतन

आज भारतीय साहित्य में इन उपेक्षित किन्नर वर्गों पर चिंतन हो रहा है। समाज में इन्हें कोई स्थान नहीं मिला है। कोई भी किन्नर को अपने घर में बुलाना नहीं चाहता है और उनसे सामाजिक संपर्क भी करना नहीं चाहता है। किसी शुभ अवसर पर ये बधाइयाँ देने आते हैं तो घरवाले जल्द ही उन्हें कुछ देकर इनसे जान छुड़ाना चाहते हैं। आज समाज में, राजनीति में, संविधान में, अदालत में और साहित्य में भी इनकी समस्याओं की चर्चा एवं समाधान की कोशिश हो रही है। अब इन्हें राजनीति में और चुनाव में भाग लेने का अधिकार मिला है। इनकी यातनाओं पर चर्चा होती रहती है। साहित्य में तृतीय लिंगी विमर्श व किन्नर विमर्श के नाम पर महत्वपूर्ण चिंतन हो रहा है।

▶ स्त्री

हिन्दी साहित्य में किन्नर समाज की व्यथा-कथा अत्यंत मार्मिक ढंग से चित्रित हुई है। उपेक्षित किन्नरों की असली स्थिति, जीवन-यापन, मानसिक संघर्ष, परिस्थितियों के प्रति संघर्ष, अपने अधिकार के प्रति माँग, सामाजिक प्रतिष्ठा की माँग, शिक्षा की माँग आदि को यथावत रूप में चित्रित करने में आधुनिक हिन्दी साहित्य की रचनाएँ सफल हुई हैं।

बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों में तथा इक्कीसवींसदी के आरंभ में स्त्रियों के प्रश्नों पर विश्वभर के बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों और राजनीतिज्ञों में चर्चा शुरु हुई हैं। इसके पूर्व भी इस विषय पर चर्चा हो रही थी। वैसे देखा जाए तो स्त्रियों की अवस्था को लेकर उन्नीसवीं शती से ही चिंतन शुरु हो जाता है। अतः सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री-चेतना ने ही स्त्री-विमर्श को जन्म दिया है। स्त्री-विमर्श वस्तुतः स्वाधीनता प्राप्ति के बाद की संकल्पना है। स्त्री-विमर्श और कुछ नहीं आत्मचेतना, आत्मसम्मान, आत्मगौरव, समता और समानाधिकारी की पहल का दूसरा नाम है।

▶ स्त्री-विमर्श एक वैचारिक आंदोलन हैं

स्त्री-विमर्श एक वैचारिक आंदोलन हैं। यह आंदोलन स्त्रियों के अधिकारों की माँग करते हुए स्त्री मुक्ति चाहता है और वह आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, वैचारिक एवं लिंग केंद्रित विभेदों को अस्वीकार कर, समान मानवी अधिकारों की भी माँग करता है। सच तो यह है कि स्त्री को अपने अस्तित्व के बोध ने विमर्श की प्रेरणा दी। आत्मसमर्पण और पुरुष की एकाधिकारशाही के माहोल से स्त्री को बाहर लाने का श्रेय स्त्री-विमर्श को ही देना होगा। स्त्री-विमर्श स्त्री को वे सारे अधिकार दिलवाने की चेष्टा है जो पुरुषों को सदियों से प्राप्त हैं। लेकिन स्त्री को हमेशा उनसे वंचित रखा गया है।

अब समय के साथ-साथ स्त्री अपनी अस्मिता के प्रति सचेत हुई है। वर्तमान में वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व, स्वतंत्र व्यक्तित्व और स्वतंत्र निर्णय लेना चाहती है। उसकी अपनी आत्म-निर्भरता उसकी अस्मिता की पहचान है। डॉ. अर्जुन चव्हाण के अनुसार,

SGOU

'स्त्री-विमर्श और कुछ नहीं अपनी 'अस्मिता' की पहचान, 'स्व' की चिंता, अस्तित्व बोध और अधिकार को जतलाने और बतलाने का विचार चिंतन है। स्त्रीआज आत्मनिर्भर है, वह अपने निर्णय खुद ले रही है और अपने विचारों को खुलकर सबके सामने प्रकट कर रही है। वह पुरुषों के कंधे-से-कंधा मिलाकर हर क्षेत्र में अग्रसर बनकर अपना कार्य कर रही है। उससे आज आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक हर क्षेत्र में अपना झेंडा लहराया है। यह सब संपन्न हुआ क्योंकि स्त्री शिक्षित हुई और वह अन्याय एवं शोषण का डटकर मुकाबला करने लगी है। वह अपने कर्तव्य एवं अधिकारों के प्रति अधिक सजग हुई। इतना ही नहीं उसने पुरुष सत्ता के खिलाफ खडे होकर अपने पारंपारिक बेटी, माता और पत्नी इन भूमिकाओं से छुटकारा पाया है।

▶ 'अस्मिता' की पहचान, 'स्व' की चिंता, अस्तित्व बोध और अधिकार को जतलाने और बतलाने का विचार चिंतन

आधुनिक युग में स्त्री जागरण की लड़ाई में राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती तथा विवेकानंद आदि का योगदान रहा हैं। क्योंकि 1829 में राजा राममोहन राय - सती-प्रथा, बहुपत्नी-प्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह- निषेध के विरुद्ध लड़ते हुए स्त्री के पक्ष में ही खडे हुए। वे स्त्री-स्वतंत्रता की स्वीकृति समाज से प्राप्त करना चाहते हैं। स्वामी दयानंद सरस्वती ने स्त्री शिक्षा पर बल देकर उसे बाल-विवाह और वृद्ध-विवाह के विरुद्ध आंदोलन कर 'शारदा ऐक्ट' पास कराया।

▶ स्त्री शिक्षा

स्त्री-विमर्श लिंग केंद्रित है। अब : स्त्री-शोषण का एक बहुत बडा कारण स्त्री देह रही है, इसलिए उनकी मुक्ति को भी उसकी देह से जोड दिया जाता है। स्त्री-देह को लेकर स्त्रीवादीयों में कई तरह की प्रतिक्रियाएँ हैं। तेलगु साहित्यकार वी. वीर लक्ष्मी देवी का मानना है कि पितृ-सत्तात्मक समाज की पहचान के रूप में चले आ रहे स्त्री के वक्ष को ढकनेवाले 'पल्लू' को जला डालने का काम सबसे पहले किया जाना चाहिए। इस संबंध में वें जयप्रभा की कविता 'पल्लू को फूक दो' का उल्लेख करती है। स्त्री-विमर्श के कारण आज स्त्रियों (शहरी) के जीवन में क्रांतिकारी बदलाव आ रहा है, किंतु बडे खेद के साथ यह कहना पड रहा है कि ग्रामीण महिला आज भी पुरुषी मानसिकता एवं परंपरागत अन्याय, अत्याचार का शिकार हो रही हैं।

▶ स्त्री-विमर्श लिंग केंद्रित है

ओमप्रकाश वाल्मीकि

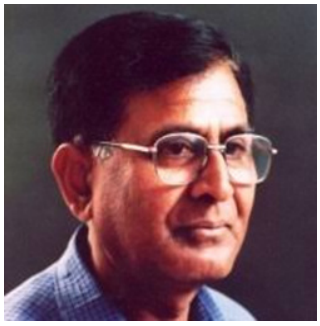

ओमप्रकाश वाल्मीकि का जन्म 30 जून, 1950, बरला, जिला-मुजफ्फरनगर (उत्तरप्रदेश) में हुआ था। वाल्मीकि जी ने एम.ए. (हिन्दी साहित्य) में की है। उनकी प्रकाशित कृतियों-'सदियों का सन्ताप', 'बस्स! बहुत हो चुका' (कविता संग्रह), 'जूठन' (आत्मकथा) इनकी प्रसिद्ध आत्मकथा रही है। पंजाबी, मलयालम, तमिल, कन्नड़, अंग्रेजी, जर्मनी, स्वीडिश भाषाओं में अनूदित, 'सलाम', 'घुसपैठिए' (कहानी-संग्रह): Amma and other stories अंग्रेजी; दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, इन्होंने सम्पादन

SGOU

भी किया है, प्रज्ञा साहित्य (अतिथि सम्पादन) तीसरा पक्ष (सलाहकार सम्पादन)।

वाल्मीकि जी को पुरस्कारों में :- डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार (1993), परिवेश सम्मान (1995), कथाक्रम सम्मान (2001), न्यू इंडिया बुक पुरस्कार (2004), 8वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन (2007), न्यूयार्क, अमेरिका सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान (2008)।

▶ 'जूठन' (आत्मकथा)

हिन्दी दलित कविता की विकास-यात्रा में ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं का एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान है। आक्रोशजनित गम्भीर अभिव्यक्ति में जहाँ अतीत के गहरे दंश हैं, वहीं वर्तमान की विषमतापूर्ण मोहभंग कर देने वाली स्थितियों को इन कविताओं में गहनता और सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है। दलित कविता के आन्तरिक भावबोध और दलित चेतना के व्यापक स्वरूप को इस संग्रह की कविताओं में वैचारिक प्रतिबद्धता और प्रभावोत्पादक अभिव्यंजना के साथ देखा जा सकता है। दलित कवि का मानवीय दृष्टिकोण ही दलित कविता को सामाजिकता से जोड़ता है। कवि की कविताओं में दलित कविता के मानवीय पक्ष को प्रभावशाली ढंग से उभारा गया है।' 'अब और नहीं' संग्रह की कविताओं में ऐतिहासिक सन्दर्भों को वर्तमान से जोड़कर मिथकों को नए अर्थों में प्रस्तुत किया गया है। दलित कविता में पारम्परिक प्रतीकों, मिथकों को नए अर्थ और सन्दर्भों से जोड़कर देखे जाने की प्रवृत्ति दिखाई देती है जो दलित कविता की विशिष्ट पहचान बनाती है।' वाल्मीकि की कविताओं का यथार्थ गहरे भावबोध के साथ सामाजिक शोषण के विभिन्न आयामों से टकराता है और मानवीय मूल्यों की पक्षधरता में खड़ा दिखाई देता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की प्रवाहमयी भावाभिव्यक्ति इन कविताओं को विशिष्ट और बहुआयामी बनाती है। - जैसे उनकी कविता 'शब्द झूठ नहीं बोलते में कहा गया है कि -

▶ यथार्थ गहरे भावबोध के साथ

"नहीं मारा जाएगा तपस्वी शंबूक
नहीं कटेगा अंगूठा एकलव्य का
कर्ण होगा नायक
राम सत्ता लोलुप हत्यारा।
क्या ऐसे दिन कभी आएँगे?"

बस्स बहुत हो चुका - ओमप्रकाश वाल्मीकि

जब भी देखता हूँ मैं
झाड़ू या गंदगी से भरी बाल्टी-कनस्तर
किसी हाथ में
मेरी रगों में
दहकने लगते हैं
यातनाओं के कई हज़ार वर्ष एक साथ
जो फैले हैं इस धरती पर
ठंडे रेतकणों की तरह।

मेरी हथेलियाँ भीग-भीग जाती हैं
पसीने से

आँखों में उतर आता है
इतिहास का स्याहपन
अपनी आत्मघाती कुटिलताओं के साथ।
झाड़ू थामे हाथों की सरसराहट

साफ़ सुनाई पड़ती है भीड़ के बीच
बियाबान जंगल में सनसनाती हवा की तरह।

वे तमाम वर्ष
वृत्ताकार होकर घूमते हैं

करते हैं छलनी लगातार
उँगलियों और हथेलियों को

नस-नस में समा जाता है ठंडा-ताप।
गहरी पथरीली नदी में

असंख्य मूक पीड़ाएँ
कसमसा रही हैं

मुखर होने के लिए रोष से भरी हुईं।
बस्स!

बहुत हो चुका
चुप रहना

निरर्थक पड़े पत्थर
अब काम आएँगे संतप्त जनों के!

ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी साहित्य में दलित चेतना और प्रतिरोध के एक अग्रदूत के रूप में जाने जाते हैं। उनकी रचनाएँ, विशेष रूप से उनकी आत्मकथा 'जूठन', दलित समुदाय के दर्द, अपमान और संघर्षों का मार्मिक और प्रामाणिक चित्रण करती हैं। वाल्मीकि अपनी लेखन शैली में सच्चाई और मुखरता को प्राथमिकता देते हैं, जो उनकी कविताओं और गद्य दोनों में स्पष्ट दिखती है। वे उन सामाजिक विसंगतियों और अन्याय पर प्रहार करते हैं जिन्हें सदियों से चुपचाप सहन किया जाता रहा है। उनकी कविताएँ दलित जीवन की वास्तविकता को उजागर करती हैं और सामाजिक समानता व न्याय की प्रबल वकालत करती हैं। वाल्मीकि अपनी बेबाक भाषा और

जाति-आधारित भेदभाव के खिलाफ सशक्त आवाज़ उठाने के लिए हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं।

'बस! बहुत हो चुका' कविता ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा दलित समुदाय के सदियों के दर्द, अपमान और अब विद्रोह की भावना को अत्यंत शक्ति के साथ व्यक्त करती है। यह कविता उत्पीड़न के खिलाफ एक घोषणापत्र है।

शाब्दिक अर्थ

कवि कहता है कि जब भी वह किसी के हाथ में झाड़ू या गंदगी से भरी बाल्टी-कनस्तर देखता है, तो उसकी रगों में एक साथ हजारों साल की यातनाएँ जलने लगती हैं, जो धरती पर ठंडे रेत के कणों की तरह फैली हुई हैं।

▶ हजारों साल की यातनाएँ जलने लगती हैं

उसकी हथेलियाँ पसीने से भीग जाती हैं और आँखों में इतिहास का कालापन अपनी आत्मघाती जटिलताओं के साथ उतर आता है। झाड़ू पकड़े हाथों की सरसराहट उसे भीड़ के बीच भी ऐसी साफ सुनाई देती है जैसे बयाबान जंगल में हवा सनसना रही हो।

वे तमाम वर्ष (यातना के) वृत्ताकार होकर घूमते हैं और लगातार उंगलियों और हथेलियों को छलनी करते हैं। नस-नस में एक ठंडा ताप (जलन) समा जाता है। गहरी पथरीली नदी में असंख्य मूक पीड़ाएँ (दबी हुई भावनाएँ) गुस्से से भरी हुई, मुखर होने के लिए कसक रही हैं।

▶ बस्स! बहुत हो चुका

अंत में कवि एक घोषणा करता है: 'बस! बहुत हो चुका चुप रहना। निरर्थक पड़े पत्थर अब संतप्त जनों के काम आएँगे!'

आंतरिक अर्थ

कविता का आंतरिक अर्थ जातिगत उत्पीड़न के कारण दलित समुदाय द्वारा सदियों से झेली जा रही पीड़ा, अपमान और उसके विरुद्ध पनपते विद्रोह की भावना को दर्शाता है।

▶ पारंपरिक और अपमानजनक पेशे का प्रतीक

झाड़ू और गंदगी से भरी बाल्टी-कनस्तर दलित समुदाय के पारंपरिक और अपमानजनक पेशे का प्रतीक हैं, जो उन्हें समाज में सबसे निचले पायदान पर रखता है। इन्हें देखते ही कवि की रगों में 'हजारों साल की यातनाएँ' दहक उठती हैं, जो दलित इतिहास के सामूहिक दर्द और शोषण को दर्शाती हैं। 'ठंडे रेतकणों की तरह' फैली यातनाएँ बताती हैं कि यह दर्द व्यापक है और समाज की नींव में गहराई तक समाया हुआ है।

कवि की हथेलियों का पसीने से भीगना और आँखों में 'इतिहास का स्याहपन' उतर आना अतीत के भयानक अनुभवों की स्मृति को दर्शाता है, जो वर्तमान में भी उतना ही प्रासंगिक और दर्दनाक है। 'आत्मघाती कुटिलताओं' का अर्थ उस सामाजिक संरचना से है जो उत्पीड़न को बनाए रखती है और उत्पीड़ितों को आत्म-सम्मान खोने

पर मजबूर करती है।

- सदियों के श्रम, अपमान और अदृश्यता की ध्वनि

'झाड़ू थामे हाथों की सरसराहट' केवल आवाज़ नहीं, बल्कि सदियों के श्रम, अपमान और अदृश्यता की ध्वनि है, जो कवि को भीड़ में भी स्पष्ट सुनाई देती है। यह दलितों की निरंतर उपस्थिति और उनके संघर्षों की निरंतरता का प्रतीक है। 'तमाम वर्ष वृत्ताकार होकर घूमते हैं' यह दर्शाता है कि यह उत्पीड़न एक अंतहीन चक्र की तरह है, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चला आ रहा है और शरीर व आत्मा दोनों को छलनी कर रहा है। 'ठंडा-ताप' विरोधाभासी है, जो स्थिर पीड़ा और दबी हुई आग को व्यक्त करता है जो भीतर ही भीतर जल रही है।

'गहरी पथरीली नदी में असंख्य मूक पीड़ाएँ कसमसा रही हैं मुखर होने के लिए रोष से भरी हुईं' यह सबसे शक्तिशाली प्रतीकों में से एक है। पथरीली नदी उस कठोर और संवेदनहीन समाज का प्रतिनिधित्व करती है जहाँ दलितों की आवाज़ को दबा दिया गया है। 'मूक पीड़ाएँ' उन अनकही कहानियों और दर्द को दर्शाती हैं जो अब विद्रोह के रूप में फूटने को तैयार हैं।

- धैर्य के बांध के टूटने का संकेत

अंतिम पंक्तियाँ 'बस! बहुत हो चुका चुप रहना। निरर्थक पड़े पत्थर अब काम आएँगे संतप्त जनों के !' एक स्पष्ट और सशक्त उद्घोषणा हैं। 'बहुत हो चुका चुप रहना' दलित समुदाय के धैर्य के बांध के टूटने का संकेत है। 'निरर्थक पड़े पत्थर' वे हीन समझे गए लोग (दलित) या उनके दबे हुए संसाधन/शक्ति हैं, जिन्हें अब प्रतिरोध और न्याय की स्थापना के लिए इस्तेमाल किया जाएगा। यह पंक्ति एक सामाजिक परिवर्तन और आत्म-सम्मान की लड़ाई का आह्वान करती है।

हरिराम मीणा (1 मई 1952)

हरिराम मीणा का जन्म राजस्थान के सवाई माधोपुर ज़िले के बामनवास गाँव में 1 मई 1952 को हुआ। राजस्थान विश्वविद्यालय से राजनीति शास्त्र में स्नातकोत्तर डिग्री के साथ भारतीय पुलिस सेवा में कार्यरत रहे जहाँ से पुलिस महानिरीक्षक के पद से सेवानिवृत्त हुए। संप्रति अखिल भारतीय आदिवासी साहित्य मंच, दिल्ली के अध्यक्ष के रूप में सक्रिय हैं।

वह आदिवासी समाज के वरिष्ठ बुद्धिजीवी, कवि, चिंतक, विचारक के रूप में प्रतिष्ठित हैं। कविताओं में प्रस्तुत उनकी वैचारिकी समस्त आदिवासी समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए प्रतिबद्ध है। इस क्रम में उनकी रचनात्मक सक्रियता आदिवासी यथार्थ की अभिव्यक्ति से आगे बढ़ते हुए समग्र मनुष्यता के सांद्र विश्लेषण तक विस्तृत हो जाती है। उनके अब तक तीन कविता-संग्रह ('हाँ, चाँद मेरा है', 'सुबह के इंतज़ार में', 'आदिवासी जलियाँवाला एवं अन्य कविताएँ'), एक प्रबंध-काव्य ('रोया

▶ आदिवासी समाज के वरिष्ठ बुद्धिजीवी, कवि, चिंतक, विचारक

नहीं था यक्ष'), तीन यात्रा-वृतांत, एक उपन्यास, आदिवासी विमर्श की दो पुस्तकें तथा समकालीन आदिवासी कविता (संपादन) पर एक पुस्तक प्रकाशित हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से रचनाओं और वार्ता आदि का प्रकाशन एवं प्रसारण हुआ। उनकी पुस्तकें देश के दर्जनों विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल है। उनके साहित्य पर विभिन्न विश्वविद्यालयों के सौ से ऊपर एम.फिल. एवं आधा दर्ज़न पी.एच.डी. की जा चुकी है।

वह भारतीय पुलिस पदक, राष्ट्रपति पुलिस पदक, वन्यजीव संरक्षण के लिए पद्मश्री सांखला अवार्ड, अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी का सर्वोच्च मीरां पुरस्कार, केन्द्रीय हिंदी संस्थान द्वारा महापंडित राहुल सांकृत्यायन सम्मान, बिड़ला फ़ाउंडेशन के बिहारी पुरस्कार और विश्व हिंदी सम्मान से विभूषित हैं।

एकलव्य पुनर्पाठ - हरिराम मीणा

कान पक गये
सुनते सुनते - गुरू की महिमा
आज्ञाकारी शिष्य
दक्षिणा में अंगूठा
"मैं भी राजा का बेटा 1
अधिकारी विद्या का"

एकलव्य,
क्या ऐसा ही कुछ कहा नहीं तुमने आचार्य द्रोण को

भोले तुम,
आदिम-परंपरा में पला हुआ निर्मल मन
गुरू था "अनुबंधित"
समझाता
हठ तो नहीं, विनय ही की थी
घोर निरादर सने टके सा
सुन जवाब
उम्मीदों का ढूह ढहा
छाती में जैसे तीर चुभा

घर न लौट
वस्तुतः गये गणचिह्न[2] वृक्ष तक
जहाँ-
निकट नाले की गीली माटी से

आचार्य द्रोण की मूर्त्ति बनायी
जिसके चेहरे के भावों में
- गुरूता नहीं,
पक्षधरता की लघुता झलकी

उस प्रतिमा को देख

"तू अनार्य
तू निषाद
तू शूद्र, नीच
दीक्षा लेगा हमसे?"

हाँ, यही शब्द

टकराये होंगे कनपटियों से बार बार
गूँजे होंगे मस्तिष्क कंदराओं के भीतर
ह्रदय-सिंधु में उमड़ा होगा ज्वार घृणा का
भोली आँखों के पर्दों पर खून सिमट आया होगा
घनीभूत प्रतिषोशोध-तरंगें दौड़ी होंगी अंग-अंग में
दृष्टि टिक गयी होगी प्रतिमा के चहरे पर
और स्वतः ही -
बायाँ हाथ उठा आगे
मुट्ठी में पकड़ा कसकर
- धनुर्दण्ड के मध्यभाग को
दाहिना हाथ गया तरकस पर
बाण चढाया
साधा
खींची प्रत्यंचा कंधे तक
(परंपरा के आंगन में सीखा था सबकुछ
चूक कहाँ, कैसे, क्यूं होती)
पहला तीर - बिंधा मस्तक
"लो,
प्रणाम किया गुरू"
- कहा और कर दी बाणों की वर्षा
थमी न होगी तब तक
जब तक
क्षत-विक्षत न हुई वह प्रतिमा
यह "दुस्साहस" देख
गुरू की आज्ञा से शिष्यों ने छोड़ा होगा कुत्ता
किंतु झपटने से पहले

मुख बाणों से भर दिया
बिन प्राण लिये भेजा वापस
देखा - गुरू ने, शिष्यों ने
"प्रिय श्वान !
बाण भरे तरकस सा जबड़ा लहूलुहान
यह हाल !!"
(अद्भुत कौशल लेकिन दुस्साहस)
एकलव्य,
उस वक्त अकेले थे तुम वन में
गुरू की अगुवाई में सब शिष्यों ने घेरा
पकड़ा, पटका तुम्हें धरा पर
और अंगूठा.....
बर्बरता नाची होगी इर्द-गिर्द
चहुँदिशी में गूँजा क्रूर अट्टहास.....
आदिम कुल-कौशल का प्रतीक
वह कटा अंगूठा
धरती पर जब तड़पा कुछ पल
उस वक्त
बताओ एकलव्य,
धोखे से घायल बाघ समान नहीं थे तुम
चीखे-चिल्लाये नहीं
दहाड़े ही होंगे
सुनकर दहाड़
बिन मौसम कड़का आसमान
कांपे थे सिंहों के अयाल
बांसों में अंकुर फूटे थे
थर्रायी खूनसनी धरती
वन में आँधी
भीतर भीतर दहले पर्वत, कुछ शिखर ढहे होंगे
- अवश्य
वह पेड़ हिला होगा जड़ तक
मासूम परिंदे भौंचक्के उड़ भागे होंगे इधर उधर
कोहराम मचा नभमंडल में
ज्यों गाज गिरी हो अंचल में

वह कटा अंगूठा

SGOU

एकलव्य,
था मात्र देह का अंग नहीं
कुछ था उसके पीछे
जैसे -
कौशल की आदि-नदी
अविरत श्रम का गहरा सागर
संकल्पों का ऊँचा पर्वत
स्वप्नों का अनन्त आसमान
जन-संस्कृति की फलवती धरा
उस सबको
- हरने का प्रयास था छुपा हुआ
उस घटना में (2)
फिर भी
तुमने हार न मानी
साधते रहे अपनी विद्या
बिन अंगूठे का पंजा देखा बार बार
घूमे वन में
बदले की आग लिए मन में
जैसे हो घायल बब्बर शेर
सोचा,
"गुरू द्रोण नहीं दोषी
प्रतिद्वंद्वी तो मेरा अर्जुन"
अनवरत काल का यात्रा पथ
आ धमका अटल "महाभारत"
देखा तुमको
- दुर्योधन के दल में
चौंके श्री कृष्ण
खड़े तुम अग्रभाग में
"हे अर्जुन,
यह निषाद है खतरनाक
धनुर्निपुण तुमसे बढ़कर अब भी"
सुन अर्जुन दंग, अवाक
आभा ललाट की क्षीण
ज्यों,
सूरज का तेज ढँका काले बादल ने
एकाग्र दृष्टि तुम पर

SGOU

जिसको मछली की आँख दिखी
उसको
पूरे तुम दिखे काल जैसे
दिल दहला, काँपा सारा तन
आभास हुआ -
चीते के आगे निरीह मृग
"दुर्भेद्य लक्ष्य
कंपायमान है धनुर्दण्ड
प्रत्यंचा खिंचती नहीं
न ही सधते नाराच
निस्तेज हुए दैवीय शस्त्र
हे सखा-सारथी, बनों ईश कुछ करो
- कहा धीरे से गर्दन नीची कर

"मैंने ली सौगंध - रहूँगा शस्त्रहीन
यह भी कि लड़ूँगा नहीं
अदृश्य शक्ति छोड़ूँगा तो
-ईश्वर की छवि का क्या होगा?
पर,
प्रण यह भी -
वर्चस्व तुम्हारा बना रहे"

वह -
चौंसठ कला प्रवीण "ईश"
योगी
चमत्कारी
था बहुत अनुभवी जन्मों से
साधन से बढ़कर
सदा साध्य का था साधक
समझा
सोचा
सूझा विकल्प
लीला अवतारी
थाली से सूरज को ढंक सकता था
उसके समक्ष
छल का संबल ही था विकल्प

SGOU

रण-विधि विरूद्ध का कूट कृत्य
वह गुप्त सुदर्शन चक्र बना
जिसका माध्यम

कितने भी महान धनुर्वीर
आखिर में थे भोले निषाद
सपनों में भी न देख पाये
क्या होती है छल की माया
ईश्वर अर्जुन
अर्जुन ईश्वर
मानव-अवतारी मायावी
थी शक्ति, निपुणता कई गुणी
पर
पुनः कपट की जीत हुई। (3)

संघर्षों का क्रम लंबा था
सतयुग से लेकर द्वापर तक
आगे भी.....

द्वापर का वह महाभारत
उस एक युद्ध की अल्पावधि में
जाने कितने युद्ध छिड़े
द्रोपदी, शिखंडी
कर्ण, द्रोण, अश्वत्थामा
अभिमन्यु, पितामह
पांडुपुत्र, कौरव
उनके साथी-संगी
सबके
अपने अपने प्रण, प्रतिबद्धता, विवशता
सब लड़े लड़ाई निजी निजी
तुम बिना लड़े
सिद्ध हुए एक महा-यौद्धा
अर्जुन न लड़ सका तुमसे
किस धर्मयुद्ध के लिए तुम्हें "ईश्वर" ने मारा?
यह प्रश्न
काल के झोले में कब तक अनसुलझा?

SGOU

मरते हैं व्यक्ति, न परंपरा
प्रतिरोध - नदी बहती रहती
घाटियाँ पार करतीं
चट्टान तोड़ बढती - आगे चलती.....

हाँ, एकलव्य -
वह ईश्वर था
(अच्छा है अमर रहे, खुश रहे स्वर्ग में)
पर,
मृत्युलोक का धर्म निभाना होता है
उस महायुद्ध में जो हारे वे खत्म हुए
जो जीते,
वे चल दिये नियति की राहों पर (4)
अब रहा अकेला ईश्वर
कितना भटका था यहाँ-वहाँ
(यह अलग बात -
स्मृतियों में था पूर्वजन्म
- वाली
वरदान
बैकुण्ठ - धाम)
वह-
अजर, अमर
विभु, पूर्ण, शांत, स्पृहाहीन
- सच्चिदानंद
अब -
गहरा अंतर्द्वंद्व
मकड़जाल
स्वयं का बुना हुआ
अरे सखा अर्जुन,
एकलव्य-वध के प्रेरक,
यह गहन "द्वंद्व"
असफल "गीता"
निस्वन यह वन
बूढा पीपल

SGOU

जिसकी छाया में बैठा मैं
अभ्यंतर पश्चाताप सघन
किस विधि प्राश्यचित करूँ आज
-सौगंध तोड़ अमलिन निषाद को क्यों मारा?

सब चले गये
-कौरव-पांडव, उनका दल-बल
वसुदेव-देवकी
नंद-यशोदा
रानियाँ नहीं हैं आसपास
बलराम समाया सागर में
यदुवंशी "मूसल" ने मारे
बच गया अकेला मैं
एवं यह प्रश्न ठूँठ सा -
उस एकलव्य को कपट नीति से क्यों मारा?

निर्जन
एकांत
पवन स्थिर
वन-प्राणी चुप
वृक्षों में नहीं सरसराहट
चहुँ ओर निपट नीरवरता
जड़-चेतन सब शांत
किंतु ईश्वर अशांत (!)
जिसके -
कानों के पर्दों से टकराता जाता वही प्रश्न
"बिन लड़े लड़ाई अपनी उस यौद्धा को
मैंने क्यों मारा?"
अंततः-
जीवन की कठोर धरती पर
जंगल में जंगल का बदला
मूर्तरूप जारा शबर भील
कुछ था तुमसे उसका रिश्ता
-गुदड़ी के धागों सा
पदमाक्ष चमकता
या कि हरिण की आँख दिखी

SGOU

मौत का बहाना
भ्रमित हुआ आखेटक
या प्रतिशोधातुर?
हत्या
हंता
प्रतिशोध-बाण एवं
अनंत का अंत (!)

1. *एकलव्य निषादों के राजा (प्रमुख) हिरण्यधनु का पुत्र था।*

2. *एकलव्य के आदिवासी कुल का गणचिह्न 'महुवा' का पेड़ रहा है।)*

हरिराम मीणा समकालीन हिंदी कविता में आदिवासी साहित्य और चेतना के एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। उनकी कविताएँ आदिवासी समाज के अनुभवों, संघर्षों, सांस्कृतिक विरासत और उन पर हुए ऐतिहासिक अन्याय को मुखरता से व्यक्त करती हैं। हरिराम मीणा उन कवियों में से हैं जो मुख्यधारा के साहित्य में हाशिये पर धकेले गए समुदायों की आवाज़ को केंद्र में लाते हैं। वे पौराणिक कथाओं और इतिहास को आदिवासी परिप्रेक्ष्य से 'पुर्नपाठ' करने के लिए जाने जाते हैं, जैसा कि इस कविता 'एकलव्य पुनपाठ' में भी स्पष्ट है। उनकी भाषा में एक सहजता और लोक-जीवन की गंध होती है, जो उनके विचारों को प्रभावशाली बनाती है। वे सिर्फ़ दर्द को बयाँ नहीं करते, बल्कि अन्याय के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिरोध भी दर्ज करते हैं।

▶ हाशिये पर धकेले गए समुदायों की आवाज़ को केंद्र में लाते हैं

यह कविता महाभारत के प्रसिद्ध एकलव्य प्रसंग का एक मौलिक और क्रांतिकारी पुनर्पाठ है। यह एकलव्य की कहानी को केवल गुरुभक्ति और गुरुदक्षिणा के रूप में न देखकर, उसे जातिगत भेदभाव, वर्चस्व की राजनीति और अन्याय के प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करती है।

शाब्दिक अर्थ

कविता की शुरुआत में कवि कहता है कि गुरु की महिमा, आज्ञाकारी शिष्य और दक्षिणा में अंगूठे की कहानी सुनते-सुनते कान पक गए हैं। फिर वह एकलव्य से पूछता है, 'मैं भी राजा का बेटा, अधिकारी विद्या का' - क्या तुमने आचार्य द्रोण से ऐसा ही कुछ नहीं कहा था? कवि एकलव्य को भोला बताता है, जो 'आदम-परंपरा' (आदिवासी परंपरा) में पले-बढ़े निर्मल मन का था। उसका गुरु (द्रोण) 'अनुबंधित' (किसी से बंधा हुआ) था। एकलव्य ने हठ नहीं, विनय ही की थी, लेकिन उसे घोर अनादर मिला, और उसकी उम्मीदों का ढेर छाती में तीर की तरह चुभ गया।

▶ घोर अनादर मिला

वह (एकलव्य) घर नहीं लौटा, बल्कि अपने गणचिह्न 'महुवा' वृक्ष तक गया। वहाँ पास के नाले की गीली मिट्टी से उसने आचार्य द्रोण की मूर्ति बनाई, जिसके चेहरे के भावों में गुस्ता नहीं, बल्कि पक्षधरता की लघुता (संकीर्णता) झलक रही थी।

उस प्रतिमा को देखकर, एकलव्य के कानों में 'तू अनार्य, तू निषाद, तू शूद्र, नीच, दीक्षा लेगा हमसे?' जैसे शब्द बार-बार टकराए होंगे। ये शब्द उसके मस्तिष्क में गूँजे होंगे, ह्रदय में घृणा का ज्वार उमड़ा होगा, आँखों के परदे पर खून सिमट आया होगा, और अंग-अंग में घनीभूत प्रतिशोध की लहरें दौड़ी होंगी।

उसकी दृष्टि प्रतिमा के चेहरे पर टिक गई होगी और स्वतः ही बायाँ हाथ आगे उठा होगा। उसने मुट्ठी में कसकर धनुष का मध्यभाग पकड़ा होगा। दाहिना हाथ तरकस पर गया होगा, बाण चढ़ाया होगा, साधा होगा, और प्रत्यंचा कंधे तक खींची होगी (क्योंकि उसने परंपरा के आंगन में सब सीखा था, चूक कहाँ, कैसे, क्यों होती, यह उसे पता था)। पहला तीर द्रोण की प्रतिमा के बंधे मस्तक पर लगा होगा। 'लो, प्रणाम किया गुरु' - कहा होगा और बाणों की वर्षा तब तक नहीं थमी होगी जब तक वह प्रतिमा क्षत-विक्षत नहीं हो गई।

▶ पहला तीर द्रोण की प्रतिमा के बंधे मस्तक पर लगा होगा

यह 'दुस्साहस' देखकर गुरु की आज्ञा से शिष्यों ने कुत्ता छोड़ा होगा, किंतु झपटने से पहले एकलव्य ने उसका मुँह बाणों से भर दिया और उसे बिना प्राण लिए वापस भेजा। गुरु और शिष्यों ने प्रिय श्वान को बाणों से भरे जबड़े और लहूलुहान हालत में देखकर कहा होगा, 'अद्‌भुत कौशल लेकिन दुस्साहस!'

▶ गुरु की आज्ञा से शिष्यों ने कुत्ता छोड़ा

एकलव्य, उस वक्त तुम वन में अकेले थे। गुरु की अगुवाई में सभी शिष्यों ने तुम्हें घेरा, पकड़ा, धरती पर पटका और अंगूठा काट दिया। बर्बरता चारों दिशाओं में नाची होगी, क्रूर अट्टहास गूँजा होगा।

आदम कुल-कौशल का प्रतीक वह कटा अंगूठा जब धरती पर कुछ पल तड़पा, उस वक्त एकलव्य, तुम धोखे से घायल बाघ समान नहीं थे? तुम चीखे-चिल्लाए नहीं, बल्कि दहाड़े ही होंगे। तुम्हारी दहाड़ सुनकर वन में मौसम कड़का, आसमान काँप गए, सिंहों के अयाल हिले, बाँसों में अंकुर फूटे, खूनसनी धरती थर्राई। भीतर ही भीतर आँधी चली, पर्वत दहले, कुछ शिखर ढहे होंगे - अवश्य। वह पेड़ जड़ तक हिला होगा, मासूम परिंदे भौंचक्के होकर उड़ भागे होंगे, और नभमंडल में कोहराम मचा होगा जैसे किसी आँचल में बिजली गिरी हो।

वह कटा अंगूठा, एकलव्य, मात्र देह का अंग नहीं था। उसके पीछे कुछ और था - कौशल की आदि-नदी, अविरत श्रम का गहरा सागर, संकल्पों का ऊँचा पर्वत, स्वप्नों का अनंत आसमान, जन-संस्कृति की फलवती धरा। उस सबको हरने (छीनने) का प्रयास उस घटना में छुपा हुआ था।

▶ वह कटा अंगूठा, एकलव्य, मात्र देह का अंग नहीं था

भाग 2: फिर भी, तुमने हार नहीं मानी, अपनी विद्या साधते रहे। बिना अंगूठे का पंजा बार-बार देखा और मन में बदले की आग लिए वन में घूमते रहे जैसे घायल बब्बर शेर। तुमने सोचा, 'गुरु द्रोण दोषी नहीं, प्रतिद्वंद्वी तो मेरा अर्जुन है।'

अनवरत काल का यात्रा पथ आगे बढ़ा और अटल महाभारत आ धमका। कवि ने

SGOU

तुम्हें दुर्योधन के दल में देखा, तुम आगे खड़े थे। श्री कृष्ण चौंके और अर्जुन से कहा, 'हे अर्जुन, यह निषाद है, खतरनाक धनुर्निपुण, तुमसे बढ़कर अब भी।'

▶ अर्जुन दंग और अवाक् रह गया

यह सुनकर अर्जुन दंग और अवाक रह गया। उसके ललाट की आभा क्षीण हो गई, जैसे सूरज का तेज काले बादल ने ढक लिया हो। उसकी एकाग्र दृष्टि तुम पर टिक गई, जिसे मछली की आँख दिखती थी, उसे तुम काल की तरह पूरे दिखे। उसका दल दहल गया, सारा शरीर काँप गया, उसे आभास हुआ जैसे वह चीते के आगे निरीह मृग हो। 'दुर्भेद्य लक्ष्य, कंपायमान है धनुष, प्रत्यंचा खिंचती नहीं, न ही बाण सधते, दैवीय शस्त्र निस्तेज हुए। हे सखा-सारथी, बनो ईश, कुछ करो' - उसने धीरे से गर्दन नीची करके कहा।

कृष्ण ने सोचा, 'मैंने सौगंध ली है - शस्त्रहीन रहूँगा। यह भी कि लड़ूँगा नहीं। अदृश्य शक्ति छोड़ूंगा तो ईश्वर की छवि का क्या होगा? पर, प्रण यह भी - वर्चस्व तुम्हारा बना रहे।'

▶ छल का संबल ही विकल्प था

वह चौंसठ कलाओं में प्रवीण 'ईश' योगी चमत्कारी और जन्मों से बहुत अनुभवी था। वह साधन से बढ़कर सदा साध्य का साधक था, उसने समझा और विकल्प सूझा। वह लीला अवतारी थाली से सूरज को ढक सकता था। उसके समक्ष छल का संबल ही विकल्प था, रण-वध विरुद्ध का कूट कृत्य वह गुप्त सुदर्शन चक्र बना, जिसका माध्यम। कितने भी महान धनुर्धर थे, आखिर में वे भोले निषाद थे, सपनों में भी न देख पाए क्या होती है छल की माया। ईश्वर अर्जुन, अर्जुन ईश्वर, मानव-अवतारी, शक्ति और निपुणता कई गुना थी, पर पुनः कपट की जीत हुई।

भाग 3: संघर्ष का क्रम लंबा था, सतयुग से लेकर द्वापर तक, और आगे भी जारी रहेगा। द्वापर के उस महाभारत में, एक युद्ध की अल्प अवधि में जाने कितने युद्ध छिड़े। द्रौपदी, शिखंडी, कर्ण, द्रोण, अश्वत्थामा, अभिमन्यु, भीष्म पितामह, पांडुपुत्र, कौरव और उनके साथी-संगी - सबके अपने-अपने प्रण, प्रतिबद्धता, विवशता थी। सबने अपनी-अपनी लड़ाई लड़ी।

▶ बिना लड़े ही एक महा-योद्धा सिद्ध हुए

तुम (एकलव्य) बिना लड़े ही एक महा-योद्धा सिद्ध हुए। अर्जुन तुमसे लड़ नहीं सका। किस धर्मयुद्ध के लिए तुम्हें 'ईश्वर' ने मारा? यह प्रश्न काल के झोले में कब तक अनसुलझा रहेगा? व्यक्ति मरते हैं, न परंपरा। प्रतिरोध की नदी बहती रहती है, घाटियाँ पार करती है, चट्टान तोड़कर आगे बढ़ती रहती है।

हाँ, एकलव्य - वह ईश्वर था (अच्छा है अमर रहे, स्वर्ग में खुश रहे)। पर, मृत्युलोक का धर्म निभाना होता है। उस महायुद्ध में जो हारे, वे खत्म हुए। जो जीते, वे नियत की राहों पर चल दिए।

भाग 4: अब ईश्वर अकेला रह गया। कितना भटका था यहाँ-वहाँ (यह अलग बात - स्मृतियों में था पूर्वजन्म - बाली, वरदान, वैकुंठ धाम)। वह - अजर, अमर, विभु, पूर्ण, शांत, स्पृहाहीन - सच्चिदानंद। अब उसे गहरा अंतर्द्वन्द्व और स्वयं का बुना हुआ

मकड़जाल महसूस होता है।

'अरे सखा अर्जुन, एकलव्य-वध के प्रेरक, यह गहन 'द्वंद्व' असफल 'गीता' नीरस है। यह वन, बूढ़ा पीपल जिसकी छाया में बैठा मैं, मेरा अभ्यंतर पश्चाताप सघन है। किस विधि प्रायश्चित करूँ आज - सौगंध तोड़ अमलन निषाद को क्यों मारा?'

सब चले गए - कौरव-पांडव, उनका दल-बल, वसुदेव-देवकी, नंद-यशोदा, रानियाँ नहीं हैं आसपास। बलराम सागर में समा गया। यदुवंशी 'मूसल' ने मारे, बच गया अकेला मैं और यह प्रश्न ठूंठ सा - 'उस एकलव्य को कपट नीति से क्यों मारा?'

▶ उस एकलव्य को कपट नीति से क्यों मारा?

निर्जन एकांत में पवन स्थिर है, वन-प्राणी चुप हैं, वृक्षों में सरसराहट नहीं है, चारों ओर नितांत नीरवता है। जड़-चेतन सब शांत हैं, किंतु ईश्वर अशांत है। जिसके कानों के परदे से वही प्रश्न बार-बार टकराता जाता है - 'बिना लड़े अपनी लड़ाई उस योद्धा को मैंने क्यों मारा???'

अंततः - जीवन की कठोर धरती पर जंगल में जंगल का बदला मूर्त रूप लेता है। जरा शबर भील का कुछ रिश्ता था तुमसे (एकलव्य से) - जैसे गुदड़ी के धागों सा। पद्माक्ष (कृष्ण की आँखें) चमकतीं या कि हिरण की आँख दिखी? मौत का बहाना भ्रमरित हुआ आखेटक था या प्रतिशोधातुर? हत्या, हंता, प्रतिशोध-बाण और अनंत का अंत।

आंतरिक अर्थ

यह कविता एकलव्य को एक व्यक्तिगत त्रासदी से ऊपर उठाकर एक सामाजिक प्रतीक बनाती है। इसका आंतरिक अर्थ गहरा और बहुआयामी है:

1. जातिगत अन्याय और वर्ण-व्यवस्था का खंडन: कविता गुरु-शिष्य परंपरा की आड़ में छिपे जातिगत भेदभाव को उजागर करती है। द्रोण का एकलव्य को शिक्षा देने से मना करना, और बाद में अंगूठा माँगना, उनकी ब्रह्मणवादी श्रेष्ठता और क्षत्रिय वर्चस्व को बनाए रखने की कुटिल चाल थी। 'तू अनाय, तू निषाद, तू शूद्र, नीच' जैसे शब्द जातिगत अपमान और सामाजिक बहिष्कार की सदियों पुरानी पीड़ा को व्यक्त करते हैं।

▶ गुरु-शिष्य परंपरा की आड़ में छिपे जातिगत भेदभाव

2. आत्म-सम्मान और प्रतिरोध की भावना: एकलव्य का गुरु द्रोण की मिट्टी की मूर्ति बनाकर अभ्यास करना उसके दृढ़ संकल्प और आत्म-शिक्षण का प्रतीक है। मूर्ति को क्षत-विक्षत करना केवल गुस्सा नहीं, बल्कि उस अपमान और अस्वीकृति के प्रति उसका विद्रोह है जो उसे सामाजिक व्यवस्था से मिला। उसका कटा अंगूठा केवल शारीरिक क्षति नहीं, बल्कि उसके कौशल, श्रम और पहचान को मिटाने का प्रयास था, लेकिन इसके बावजूद उसका न दहाड़ना बल्कि भीतर से दहाड़ना उसके अदम्य साहस और भविष्य के प्रतिरोध की नींव है।

▶ दृढ़ संकल्प और आत्म-शिक्षण का प्रतीक

3. वर्चस्व की राजनीति और छल का चित्रण: कविता दिखाती है कि कैसे वर्चस्ववादी

▶ 'देवत्व' और 'धर्म' के नाम पर भी अन्याय को जायज ठहराया जाता है

शक्तियाँ (द्रोण, अर्जुन, कृष्ण) अपने हित और स्थापित व्यवस्था को बनाए रखने के लिए छल और कपट का सहारा लेती हैं। कृष्ण द्वारा अर्जुन का वर्चस्व बनाए रखने के लिए अदृश्य रूप से एकलव्य को नष्ट करने की योजना बनाना, यह दर्शाता है कि कैसे 'देवत्व' और 'धर्म' के नाम पर भी अन्याय को जायज ठहराया जाता है। यह सत्ता के खेल में नैतिकता के पतन को उजागर करता है।

▶ अन्याय के खिलाफ प्रतिरोध की भावना कभी नहीं मरती

4. *प्रतिरोध की शाश्वतता:* कविता यह स्थापित करती है कि व्यक्ति मरते हैं, लेकिन अन्याय के खिलाफ प्रतिरोध की भावना कभी नहीं मरती। एकलव्य का संघर्ष केवल उसका व्यक्तिगत नहीं था, बल्कि सदियों से चले आ रहे दलित-आदिवासी संघर्ष का प्रतीक था। उसकी मृत्यु के बाद भी 'प्रतिरोध की नदी बहती रहती है' - यह भविष्य में होने वाले आंदोलनों और संघर्षों की ओर इशारा करता है।

▶ कर्मफल से स्वयं ईश्वर भी नहीं बच सकते

5. ईश्वर का पश्चाताप और कर्मफल: कविता का सबसे क्रांतिकारी पक्ष कृष्ण (ईश्वर) के अंतर्द्वन्द्व और पश्चाताप का चित्रण है। एकलव्य को छल से मरवाने के बाद कृष्ण का अकेला पड़ जाना, निरंतर 'क्यों मारा?' का प्रश्न उनके कानों में गूँजना, यह दिखाता है कि कर्मफल से स्वयं ईश्वर भी नहीं बच सकते। यह पौराणिक आख्यानों को तोड़कर एक मानवीय और नैतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जहाँ सत्ता के शीर्ष पर बैठे लोग भी अपने गलत कृत्यों के लिए अंततः जवाबदेह होते हैं। जरा शबर द्वारा कृष्ण की मृत्यु को एकलव्य के प्रतिशोध के रूप में देखना, यह दिखाता है कि प्रकृति और इतिहास अपने तरीके से हिसाब चुकाते हैं।

अनीता मिश्रा

▶ अनदेखे और उपेक्षित जीवन के अनुभवों को सामने लाती हैं

अनीता मिश्रा समकालीन हिंदी साहित्य में एक ऐसी कवयित्री के रूप में उभरी हैं जो समाज के हाशिए पर पड़े समुदायों, विशेषकर किन्नर समुदाय की पीड़ा, संघर्ष और पहचान को अपनी कविताओं का विषय बनाती हैं। उनकी कविताएँ प्रायः अनदेखे और उपेक्षित जीवन के अनुभवों को सामने लाती हैं, पाठक को एक अलग दृष्टिकोण से सोचने पर विवश करती हैं। अनीता मिश्रा की लेखन शैली में एक सहजता और भावनात्मक गहराई होती है जो सीधे दिल को छूती है। वे सिर्फ़ तथ्यों का वर्णन नहीं करतीं, बल्कि उन भावनाओं और दर्द को भी व्यक्त करती हैं जो इन समुदायों के साथ जुड़े हैं। वे उन संवेदनशील विषयों पर लिखती हैं जिन पर अक्सर बात नहीं की जाती, इस प्रकार वे समाज में संवाद और संवेदनशीलता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

किन्नर - अनीता मिश्रा

वाह रे प्रभु तेरी माया।
माँ-कोख भी
शर्मिंदा किया
जन्म देकर हमे।
किसी ने ना बधाई दी,
ना किसी ने देखा,

एक घृणा की नजर
ही बनी मेरी ये जिंदगी।

त्रिशंकु बन अधर में
लटका रहा
ले गये उठाकर
अपने जाति में मुझे
अपनों से दूर हुए।
ताली बजाना
स्वांग रचना
जीवन यापन
के लिए पैसे कमाना
ये ही रही बन्दगी मेरी।

नर ना नारी कैसा
अभिशप्त ये जीवन
जी करता
भगवन तेरी कृपा
पर भी ताली बजाऊँ
अपने मन के दुखों की
प्यास बुझाऊँ।

माँगता हूँ अब अधिकार अपना
जीवन-जीने का सपना
हमे भी इज्जत की रोटी
है कहानी,
मेहनत कर सबको दिखानी।

अब नहीं होता हास्य-ड्रामा,
आता है आँखों में पानी
हम देते सबको आशिष,
तब हमें मिलता बख्शीश।

ये जीवन है तो हमे भी सम्मान मिले,
एक नया जीवन का आसमान मिले
सबके साथ हमें भी रहने का अरमान मिले।
कोई तो हाथ बढ़ाओ,

SGOU

कोई तो हमे उठाओ

एक नई आवाज़ दो,
हमें भी हमारा समाज दो।
हमें भी हमारा समाज दो।

"किन्नर" कविता किन्नर समुदाय के जीवन के दर्द, सामाजिक बहिष्कार, पहचान के संघर्ष और सम्मान के साथ जीने की उनकी प्रबल इच्छा को मार्मिकता से प्रस्तुत करती है। यह समाज से उनके लिए स्वीकृति और समानता की माँग है।

शाब्दिक अर्थ

कविता की शुरुआत में किन्नर समुदाय का व्यक्ति कहता है कि 'वाह रे प्रभु तेरी माया' - माँ की कोख को भी उसने जन्म देकर शर्मिंदा कर दिया। किसी ने उन्हें बधाई नहीं दी, न किसी ने देखा; उनकी ज़िंदगी घृणा की नज़र ही बनी रही।

▶ कोख को भी उसने जन्म देकर शर्मिंदा कर दिया

वे 'त्रिशंकु बन अधर में लटका' रहा, यानी न नर में, न नारी में, एक अधूरी पहचान के साथ। उन्हें उनके अपनों से दूर उठाकर उनके 'जात' (किन्नर समुदाय) में ले जाया गया। ताली बजाना, स्वाँग रचना (नकली नाटक करना) और जीवनयापन के लिए पैसे कमाना - यही उनकी 'बंदगी' (जीवनशैली/पूजा) रही।

वे कहते हैं कि न नर, न नारी, यह कैसा अभिशप्त जीवन है। जी करता है कि भगवान की कृपा पर भी ताली बजाएँ (यानी खुशी मनाएँ), अपने मन के दुखों की प्यास बुझाएँ।

▶ न नर, न नारी

अब वे अपना अधिकार माँगते हैं - जीवन जीने का सपना। उन्हें भी इज़्ज़त की रोटी चाहिए, यह कहानी है, जिसे मेहनत करके सबको दिखाना है।

अब उनसे हास्य-ड्रामा (लोगों का मनोरंजन करना) नहीं होता, उनकी आँखों में पानी आता है (यानी दुख होता है)। वे सबको आशीष देते हैं, तब उन्हें बख्शीश (भिक्षा) मिलती है।

वे चाहते हैं कि यह जीवन है तो उन्हें भी सम्मान मिले, एक नया जीवन का आसमान मिले, सबके साथ उन्हें भी रहने का अरमान मिले। वे पुकारते हैं, 'कोई तो हाथ बढ़ाओ, कोई तो हमें उठाओ।' वे एक नई आवाज़ और अपना समाज (समाज में स्वीकृति) चाहते हैं। 'हमें भी हमारा समाज दो।' यह पंक्ति दो बार दोहराई गई है, जो इस माँग की तीव्रता को दर्शाती है।

▶ कोई तो हाथ बढ़ाओ, कोई तो हमें उठाओ

आंतरिक अर्थ

कविता का आंतरिक अर्थ किन्नर समुदाय के गहरे आत्मिक दर्द, सामाजिक बहिष्कार

के कारण उपजे अकेलेपन और उनकी मानवीय गरिमा की खोज में निहित है।

▶ किन्नरों के जन्म के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण

'माँ-कोख भी शर्मिंदा किया जन्म देकर हमें' यह पंक्ति समाज में किन्नरों के जन्म के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण और परिवार द्वारा उन्हें स्वीकार न करने की पीड़ा को दर्शाती है। 'घृणा की नजर ही बनी मेरी ये जिंदगी' यह उनके प्रति समाज की सदियों पुरानी उपेक्षा और नफरत को उजागर करती है।

'त्रिशंकु बन अधर में लटका' रहना उनकी पहचान के संकट का प्रतीक है - न पूरी तरह पुरुष, न पूरी तरह स्त्री, बल्कि एक ऐसी स्थिति जहाँ उन्हें समाज में कोई स्पष्ट और स्वीकृत स्थान नहीं मिलता। 'अपनों से दूर हुए' यह उनके पारिवारिक विच्छेद और भावनात्मक अलगाव को दर्शाता है, जो उन्हें किन्नर समुदाय के भीतर एक नई 'जात' में धकेल देता है।

▶ जीवनयापन के लिए अपनाई जाने वाली पारंपरिक भूमिका

'ताली बजाना, स्वाँग रचना, जीवन यापन के लिए पैसे कमाना ये ही रही बंदगी मेरी' यह उनके जीवनयापन के लिए अपनाई जाने वाली पारंपरिक भूमिकाओं को दर्शाता है। ये भूमिकाएँ अक्सर दूसरों के मनोरंजन या खुशी पर आधारित होती हैं, लेकिन यह उनकी अपनी आंतरिक इच्छा या गरिमा के अनुरूप नहीं होतीं। यह दर्शाता है कि कैसे उन्हें समाज द्वारा एक विशिष्ट भूमिका में बाँध दिया गया है। 'जी करता भगवन तेरी कृपा पर भी ताली बजाऊँ अपने मन के दुखों की प्यास बुझाऊँ' यह उनकी अंदरूनी इच्छा को व्यक्त करता है कि वे भी सामान्य जीवन जिएँ और खुशियों का अनुभव करें, न कि केवल दूसरों को खुश करने या भीख माँगने के लिए ताली बजाएँ।

'माँगता हूँ अब अधिकार अपना जीवन-जीने का सपना' यह पंक्ति कविता के मोड़ को दर्शाती है, जहाँ अब वे केवल दया या भिक्षा नहीं, बल्कि मानवीय अधिकारों और सम्मानपूर्ण जीवन की माँग करते हैं। 'इज्जत की रोटी है कहानी, मेहनत कर सबको दिखानी' यह उनकी अपनी मेहनत और आत्मनिर्भरता से जीवन जीने की इच्छा को व्यक्त करता है, न कि दया पर निर्भर रहने की।

▶ पारंपरिक भूमिकाओं से ऊबने को दर्शाता है

'अब नहीं होता हास्य-ड्रामा, आता है आँखों में पानी हम देते सबको आशीष, तब हमें मिलता बख्शीश' यह उनके आत्म-सम्मान में वृद्धि और पारंपरिक भूमिकाओं से ऊबने को दर्शाता है। वे आशीर्वाद देते हैं, लेकिन बदले में उन्हें केवल 'बख्शीश' मिलती है, जो उनके गुणों के प्रति समाज की संवेदनहीनता को दर्शाता है।

▶ ये जीवन है तो हमें भी सम्मान मिले

अंतिम पंक्तियाँ 'ये जीवन है तो हमें भी सम्मान मिले, एक नया जीवन का आसमान मिले' और 'कोई तो हाथ बढ़ाओ, कोई तो हमें उठाओ 'तथा' हमें भी हमारा समाज दो' - यह समाज से पूर्ण स्वीकृति, समानता और गरिमापूर्ण जीवन के लिए एक मार्मिक और शक्तिशाली आह्वान है। यह कविता किन्नर समुदाय की सदियों की पीड़ा को मुखरता देती है और समाज को उनके प्रति अपनी सोच बदलने का आग्रह करती है।

SGOU

अनामिक

अनामिका का जन्म मुज़फ्फरपुर, बिहार में हुआ। अनामिका सिर्फ कविता में ही नहीं, बल्कि अपने सम्पूर्ण लेखन में नारी-दृष्टि की एक उदार सांस्कृतिक प्रवक्ता बनकर उभरी हैं। उनका स्वर नयी सहस्राब्दी का स्वर है, जिसकी थिर हलचलों में कुलबुलाते कोमल सवाल अपनी तमाम फ़ितरतों के साथ स्थापित विमर्शों को अस्थिर करते चले जाते हैं।

▶ भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार (1995)

अनामिका राजभाषा परिषद पुरस्कार (1987), भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार (1995), साहित्यकार सम्मान (1997), गिरिजाकुमार माथुर सम्मान (1998), परम्परा सम्मान (2001) और साहित्य सेतु सम्मान (2004) से विभूषित हो चुकी हैं।

▶ रचनाएँ

उनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं : आलोचना-पोस्ट एलिएट पोएट्री : अ वॉएज फ्रॉम कांफ्लिक्ट दु आइसोलेशन, डन क्रिटिसिज़्म डाउन दि एजेज़, ट्रीटमेंट ऑव लव ऐंड डेथ इन पोस्ट वार अमेरिकन विमेन पोएट्स; विमर्श-स्त्रीत्व का मानचित्र, मन माँजने की जरूरत, पानी जो पत्थर पीता है; कविता-गलत पते की चिट्ठी, बीजाक्षर, समय के शहर में, अनुष्टुप, कविता में औरत, खुरदुरी हथेलियाँ; कहानी-प्रतिनायक; संस्मरण-एक ठो शहर था, एक थे शेक्सपियर, एक थे चार्ल्स डिकेंस, दस द्वारे की पींजरा; उपन्यास-अवान्तर कथा; अनुवाद-नागमंडल (गिरीश कर्नाड), रिल्के की कविताएँ एफ्रो-इंग्लिश पोएम्स, अटलांत के आर-पार (समकालीन अंग्रेज़ी कविता), कहती हैं औरतें (विश्व साहित्य की स्त्रीवादी कविताएँ)। अनामिका नारी जीवन के हर पहलू पर मुखर होकर लिखती हैं। उनकी कविता 'स्त्रियाँ' पढ़ते हुए ऐसा लंगता है मानों समाज में सबसे ज्यादा महत्त्वहीन, विवश और हाशिए पर पड़ी उपेक्षित नारी सिसक उठी हो निरन्तर प्रताड़ना सहते-सहते जिसकी हिम्मत जवाब दे चुकी है। जो कह रही है-

'हे परमपिताओं,
परमपुरुषों-
बख्शो, बख्शो, अब हमें बक्शो!'

स्त्री कवियों की जहालतें - अनामिका

कविता भी है तो स्त्री ही
कोई उसे सुनता नहीं,
सुनता भी है तो समझता नहीं,
सब उसके प्रेमी हैं और दोस्त कोई नहीं!

कितनी अकेली है
अपनी इस छूछी मांसलता में वो-
मांसलता,
नन्हे कबूतर की-
राजा शिवि तक जो आया था
बाज़ का खदेड़ा हुआ!

अनामिका समकालीन हिंदी कविता और आलोचना के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण नाम हैं। उनकी कविताएँ विशेष रूप से स्त्री-विमर्श, पहचान के संकट, शहरी जीवन की जटिलताओं और भाषाई सूक्ष्मता के लिए जानी जाती हैं। वे भारतीय और पश्चिमी दर्शन, मिथकों और लोक कथाओं का अपनी कविताओं में रचनात्मक उपयोग करती हैं, जिससे उनकी रचनाओं में एक बहुस्तरीय अर्थ उत्पन्न होता है। अनामिका अपनी बौद्धिक गहराई, संवेदनशीलता और भाषा पर पकड़ के कारण हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखती हैं। उनकी कविताएँ अक्सर पारंपरिक धारणाओं को चुनौती देती हैं और पाठक को नए दृष्टिकोण से सोचने पर मजबूर करती हैं।

▶ बौद्धिक गहराई, संवेदनशीलता और भाषा पर पकड़ के कारण हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान

'स्त्री कवियों की जहालतें' कविता स्त्री कवि की स्थिति, उसके अकेलेपन और समाज द्वारा उसकी कला के प्रति समझ के अभाव पर एक मार्मिक टिप्पणी है। यह स्त्री रचनाकार के संघर्ष को एक सूक्ष्म और प्रतीकात्मक तरीके से प्रस्तुत करती है।

शाब्दिक अर्थ

कविता की शुरुआत में कवयित्री कहती है कि कविता भी एक स्त्री ही है। उसे कोई सुनता नहीं है, और अगर सुनता भी है तो समझता नहीं है। सब उसके प्रेमी तो हैं, पर कोई दोस्त नहीं है।

▶ कोई दोस्त नहीं

कवयित्री कहती है कि वह (कविता या स्त्री कवि) अपनी इस 'छूछी मांसलता' (कमज़ोर या तुच्छ शारीरिक अस्तित्व) में कितनी अकेली है। इस मांसलता की तुलना एक नन्हे कबूतर से की गई है, जो राजा शिवि (शिवि नहीं, बल्कि शिबि की कथा है, जहाँ राजा शिबि एक कबूतर को बाज से बचाने के लिए अपने मांस का त्याग करते हैं) तक आया था, बाज द्वारा खदेड़ा हुआ।

आंतरिक अर्थ

कविता का आंतरिक अर्थ स्त्री रचनाकार के अलगाव, उसकी कला के प्रति समाज की संवेदनहीनता और उसे वस्तु के रूप में देखने की प्रवृत्ति में निहित है।

1. *कविता का स्त्रीकरण:* कवयित्री कविता को ही एक स्त्री के रूप में देखती है ('कविता भी है तो स्त्री ही')। यह प्रतीक विधान कविता के प्रति समाज के व्यवहार को स्त्री के प्रति समाज के व्यवहार के समानांतर रखता है। इसका अर्थ यह है कि जिस प्रकार समाज में स्त्री को अक्सर गंभीरता से नहीं लिया जाता, उसकी बात

▶ कविता को ही एक स्त्री के रूप में देखती है

सुनी नहीं जाती या समझी नहीं जाती, उसी प्रकार स्त्री द्वारा रचित कविता को भी समान उपेक्षा का सामना करना पड़ता है।

2. सुनने और समझने का अभावः 'कोई उसे सुनता नहीं, सुनता भी है तो समझता नहीं' - यह पंक्ति स्त्री कवि की अभिव्यक्ति को नज़रअंदाज़ करने और उसकी कला की गहराई को न पहचानने की सामाजिक प्रवृत्ति को दर्शाती है। उसकी कला को सतही या भावनात्मक मानकर खारिज कर दिया जाता है।

3. संबंधों की विडंबनाः 'सब उसके प्रेमी हैं और दोस्त कोई नहीं!' यह एक गहरा विरोधाभास है। 'प्रेमी' होना स्त्री को वस्तु या उपभोग की वस्तु के रूप में देखने का प्रतीक है, जहाँ उसकी शारीरिक सुंदरता या सतही आकर्षण पर ध्यान दिया जाता है, लेकिन उसे एक समान, बुद्धिमान या संवेदनशील व्यक्ति (दोस्त) के रूप में नहीं देखा जाता। यह दिखाता है कि स्त्री कवि की रचना को भी उसके 'स्त्रीत्व' के चश्मे से देखा जाता है, न कि उसकी कलात्मक गुणवत्ता या बौद्धिक सामग्री के लिए। दोस्ती में सम्मान, समानता और समझ होती है, जिसकी कमी स्त्री कवि महसूस करती है।

▶ अभिव्यक्ति को नज़रअंदाज़ करने की प्रवृत्ति

4. मांसलता और भेद्यताः 'छूछी मांसलता' स्त्री के शारीरिक अस्तित्व की नाजुकता और उसके प्रति समाज की तुच्छ दृष्टि को इंगित करती है। यह केवल शारीरिकता तक सीमित रहने का बोध कराती है, जहाँ उसकी बौद्धिक और रचनात्मक क्षमता को अक्सर अनदेखा कर दिया जाता है।

5. शिबि-कबूतर का मिथकः नन्हे कबूतर का राजा शिबि की शरण में आना और बाज द्वारा खदेड़ा जाना एक शक्तिशाली मिथक है। यह स्त्री कवि की असुरक्षा, भेद्यता और शरण की तलाश को दर्शाता है। कबूतर अपनी जान बचाने के लिए राजा की शरण में आता है, और राजा उसे बचाने के लिए अपने शरीर का मांस देने को तैयार हो जाता है। यह मिथक इस ओर इशारा करता है कि स्त्री कवि भी समाज में एक सुरक्षित स्थान, एक संरक्षक या कम से कम एक संवेदनशील श्रोता की तलाश में है जो उसकी कला को 'बचा' सके। 'बाज' यहाँ उन सामाजिक शक्तियों या आलोचकों का प्रतीक हो सकता है जो स्त्री की रचनात्मकता का शिकार करते हैं या उसे कमतर आँकते हैं। 'मांसलता' का संदर्भ यह भी हो सकता है कि स्त्री कवि को अपनी पहचान स्थापित करने के लिए अपने 'स्त्रीत्व' का 'त्याग' करना पड़ता है, या उसे अपने स्त्री शरीर के कारण ही मूल्याँकन किया जाता है, उसकी कला के लिए नहीं।

▶ स्त्री की रचनात्मकता का शिकार करते हैं

SGOU

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस अध्याय में हमने हिन्दी साहित्य के विभिन्न प्रतिरोधात्मक स्वरों पर चर्चा की है। दलित क्या है? दलित विमर्श से क्या मतलब ही और वर्तमान समय में दलित विमर्श की स्थिति क्या है इन सब बातों पर हमने चर्चा की। उसी प्रकार आदिवासी साहित्य के संबंध में भी जानकारी उपलब्ध किया है। उसमें भी आदिवासी का परिचय दिया गया है। किन्नर विमर्श पर भी विस्तार से चर्चा किया गया है। किन्नर से क्या मतलब है? किन्नर की विभिन्न प्रकार एवं किन्नर से जुड़ी विभिन्न कथाएँ और वर्त हिन्दी साहित्य में किन्नर विमर्श को किस प्रकार रखा गया है इन सब की चर्चा इस अध्याय के अंतर्गत रखकर किया गया है। साथ ही स्त्री विमर्श पर भी प्रकाश डाला गया है।

इसके बाद इन सारे विमर्शों को प्रातिनिधय करता हुआ हिन्दी साहित्य के प्रमुख कविताओं का भी अध्ययन हुआ है। 'बस्स बहुत हो चुका' कविता ओमप्रकाश वाल्मीकि की दलित वेदनाओं को व्यक्त करनेवाली सुंदर कविता है। इसमें कवि पर्याप्त प्रति भी व्यक्त किया है। हरिराम मीणा की 'एकलव्य पुनर्पाठ' आदिवासी जीवन की भोलेपन का और बाहरी समाज की कुटिलता का चित्रण है।'किन्नर' कविता में किन्नर जीवन की व्यथाओं का सच्चा चित्रण है। 'स्त्री कवियों की जहालतें' कविता में लेखिका स्त्री को ही कविता मानते हैं।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. साहित्य की प्रतिरोधात्मक स्वर पर प्रकाश डालिए।
2. दलित साहित्य पर टिप्पणी लिखिए।
3. आदिवासी विमर्श की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. किन्नर विमर्श में चर्चित समस्याएँ क्या क्या हैं?
5. स्त्री विमर्श पर चर्चा कीजिए।
6. 'बस्स बहुत हो चुका' कविता का आस्वादन टिप्पणी तैयार कीजिए।
7. 'बस्स बहुत हो चुका' कविता में प्रतिरोध किस प्रकार व्यक्त हुआ है?
8. 'बस्स बहुत हो चुका' कविता में चित्रित दलित दुख क्या क्या है?
9. 'एकलव्य पुनर्पाठ' कविता में किस बात की चर्चा हुई है? चर्चा कीजिए।
10. 'एकलव्य पुनर्पाठ' कविता की विशेषताएँ क्या क्या हैं?
11. 'किन्नर' कविता का सारांश लिखिए।
12. 'किन्नर' कवित्र में किन किन वेदनाओं का ज़िक्र हुआ है?
13. 'स्त्री कवियों की जहालतें' कविता पर टिप्पणी लिखिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. प्रो जयमोहन एम एस - अध्यतन हिन्दी कविताएँ
2. संतोष कुमार चतुर्वेदी - काव्य सरगम
3. सत्यप्रकाश मिश्र - हिन्दी काव्य सोपान

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन

SGOU

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

इकाई 3

अस्मितामूलक विमर्श के अन्य रूप - पारिस्थितिक, प्रवासी, बाल, वृद्ध ज्ञानेन्द्रपती - नदी और साबुन तेजेन्द्र शर्मा - मेरे पासपोर्ट का रंग अंजना संधीर - वे चाहती हैं लौटना

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- अस्मितामूलक विमर्श के विभिन्न रूपों से परिचय प्राप्त करता है
- पारिस्थितिक विमर्श से परिचय प्राप्त करता है
- प्रवासी विमर्श से परिचित होता है
- बाल विमर्श समझता है
- वृद्ध विमर्श के बारे में जानकारी हाज़िल करता है
- ज्ञानेन्द्रपती की 'नदी और साबुन' कविता का अध्ययन करता है
- तेजेन्द्र शर्मा की 'मेरे पासपोर्ट का रंग' कविता पढ़ता है
- अंजना संधीर की 'वे चाहती हैं लौटना' कविता से परिचित होता है

Background / पृष्ठभूमि

अस्मितमूलक विमर्श के विभिन्न रूप है - पारिस्थितिक विमर्श, प्रवासी विमर्श, बाल विमर्श एवं वृद्ध विमर्श। आजकल साहित्य में इन विमर्शों को लेकर पर्याप्त चर्चाएँ चल रही है। पारिस्थितिक विमर्श इसमें बहुत ही महत्व रखता है। पर्यावरण की संरक्षण इस युग की आवश्यकता है। इस ओर हमारा ध्यान जाना अत्यंत आवश्यक है। दूसरी बात है प्रवासी विमर्श का, यह भी महत्वपूर्ण है। विभिन्न जरूरतों केलिए विदेशों में जा बसनेवालों की समस्याओं का इसमें विवेचन होता है।

बचपन जीवन की सबसे सुनहरा समय होता है। इस कालखंड का व्यक्ति के व्यक्तित्व पर गहरा असर होता है। इसलिए इस बात पर भी चर्चा करना आवश्यक है। इसमें मनोवैज्ञानिक धरातल पर विचार होता है। और इसके बाद हम इस अध्याय में चर्चा करेंगे वृद्ध विमर्श पर। वयोजनों की विभिन्न समस्याओं और उनकी अधिकारों पर नजर डाल जाएगा।

तीन कविताएं इस अध्याय में शामिल हैं और इनके लेखकों का भी परिचय इससे प्राप्त कर सकते हैं। इन कविताओं में पर्यावरण एवं प्रवासी जीवन की समस्याओं का चित्रण हुआ है।

SGOU

Keywords / मुख्य बिन्दु

अस्मितामूलक विमर्श, पारिस्थितिक विमर्श, प्रवासी विमर्श, बाल विमर्श, वृद्ध विमर्श, ज्ञानेन्द्रपती, नदी और साबुन, तेजेन्द्र शर्मा, मेरे पासपोर्ट का रंग, अंजना संधीर, वे चाहती हैं लौटना

Discussion / चर्चा

अस्मितामूलक विमर्श के अन्य रूप - पारिस्थितिक, प्रवासी, बाल, वृद्ध

पारिस्थितिक

▶ प्रकृति में वायु, जल, मिट्टी, पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं का जो संतुलन विद्यमान है

मानव सृष्टि प्रकृति की एक अनुपम कृति है। मानव का शरीर पंचतत्त्व-पृथ्वी,जल, वायु, अग्नि और आकाश से बनाया गया है। ये पंचतत्त्व पर्यावरण के अभिन्न अंग है। हमारी भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही पर्यावरण की शुद्धता पर बहुत विचार किया जा रहा है। वेदों व उपनिषदों में पंचतत्त्व व पर्यावरण पर चर्चा की गई है। प्रकृति में वायु, जल, मिट्टी, पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं का जो संतुलन विद्यमान है, उसे ही हम पर्यावरण कह सकते हैं। पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है-हमारे चारों ओर छाया आवरण (परिअआवरण) पर्यावरण ही पर्यावरण है। 'सच पूछा जाय तो, आधुनिक मानव सभ्यता को प्रकृति द्वारा प्रदान की गई सबसे मूल्यवान निधि पर्यावरण है, जिसका संरक्षण एक बड़ा दायित्व है। आधुनिक वैज्ञानिक युग में यह आवश्यक है कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त इस निधि का बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से उपयोग किया जाए और आने वाली पीढ़ी को भी इसके प्रति जागरूक बनाया जाए। पर्यावरणीय चेतना व पर्यावरण संरक्षण आज के युग की प्रमुख माँग है।'

▶ आजकल स्वच्छ व शुद्ध प्राकृतिक पर्यावरण दूषित हो गया है

प्राचीन काल के ऋषि-मुनियों तथा महापुरुषों ने पर्यावरणीय चेतना को जन-जीवन से जोड़ने की कोशिश की है। उनके अनुसार प्रकृति से प्रेम और उसका साहचर्य ही मनुष्य को पर्यावरणीय प्रदूषण से बचा सकता है। अतः भारतीय संस्कृति हमेशा ही पर्यावरण संरक्षण का संदेश देती रही है लेकिन आजकल स्वच्छ व शुद्ध प्राकृतिक पर्यावरण दूषित हो गया है, जिसके अनेक कारण हैं। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक शोषण, जनसंख्या में वृद्धि, अनियंत्रित औद्योगिकीकरण, अनियोजित कांक्रीट भवनों का निर्माण, पर्यावरण असंगत विकास योजनाएँ, परिवहन साधनों की संख्या में वृद्धि, खनन द्वारा खनिजों की प्राप्ति, जंगलों का नाश आदि के कारण पर्यावरणीय विघटन, प्रदूषण तथा पारिस्थितिकीय असन्तुलन होते हैं। इन सबके अलावा हमारी तेजी से बढ़ने वाली आबादी के जीविकोपार्जन हेतु चलाये गए विकास कार्यक्रमों से हो रहे पर्यावरण अपघटन के कारण आज मानव का भविष्य अत्यन्त संकटमय प्रतीत होने लगा है

हमारे कवि एवं लेखक इस खतरनाक स्थिति से पूर्णतया जागरूक हैं। हिन्दी के अनेक

SGOU

विद्वान इस बात पर एकमत हैं कि पर्यावरण-विमर्श के बिना अब कोई गंभीर बहस नहीं है। समकालीन कविता के इस संघर्ष में अनेक प्रकार के 'विमर्श' समाहित हुए हैं, जिनमें 'पर्यावरण विमर्श' भी शामिल हुआ है। हिन्दी के वरिष्ठ कवि-आलोचक डॉ. वेदप्रकाश अमिताभजी के अनुसार-'संवेदना को सुरक्षित रखते हुए 'नारी', 'दलित', 'व्यवस्था' आदि के साथ-साथ 'पर्यावरण' भी समकालीन कविता की केन्द्रीय चिंता का एक उल्लेखनीय पक्ष है। अतः यह आकस्मिक नहीं है कि समकालीन कविता में पर्यावरण-प्रदूषण से उत्पन्न चिंताएँ भी जहाँ-जहाँ झाँकती हैं। अनेक कवियों को लगता है कि आज की अनेक समस्याएँ प्राकृतिक संतुलन के बिगड़ने से पैदा हुई हैं। औद्योगिक और नगरीकरण की अंधी दौड़ ने प्रकृति को इतना क्षत-विक्षत किया है कि उसका खामियाजा हमें कई स्तरों पर भुगतना पड़ रहा है। मौसम-चक्र गड़बड़ाने से लेकर ओज़ोन की पर्त में छेद हो जाने के हादसे मामूली नहीं है और इनके दुष्परिणाम दूरगामी हैं।

▶ कवि एवं लेखक इस खतरनाक स्थिति से पूर्णतया जागरूक

हिन्दी के अनेक कवियों ने चिंता व्यक्त की है कि जब तकनीकी सभ्यता धरती के स्नायुतंत्र को छिन्न-भिन्न करेगी, प्रकृति की स्वाभाविकता को नष्ट करेगी, तब धरती और प्रकृति विक्षुब्ध होगी ही।' त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, अरुण कमल, अशोक वाजपेयी, चंद्रकान्त देवताले, किशोरीलाल व्यास, एकांत श्रीवास्तव, ज्ञानेंद्रपति, लीलाधर मंडलोई, शिशुपाल सिंह, निर्मला पुत्तुल, मानिक बच्छावत, अशोक रावत, वीरेन्द्र आस्तिक, जितेन्द्रनाथ पाठक, कमलेश भट्ट कमल, विनोद पदरज जैसे कवियों ने अपनी कविताओं मे इस तथ्य को बखूबी उभारने की कोशिश की है। अपने समय एवं समाज के प्रति संवेदनशीलता रखने वाले इन कवियों की चिंता यह है कि हमारी हवा प्रदूषित हो रही है, पानी और मिट्टी जहरीली हो गयी है, जंगलों का विनाश हो रहा है, पेड़-पौधे बड़ी मात्रा में कट गये हैं और इन सबसे मौसम निरंतर बदलते जा रहे हैं। हिन्दी के अनेक कवियों ने हमारी जो शाश्वत प्रकृति है, जिसमें पहाड़ हैं, चट्टानें हैं, टीले हैं, पत्थर हैं, नदी-सरोवर हैं, पेड़-पौधे और वनस्पतियाँ हैं, उन सबके प्रति अपने संवेदनाएँ प्रकट की हैं। प्रकृति में मनुष्य के जो अतिरिक्त हस्तक्षेप हैं, उनसे उत्पन्न समस्याओं के प्रति भी ये कवि सचेत हैं।

▶ जंगलों का विनाश हो रहा है, पेड़-पौधे बड़ी मात्रा में कट गये हैं

आज लगभग यह तय हो चुका है कि पूँजीवादी मानसिकता, वैश्वीकरण, बाज़ारवाद आदि के सम्मिलित रूप ने एक अमानवीयकरण को जन्म दिया है, जिसका बुरा असर न केवल मनुष्यों पर ही नहीं, बल्कि नदी, पेड़, पशु-पक्षी और यहाँ तक कि समूची प्रकृति पर भी पड़ा है। पर्यावरण विनाश आज एक वैश्विक समस्या बन गयी है। यह स्पष्ट है कि पर्यावरण का प्रदूष ही मनुष्य समाज में अन्य प्रकार के कई प्रदूषणों को जन्म दे रहा है। 'इसलिए आज ज़रूरत है कि प्राकृतिक संतुलन को असंतुलित न किया जाए, पेड़, नदी, पहाड़ आदि को विकास के नाम पर विकृति के शाप न सौंपा जाए। यदि प्रकृति अनाचार को नहीं सह पायी तो इसके परिणाम सम्पूर्ण मानव समाज के लिए भयानक सिद्ध होंगे'। आज समकालीन कवि यह चाहते हैं कि प्राकृतिक सन्तुलन को असन्तुलित न किया जाए। अतः आज समस्त दुनिया का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर आ

▶ अमानवीयकरण

जाता है। मानव जाति के सुखमय भविष्य के लिए पर्यावरण संरक्षण व पर्यावरण संतुलन बहुत अनिवार्य है। इसके लिए हमें चाहिए कि पर्यावरण की सुरक्षा में पूर्ण सहयोग दें तथा अपनी प्राकृतिक सम्पदा को सुरक्षित रखने का प्रयास करें। नदियों, पर्वतों व वन-सम्पदा और पशु-पक्षी तथा अन्य वन्य जीवन-जन्तु हम सबकी अमूल्य धरोहर है, जिसकी सुरक्षा हम सबका कर्तव्य है। आशा है कि इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप हमारा समाज एक ऐसे स्वच्छ पर्यावरण की कल्पना फिर से कर सकेगा, जिसमें हम सबका तथा हमारे बच्चों का भविष्य उज्ज्वल रहेगा।

▶ पर्यावरण की समस्या को अपने समय की एक जीवंत समस्या के रूप में समझा

समकालीन कवि मनुष्य के जीवन, जगत, समाज और परिवेश का यथार्थ बड़ी स्पष्टता और स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत करते हुए युग के विचारों और समस्याओं को वाणी देते हैं। समकालीन हिन्दी कविता पूर्णतः अपने परिवेश से सम्पृक्त होकर परिवेश के विविध आयामों- सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व प्राकृतिक पक्षों पर गंभीरता से विचार करती है। समकालीन कविता में युगबोध और युग-सत्य का खुला चित्रण हुआ है जिसके कारण इसमें विरोध और आक्रोश का प्रबल स्वर व्यक्त हुआ है। कवियों ने पर्यावरण की समस्या को अपने समय की एक जीवंत समस्या के रूप में समझकर उसमें सक्रिय हिस्सेदारी की इच्छा प्रकट की है।

प्रवासी

▶ साहित्य समाज का दर्पण होता है

साहित्य समाज का दर्पण होता है फिर चाहे वो भारतीय समाज हो या अपनाये हुए देश का समाज हो। प्रवासी भारतीयों की सोच भारत में हो रही गतिविधियों से भी संचालित होती है और यह संचालित सोच प्रवासी लेखन में बखूबी दिखाई भी देती है फिर चाहे वह कोई भी विधा हो। प्रवासी साहित्य में कहानी, उपन्यास, गजल आदि अन्य मुख्य विधाओं में कविता भी एक मुख्य विधा है। प्रवासी हिन्दी कविता साहित्यकार ब्रिटन, न्यूयॉर्क, कनाडा, मॉरिशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद आदि स्थानों को अपनी कर्मभूमि स्वीकार कर साहित्य सृजन करते आए हैं। अपनी देश-परदेश की भूली-बिसरी यादों को जीवंत करती जानी-मानी प्रवासी रचनाकार है सुधा ओम ढींगरा। उनकी सुन्दर और भावात्मक कविताएँ, 'धूप से रूठी चांदनी' काव्य संग्रह में संकलित है। अपने परिवेश में जो दे-खा गया, महसूस किया गया और भोगा गया, उसे विषयवस्तु बनाकर सुधाजी अपनी रचनाओं द्वारा पाठक को अनुभव सागर से जोड लेती है। जैसे इस कविता में देखें-

परदेश से चिट्ठी आई, माँ की आँख भर आई।
लिखा था खुश हूँ मैं चिंता न करना।
घर ले लिया है किश्तों पर।
तुम मेरे जीवन साथी जो बनो।
तो मेरी तलाश के सांझीदार भी बनो।
मेरे व्यक्तित्व को नए नुस्खे न दो।
इस के भीतर का सत्य पहचानो।

यूस्टेन की जानी मानी साहित्यकार इला प्रसाद की कवितायें मानव संघर्षो के इतिवृत्त

को लक्षित करती हुई आगे बढ़ती है। उनका काव्य संग्रह 'शब्दों की शिलाकृति-'धूप का टुकडा' उनके हादय की पारदर्शी अभिव्यक्ति का संकलन है। शिकागों में रहनेवाले कवयित्री रेखा मैत्र जो देस-परदेस के जीवन के बीच में एक संधि पूर्ण पहलू से हमारा परिचय कराती है। कल्पना यथार्थ में परिवर्तित होती है तब कहीं अपने वजूद से परिचित होने की अनुभूति का आभास होता है। यह आभास रेखा जी ने अपने काव्य-संग्रह 'बेनाम रिश्ते' में रेकांकित करती है।

▶ देस-परदेस के जीवन के बीच में एक संधि पूर्ण पहलू

अमेरिका में रहनेवाले अनूप भार्गव भावनात्मक अभिव्यक्ति के मालिक है। वे ई-कविता ग्रूप के संचार और संचालन से जुडे हुए हैं और हिन्दी भाषा का प्रचार प्रसार कर रहे हैं। उनकी पत्नी रचनी भार्गव की कविता के तेवर अपनी एक अलग पहचान देते हैं -

किताबों में कुछ किस्से हैं
मेरी उम्र के कुछ गुजरे हुए हिस्से हैं
उनकी एक प्रसिद्ध कविता है 'भिमान या अभिमान'।
कार ले ली है किश्तों पर।
फर्निचर ले लिया किश्तों पर।

यहाँ तो सब कुछ खरीदा जाता है किश्तों पर अपनी बुलेदियों को साहित्य जगत के शिक्षित की ओर ले जाने वाली डॉ. अंजना संधीर प्रवासिनी के 'बोल' कविता में नारी जाति के संगाठित स्वर को अभिव्यक्ति किया है। इसमें परदेस में बस जाने वाले नारी मन के तडपती हादय वेदना को स्थान दिया गया है। डॉ. अंजना संधीर ने प्रवासी नारी के अस्तित्व को अनोखा सकारात्मक रूप देकर अपने काव्य संग्रह में प्रस्तुत किया गया है। यह निश्चित ही नारी जाति के सम्मान में एक नया मयूर पंख है। हिन्दी भाषा से उनका लगाव का प्रमाण 'चलो एक बार फिर' कविता में प्रकट होती है।

▶ अंजना संधीर ने प्रवासी नारी के अस्तित्व को अनोखा सकारात्मक रूप दिया

साहित्य जगत की एक और जानी मानी हस्ताक्षर है 'कल्पना सिंह चिटनिस'। न्यू यॉर्क निवासी है। प्रवासी हिन्दी कविता लेखन में अपना पहचान बनाये रखने में वह सफल हुए हैं। प्रवासी भारतीय लेखिकाओं में न्यू यॉर्क की निवासी 'डॉ. सुषम बेदी' की काव्य संग्रह 'शब्दों की खिडकियाँ' उनकी रचनाधर्मिता की पहचान है। न्यू यॉर्क निवासी 'डॉ. कमलेश कपूर' का काव्य संग्रह 'अस्तित्व के परमाणु' बहुत रहा है। उन्होंने श्रीमद भगवत गीता का अंग्रेजी में अनुवाद किया है। उनके लिए कविता आत्मा को रुझान तथा मन का लुभान है। न्यू जर्सी के जाने माने लेखक 'सुरेन्द्रनाथ तिवारी' का काव्य संग्रह का नाम है 'पार्थ गाँडीव उठाओ'। यह कविता उनकी प्रवासी हिन्दी कविता जगत की पहचान है।

▶ डॉ. कमलेश कपूर

प्रवासी हिंदी कविता जगत में अपना महत्वपूर्ण योगदान देनेवाले और भी अनेक कवियाँ हैं। जिनमें श्री. रामबाबू गौतम, श्रीमती सीमा अरोरा, डॉ. सुदर्शन प्रियदर्शिनी, पूर्णिमा देसाई, डॉ. सरिता मेहता आदि ऐसे लेखक है जो अपनी कविताओं द्वारा प्रवासी

▶ भारतीय प्रवासी अब भी, उसकी संस्कृति को, सभ्यता को, अपने सीने में धडकता हुआ पाते है

हिन्दी काव्य जगत को सपन्न किया है। इन कविताओं को पढ़कर, सुनकर यही लगता है देस से दूर ये भारतीय प्रवासी अब भी, उसकी संस्कृति को, सभ्यता को, अपने सीने में धडकता हुआ पाते है, तब ही तो वे उस पीडा तडप को महसूस करते है।

बाल

बचपन व्यक्तित्व के निर्माण में सबसे अहम् भूमिका निभाता है। उस समय बच्चे जो देखते हैं, सुनते हैं, उसका उन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इस संदर्भ में बाल साहित्य की भूमिका महत्वपूर्ण है। एक साल से पन्द्रह साल तक का समय एक व्यक्ति की ज़िन्दगी में अत्यधिक अहम हैं। इस आयु में बच्चों में ज्ञान या नयी चीज़ें ग्रहण करने की इच्छा शक्ति तीव्र होती है। 18 की आयु में उनमें कुछ नये कर दिखाने की ललक होती है। लेकिन भारत की शिक्षा प्रणाली में 25-30 सालों तक पुस्तकों में व्यक्ति को उलझाकर रख देते हैं। भारत में बाल साहित्य को केवल मनोरंजन का साधन मात्र माना गया है। इसलिए बाल साहित्य को उतना महत्त्व नहीं मिल पाया, जितना उसे मिलना चाहिए। आज की व्यस्त ज़िन्दगी में माँ-बाप के पास बच्चों के लिए समय ही नहीं होता है कि वे उन्हें सही मार्गदर्शन दे सके। तकनीकी के विकास ने भी बच्चों को बाल साहित्य से दूर कर दिया है। आज कल बच्चे हिंसात्मक फिल्में, मोबाईल गेम आदि में व्यस्त रहते हैं जो उन पर हिंसात्मक प्रभाव छोड़ती है। बच्चों में बालसाहित्य द्वारा संसार के बारे में अनेक अवधारणाएँ कहानी, कविता या कोई चित्रात्मक किताब से बनती और बिगड़ती है।

▶ बचपन व्यक्तित्व के निर्माण में सबसे अहम भूमिका निभाता है

बाल साहित्य बाल मनोविज्ञान के आधार पर लिखा जाता है। बालकों की मानसिक क्रियाओं का वर्णन करता है तथा उनको वैज्ञानिक ढंग से समझने की चेष्टा करता है। बाल विमर्श से अभिप्राय बच्चों के लिए लिखित साहित्य के चिंतन, दशा और संभावनाओं पर आधारित विमर्श है। सामान्यतः साहित्य के क्षेत्र में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि विमर्शों से तात्पर्य वर्ग विशेष द्वारा उसी वर्ग विशेष से संबंधित चिंतन से है। जैसे स्त्री विमर्श का अर्थ है- स्त्री साहित्यकार द्वारा स्त्री जीवन से संबंधित विमर्श, दलित विमर्श अर्थात दलित वर्ग के साहित्यकारों द्वारा दलित वर्ग के जीवन से संबंधित चिंतन आदि। इस संदर्भ में दलित साहित्य के प्रमुख साहित्यकार ओमप्रकाश वाल्मीकि का कथन विचारणीय है दलित द्वारा दलित के जीवन पर लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य है। इसके अतिरिक्त स्वानुभूति पर आधारित साहित्य को ही उस वर्ग विशेष का साहित्य माना जाने लगा है। वस्तुतः समकालीन हिंदी साहित्य में विमर्शों के साहित्य की एक नवीन परंपरा का चलन देखा जा रहा है। इसी तर्ज पर साहित्य में बच्चों पर किए जाने वाले विचार विमर्श को बाल विमर्श के अंतर्गत रखा जा रहा है। साथ ही इस तथ्य पर भी ज़ोर दिया जा रहा है कि किस प्रकार की रचनाओं को बाल साहित्य की श्रेणी में रखा जाए। बाल विमर्श के अंतर्गत बाल साहित्य को कई श्रेणियों में बाँटकर विमर्श का विषय बनाया गया है। जैसे - 1. प्रतिष्ठित साहित्यकारों द्वारा लिखा गया बाल साहित्य, 2. स्वयं बालकों द्वारा लिखा गया साहित्य, जिसमें बच्चे ही केंद्र में हो, 3. अन्य विषयों को केंद्र में रखकर बच्चों द्वारा लिखित रचनाएँ।

▶ बाल साहित्य बाल मनोविज्ञान के आधार पर लिखा जाता है

कई विचारकों का मानना है कि बच्चों द्वारा स्वानुभूति के आधार पर लिखित रचनाएँ हीं बाल विमर्श के अंतर्गत आती हैं। बालक के द्वारा रचित रचना बड़ों के लिए भी हो सकती है, और प्राय होती है।

वृद्ध

हिंदी साहित्य में दलित-विमर्श, स्त्री-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, किन्नर-विमर्श (थर्ड जेंडर विमर्श) के बाद अब वृद्ध-विमर्श की भी धमक सुनाई देने लगी है। वैसे आजकल जिस तरह नई पीढ़ी, युवा पीढ़ी की चर्चा जोरों पर है, उसे देखते हुए वृद्ध-विमर्श का होना भी उचित ही लगता है। वृद्धों या बूढ़ों को लेकर आमतौर पर ऐसे लोगों की तस्वीर उभरती है जो सफेद बाल, झड़े हुए दांत, शिथिल-ऊर्जा हीन शरीर लेकर जीवन-यापन करते हैं। वृद्धावस्था की बात करने पर अक्सर प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक अनातोले फ्रांस का यह कथन याद आता है- 'काश! बुढ़ापे के बाद जवानी आती!' अनातोले का यह कथन बड़ा ही सांकेतिक है। जवानी वह शारीरिक अवस्था है, जो जोश, ऊर्जा, शौर्य से ओत-प्रोत होती है, जिसका उपयोग करते हुए हर व्यक्ति अपने-अपने ढंग से जीवन-यात्रा तय करता है और इस क्रम में वह बुढ़ापा तक पहुंचता है। बुढ़ापे में जवानी वाली ऊर्जा शक्ति तो नहीं रह जाती, रह जाता है विविध अनुभवों का भंडार। इन अनुभवों के आलोक में व्यक्ति को जवानी के अनुभव रहित जोश में किए गए अपने कई गलत निर्णयों और कार्यों का अहसास होता है, तो वह अनुताप की आंच में तपते हुए यह सोचता है कि अगर उसे बुढ़ापे में जवानी जैसी ताकत, स्फूर्ति मिल जाए तो वह पहले से बेहतर, श्रेयस्कर कार्य कर सकता है- यही आशय है अनातेले फ्रांस के इस कथन का।

▶ 'काश! बुढ़ापे के बाद जवानी आती!'

दरअसल, बुढ़ापा जिसे आमतौर पर निष्क्रियता, शिथिलता की शारीरिक दशा समझ कर बहुत काम की चीज नहीं समझा जाता, बचपन से लेकर जवानी तक के जीवनानुभवों का कोश होता है- ऐसा प्रकाश पुंज होता है, जिसके आलोक में युवा पीढ़ी अपने वर्तमान को संवारते हुए भविष्य का शृंगार कर सकती है। यही कारण रहा है कि प्राच्य और पाश्वात्य दोनों परंपराओं में वृद्ध या वृद्धावस्था के प्रति सम्मानजनक भाव रहा है। इतिहास और साहित्य, दोनों ही इस तथ्य के साक्षी हैं कि बूढ़े-बुजुर्गों के अनुभवों-परामर्शों से लाभ उठाने वाली युवा पीढ़ी ही नव-निर्माण कर पाती है, जबकि इसके विपरीत मार्ग पर चलने वाली युवा शक्ति विध्वंस की वीरानगी छोड़ जाती है। इसके प्रमाणस्वरूप हम 'महाभारत' और 'रामायण' की कथाओं को देख सकते हैं।

▶ वृद्धावस्था के प्रति सम्मानजनक भाव

जहाँ तक भारत की बात है, यहाँ पुरातनता या वृद्धावस्था का अनादर नहीं किया गया। तभी तो आज का भी भारतीय मानस और चित्त जितना आधुनिक युग में जीता है, उतना ही वह अपनी पूजा-उपासना की विधियों, विविध रीति-रिवाजों आदि के जरिए बहुत कुछ पुरातन काल से भी जीवंतता प्राप्त करता है और यह सब उसका दोष नहीं, खूबी है। पुरानी मसल है- 'पुराना चावल ही पथ्य के काम आता है।' गाँवों में बुखार

ग्रस्त व्यक्ति को बुखार उतरने पर सुपाच्य आहार के रूप में पुराने चावल का ही भात दिया जाता था और इस चावल को बड़े जतन से संभाल कर रखा जाता था। आज की व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं, असीम इंद्रिय-सुख की चाहत से बीमार होती जा रही मानव-आत्माओं को वाल्मीकि-व्यास से लेकर अब तक के मानवतावादी साहित्य तथा वृद्ध समझे जाने वाले लोगों से नाता जोड़ कर ही नीरोग किया जा सकता है। साथ ही आज के वृद्धों का दायित्व बनता है कि वे अपने अनुभवों के उजाले से युवा-पीढ़ी का प्रगति-पथ आलोकित करें।

ज्ञानेन्द्रपती

जन्म :1 जनवरी 1950। गोड्डा, झारखंड

हिंदी के विलक्षण कवि-व्यक्तित्व कहे जाते ज्ञानेंद्रपति का जन्म 1 जनवरी 1950 को पथरगामा, झारखंड में हुआ था। वह दसेक वर्ष बिहार सरकार के अधिकारी के रूप में कार्यरत रहे, फिर कूलवक्ती कवि के रूप में सक्रिय हुए। उन्हें 'निराला परंपरा' का कवि कहा गया है जो कविता के नहीं निराला द्वारा प्रस्तावित मुक्तछंद के कवि हैं। भाषा बरतने में वह समकालीनों के बीच अपनी तरह के अकेले कवि हैं जो दुस्साहसी शब्द निर्माता भी हैं।

▶ 'निराला परंपरा' का कवि

उनके कवि के परिचय में कहा गया है कि "दरअसल, ज्ञानेंद्रपति को पढ़ना बनते हुए इतिहास के बीच से गुज़रना ही नहीं, युग के कोलाहल के भीतर से छन कर आते उस मंद्र स्वर को सुनना है, इतिहासों से जिसकी सुनवाई नहीं होती; यह नश्वरताओं की भाषा से शाश्वत का द्युति-लेख पढ़ना है।"

'आँख हाथ बनते हुए', 'शब्द लिखने के लिए ही यह काग़ज बना है', 'गंगातट', 'संशयात्मा', 'भिनसार' (2006), 'कवि ने कहा', 'मनु को बनाती मनइ', 'गंगा-बीती' और 'कविता भविता' उनके प्रकाशित काव्य-संग्रह हैं। 'एकचक्रानगरी' उनका काव्य-नाटक है और 'पढ़ते-गढ़ते' में उनके कथेतर गद्य का संकलन हुआ है।

वर्ष 2006 में 'संशयात्मा' शीर्षक कविता-संग्रह के लिए उन्हें साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके अलावा वह 'पहल सम्मान', 'बनारसीप्रसाद भोजपुरी सम्मान', 'शमशेर सम्मान' आदि से सम्मानित किए गए हैं।

▶ 2006 में 'संशयात्मा' के लिए साहित्य अकादेमी पुरस्कार

नदी और साबुन - ज्ञानेन्द्रपती

नदी! तू इतनी दुबली क्यों है
और मैली-कुचैली

SGOU

मरी हुई इच्छाओं की तरह
मछलियाँ क्यों उतराई हैं
तुम्हारे दुर्दिन के दुर्जल में...
आह!
लेकिन स्वार्थी कारखानों का
तेजाबी पेशाब झेलते
बैंगनी हो गई
तुम्हारी शुभ्र त्वचा
हिमालय के होते भी
तुम्हारे सिरहाने
हथेली भर की
एक साबुन की टिकिया से
हार गईं तुम युद्ध ।

'नदी और साबुन' कविता आकार में छोटी और सरल कविता है। आसानी से समझ में आनेवाले शब्दों एवं प्रतीकों का इस्तेमाल इसमें हुआ है। लेकिन यह छोटी कविता भी हमें सोचने को बाध्य करती है। पर्यावरण समस्या की ओर ही यह कविता इशारा करती है।

शाब्दिक अर्थ

▶ शुभ्र त्वचा बैंगनी हो गई है

कवि पूछता है कि नदी तुम इतनी दुबली क्यों हो? और तुम इतनी मैली कुचैली कैसी हो गई? तुमहारे दुर्दिन के इस दुर्जल में मछलियाँ मरी हुई इच्छाओं की तरह क्यों उतर आई हैं? इन सवालों का उत्तर कवि ही बताते हैं। कवि बताते हैं कि स्वार्थी कारखानों की तेजाबी पेशाब झेलते झेलते तुम्हारी शुभ्र त्वचा बैंगनी हो गई है। सिरहाने हिमालय के होते हुए भी एक साबुन की टिकिया से तुम यह महायुद्ध हार गई।

आंतरिक अर्थ

▶ प्रदूषण की ओर इशारा करनेवाली पंक्तियाँ

कविता की शुरुआती पंक्तियों में कवि नदी से अनेक प्रश्न पूछते हैं। कवि पूछते हैं कि विशालकाय एवं समृद्ध नदी, आज तुम इतनी दुबली कैसे हो गई? स्वच्छ एवं निर्मल शरीर से युक्त तुम आज इतनी मैली और कुचैली कैसे हो गई? और तो और तुम्हारी इस दुर्दिन के दुर्जल में मछलियाँ मरी इच्छाओं की तरह उतर आई है। यह सब नदी की प्रदूषण की ओर इशारा करनेवाली पंक्तियाँ हैं। नदी की असली स्वरूप तो विशाल एवं स्वच्छ हुआ करती थी और अब नदी की ऐसी हालत हुई है कि कवि उसे दुर्दिन का संज्ञा देकर पुकारना चाहता है। नदी इतनी मलिन हो गई है कि अब उसमें मछलियाँ भी जिंदा नहीं रह सकती। यह सब नदी की मलिनता का प्रदूषण का तीव्रता को दर्शाते हैं।

इन सारे सवाल पूछने के बाद कवि स्वयं इसका उत्तर देता है। कवि कहता है कि

▶ स्वार्थी कारखाने

स्वार्थी कारखानों की तेजाबी पेशाब झेलते झेलते ही नदी की यह हालत हुई है। स्वार्थी कारखाने से मतलब है पर्यावरण और आसपास के अन्य जीवजंतुओं का खयाल ना रखकर बस अपने फायदे केलिए और आर्थिक मुनाफे केलिए काम करनेवाले कारखाने। तेजाबी पेशाब से मतलब है ऐसे कारखानों से विसर्जित विषैली पदार्थ। इन सब विषैली पदार्थों को नदी में ही बहा दिया जाता है और इससे शुभ्र एवं स्वच्छ त्वचा वाली नदी बैंगनी हो गई है।

▶ प्रदूषण की तीव्रता

सिरहाने हिमालय की छाया होने के बावजूद भी हथेली भर की साबुन की टिकिया से वह यह युद्ध हार गई। सिरहाने हिमालय के होने से मतलब है हिमालय से उद्भवित नदी। और इसतरह हिमालय पर्वत, नदी की माता-पिता हुई और इतने बड़े संरक्षक के होते हुए भी नदी इतनी छोटी सी साबुन की टिकिया के सामने हार गई। यह प्रदूषण की तीव्रता को दर्शाता है। अगर हम इसी तरह पर्यावरण का प्रदूषण करते रहेंगे तो ज्यादा समय प्रकृति टिक नहीं पाएगी।

तेजेन्द्र शर्मा

जन्म: 21 अक्तूबर 1942 (जगरावाँ - पंजाब) भारत।

शिक्षा : एम. ए. अंग्रेज़ी (दिल्ली विश्वविद्यालय)

▶ विषय वैविध्य और विषयों की सामायिकता

समकालीन कथा साहित्य में तेजेंद्र शर्मा एक चर्चित नाम है। तेजेंद्र शर्मा की कहानियाँ उनके सजग साहित्यकार होने का प्रमाण है। वे परिवेश में से पात्र चुन लेते हैं जो पन्नों पर उनकी लड़ाई लड़ते हैं। विषय वैविध्य और विषयों की सामायिकता तेजेंद्र शर्मा की कहानियों की अन्य विशेषताएँ है। कथा साहित्य में शिल्प एवं शैली के स्तर पर जो परिवर्तन हुए हैं, उनकी झलक तेजेंद्र शर्मा की कहानियों में देखने को मिलती है। उन्होंने दूरदर्शन के लिए 'शांति' धारावाहिक का लेखन किया है, अन्नु कपूर निर्देशित फ़िल्म 'अमय' में नाना पाटेकर के साथ अभिनय किया है तथा वे हिंदी साहित्य के एकमात्र अंतर्राष्ट्रीय सम्मान 'अंतर्राष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान' प्रदान करनेवाली संस्था 'कथा यू. के.' के सचिव हैं।

प्रकाशित कृतियाँ:

▶ कृतियाँ

तेजेंद्र शर्मा के काला सागर (1990) ढिबरी टाईट(1994), देह की कीमत (1999) यह क्या हो गया (2003), पासपोर्ट के रंग (2006) और बेघर आंखें (2007) नाम से छे कहानी संग्रह तथा ये घर तुम्हारा है... (2007) नाम से एक कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। ढिबरी टाइट नाम से पंजाबी, इँटों का जंगल नाम से उर्दू तथा पासपोर्ट का रंगहरू नाम से नेपाली में उनकी अनूदित कहानियों के संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने

तीन अँग्रेज़ी पुस्तकें भी लिखी हैं। वे इंग्लैंड से प्रकाशित होने वाली पत्रिका पुरवाई का भी दो वर्ष तक संपादन कर चुके हैं।

पुरस्कार / सम्मानः

1. ढिबरी टाइट के लिये महाराष्ट्र राज्य साहित्य अकादमी पुरस्कार- 1995(प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के हाथों।)
2. सहयोग फ़ाउंडेशन का युवा साहित्यकार पुरस्कार - 1998
3. सुपथगा सम्मान -1987
4. कृति यू.के. द्वारा वर्ष 2002 के लिये 'बेघर आँख' को सर्वश्रेष्ठ कहानी का पुरस्कार
5. प्रथम संकल्प साहित्य सम्मान - दिल्ली (2007)
6. तितली बाल पत्रिका का साहित्य सम्मान - बरेली (2007)
7. भारतीय उच्चायोग द्वारा डॉ. हरिवंशराय बच्चन सम्मान (2008)
8. हरियाणा साहित्य अकादमी सम्मान एवं
9. प्रवासी भारतीय हिन्दी भूषण सम्मान

संप्रति : लंदन के ओवरग्राउण्ड रेलवे में कार्यरत।

▶ पुरस्कार

मेरे पासपोर्ट का रंग - तेजेन्द्र शर्मा

मेरा पासपोर्ट नीले से लाल हो गया है
मेरे व्यक्तित्व का एक हिस्सा
जैसे कहीं खो गया है

मेरी चमड़ी का रंग आज भी वही है
मेरे सीने में वही दिल धड़कता है
जन गण मन की आवाज़, आज भी
कर देती है मुझे सावधान !
और मैं, आराम से, एक बार फिर
बैठ जाता हूं, सोचना जैसे टल जाता है
कि पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है

भावनाओं का समुद्र उछाल भरता है
आइकैरेस सूरज के निकट हुआ जाता है
पंख गलने में कितना समय लगेगा?
धडाम! धरती की खुरदरी सतह
लहु लुहान आकाश हो गया!

रंग आकाश का कैसे जल जाता है?
पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है?

मित्रों ने देशद्रोही कर दिया करार
लाख चिल्लाया, लाख की पुकार
उन्हें समझाया, अपना पहलू बताया
किन्तु उन्हें, न समझना था
न समझे, न ही किया प्रयास
मित्रों का व्यवहार कैसे छल जाता है!
कि पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है

जगरांव से लुधियाना जाना,
ग्रामद्रोह कहलायेगा
लुधियाने से मुंबई में बसना
नगरद्रोह बन जायेगा
मुंबई से लंदन आने में
सब का ढंग बदल जाता है
पासपोर्ट का रंग बदल जाता है

▶ प्रवासी जीवन, पहचान के संकट और सांस्कृतिक विस्थापन की गहरी संवेदना

तेजेन्द्र शर्मा समकालीन हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण लेखक हैं, जिनकी रचनाएँ प्रवासी जीवन, पहचान के संकट और सांस्कृतिक विस्थापन की गहरी संवेदना को व्यक्त करती हैं। वे विशेष रूप से ब्रिटेन में बसे भारतीयों के अनुभवों को अपनी कहानियों और कविताओं में उतारते हैं। शर्मा अपनी सरल, सीधी और मार्मिक भाषा के लिए जाने जाते हैं, जो पाठक को प्रवासी के आंतरिक उथल-पुथल से सीधे जोड़ती है। वे उन सूक्ष्म भावनाओं, द्वंद्वों और चुनौतियों को दर्शाते हैं जो व्यक्ति अपनी जड़ों से दूर एक नई भूमि में अनुभव करता है। तेजेन्द्र शर्मा इस बात में अद्वितीय हैं कि वे बाहरी परिवर्तनों के साथ-साथ व्यक्ति की आंतरिक दुनिया पर पड़ने वाले प्रभावों को इतनी सहजता से व्यक्त कर पाते हैं।

'मेरे पासपोर्ट का रंग' कविता एक प्रवासी भारतीय के पहचान के संकट, अपने वतन से जुड़ाव और बदलते हुए सामाजिक-राजनीतिक परिवेश पर एक मार्मिक टिप्पणी है। यह पासपोर्ट के रंग बदलने को व्यक्ति की आंतरिक और बाहरी दुनिया में आए बदलावों के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करती है।

शाब्दिक अर्थ

कवि कहता है कि उसका पासपोर्ट नीले से लाल हो गया है, और उसे लगता है कि उसके व्यक्तित्व का एक हिस्सा कहीं खो गया है।

▶ सीने में वही दिल धड़कता है

वह बताता है कि उसकी त्वचा का रंग आज भी वही है और उसके सीने में वही दिल धड़कता है। 'जन गण मन' (भारत का राष्ट्रगान) की आवाज़ आज भी उसे सावधान कर देती है, और वह आराम से बैठ जाता है, यह सोचना जैसे टल जाता है कि पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है।

भावनाओं का समुद्र उछाल भरता है, और उसे इकारस की याद आती है जो सूरज के निकट चला जाता है। वह पूछता है कि पंखों को गलने में कितना समय लगेगा? फिर 'धड़ाम' की आवाज़ आती है, धरती की खुरदरी सतह लहूलुहान हो जाती है, और आकाश भी लहूलुहान हो जाता है। वह पूछता है कि आकाश का रंग कैसे जल जाता है और पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है?

▶ मित्रों ने उसे देशद्रोही करार दे दिया

मित्रों ने उसे देशद्रोही करार दे दिया। उसने लाखों बार चिल्लाया, लाखों पुकारें की, उन्हें समझाया और अपना पक्ष बताया, लेकिन उन्हें न समझना था, न वे समझे, न ही उन्होंने कोई प्रयास किया। कवि पूछता है कि मित्रों का व्यवहार कैसे छल जाता है और पासपोर्ट का रंग कैसे बदल जाता है?

जगरांव से लुधियाना जाना 'ग्रामद्रोह' कहलाएगा। लुधियाना से मुंबई में बसना 'नगरद्रोह' बन जाएगा। मुंबई से लंदन आने में सब का ढंग बदल जाता है और पासपोर्ट का रंग बदल जाता है।

आंतरिक अर्थ

कविता का आंतरिक अर्थ पहचान के बहुस्तरीय संकट, भौगोलिक विस्थापन के साथ आने वाले भावनात्मक बदलावों और बदलते हुए रिश्तों पर केंद्रित है।

▶ बदलती हुई राष्ट्रीय पहचान

1. पासपोर्ट का रंग और पहचानः पासपोर्ट का रंग नीले से लाल बदलना केवल नागरिकता में बदलाव का प्रतीक नहीं है, बल्कि व्यक्ति की बदलती हुई राष्ट्रीय पहचान और उससे जुड़े भावनात्मक जुड़ाव का भी प्रतीक है। 'व्यक्तित्व का एक हिस्सा जैसे कहीं खो गया है' यह प्रवासी के उस आंतरिक रिक्तता को दर्शाता है जो अपनी मूल पहचान से दूर होने पर महसूस होती है।

▶ त्वचा का रंग और धड़कता दिल उसकी आंतरिक, अपरिवर्तित पहचान का प्रतीक

2. स्थिरता बनाम परिवर्तनः कवि की त्वचा का रंग और धड़कता दिल उसकी आंतरिक, अपरिवर्तित पहचान का प्रतीक है, जो उसके भारतीय मूल से जुड़ी है। 'जन गण मन' का प्रभाव उसकी गहरी देशभक्ति और सांस्कृतिक जड़ों को दर्शाता है। यह विरोधाभास दिखाता है कि बाहरी परिवर्तन (पासपोर्ट का रंग) आंतरिक जुड़ाव (हृदय की धड़कन, राष्ट्रगान) को पूरी तरह मिटा नहीं सकता। हालाँकि, इस विरोधाभास पर सोचना 'टल जाता है', जो यह दिखाता है कि इस जटिलता को स्वीकार करना कितना मुश्किल है।
3. इकारस का मिथक और भावनात्मक पतनः इकारस का सूरज के निकट जाना और पंखों का गलना प्रवासी के ऊंचे सपनों और नई दुनिया में सफलता पाने की लालसा

SGOU

▶ सपनों की उड़ान में अक्सर विफलता, दर्द और पहचान का नुकसान होता है

का प्रतीक है। लेकिन 'धड़ाम' और 'लहूलुहान आकाश' यह दर्शाता है कि इन सपनों की उड़ान में अक्सर विफलता, दर्द और पहचान का नुकसान होता है। यह एक दर्दनाक वास्तविकता है कि कभी-कभी नई जगह में समायोजन की प्रक्रिया में व्यक्ति अपने आप को बहुत कुछ खोया हुआ पाता है। आकाश का रंग 'जलना' आत्मा के भीतर की पीड़ा और सपनों के टूटने को दर्शाता है।

▶ सामाजिक संवेदनहीनता और संकीर्णता

4. सामाजिक बहिष्कार और विश्वासघात: मित्रों द्वारा 'देशद्रोही' करार देना प्रवासी के लिए सबसे बड़ा भावनात्मक आघात है। यह दिखाता है कि कैसे पलायन को अक्सर देश के प्रति निष्ठा के अभाव के रूप में देखा जाता है, जबकि इसके पीछे कई व्यक्तिगत मजबूरियाँ और सपने हो सकते हैं। मित्रों का न समझना सामाजिक संवेदनहीनता और संकीर्णता को दर्शाता है। यह अपनों से मिले भावनात्मक छल और दूरी को उजागर करता है।

▶ बढ़ते हुए भौगोलिक और सामाजिक विस्थापन

5. भौगोलिक विस्थापन और 'द्रोह' का आरोप: जगरांव से लुधियाना, लुधियाना से मुंबई, और फिर मुंबई से लंदन तक की यात्रा बढ़ते हुए भौगोलिक और सामाजिक विस्थापन को दर्शाती है। 'ग्रामद्रोह' और 'नगरद्रोह' जैसे शब्द इस बात पर व्यंग्य करते हैं कि कैसे छोटी से छोटी जगह बदलने को भी निष्ठा के अभाव के रूप में देखा जा सकता है। यह दर्शाता है कि कैसे समाज व्यक्ति की गतिशीलता को संदेह की नज़र से देखता है, और इस प्रक्रिया में व्यक्ति अपनी पिछली पहचानों से दूर होता जाता है। 'सब का ढंग बदल जाता है पासपोर्ट का रंग बदल जाता है' यह अंतिम पंक्ति इस प्रक्रिया के अनिवार्य और व्यापक प्रभाव को दर्शाती है - केवल पासपोर्ट का रंग नहीं, बल्कि लोगों की सोच, व्यवहार और जीवन का तरीका भी बदल जाता है।

अंजना संधीर

▶ बहुआयामी प्रतिभा की धनी

डा॰ अंजना संधीर का जन्म 1 सितम्बर, को रुड़की (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। बहुआयामी प्रतिभा की धनी, अंजना संधीर मनोविज्ञान में पी-एच. डी हैं एवं हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती और उर्दू में समान अधिकार से लिखती हैं। कई विधाओं - गजल, कविता, संस्मरण, निबंध, अनुवाद, सम्पादन एवं हिन्दी शिक्षण पाठ्य-पुस्तक लेखन- में एक साथ सक्रिय।

प्रकाशित कृतियाँ - 'बारिशों का मौसम', 'धूप छाँव और आंगन', 'मौजे-सहर', 'तुम मेरे पापा जैसे नहीं हो', 'अमरीका हड्डियों में जम जाता है', ' संगम' 'अमरीका एक अनोखा देश', लर्न हिन्दी एंड हिन्दी फ़िल्म सांग्स','अहमदाबाद से अमरीका'। दूरदर्शन के लिए 'स्त्री- शक्ति' सीरियल का निर्माण। 'यादों की परछाइयाँ' और 'इजाफ़ा' का उर्दू से हिन्दी में अनुवाद।

सम्पादनः ' प्रवासी हस्ताक्षर', 'सात समुन्दर पार स', ये कश्मीर ह', प्रवासिनी के बोल ' और 'प्रवासी - आवाज'।

पुरस्कारः गुजरात उर्दू साहित्य- अकादमी पुरस्कार , गुजरात हिन्दी साहित्य अकादमी पुरस्कार, 'तुलसी

सम्मान (लखनऊ), 'अदिति साहित्य शिखर सम्मान'(गाजियाबाद), अखिल भारतीय कविसभा(दिल्ली) का 'काव्यश्री' और 'विक्रमशिला' का 'साहित्यभूषण' पुरस्कार। उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत। इसके अतिरिक्त अमेरिका की विभिन्न संस्थाओं द्वारा विदेश में हिन्दी-सेवा के लिए कई बार पुरस्कृत।

► अनेक पुरस्कार

व्यवसाय : पत्रकारिता से आरम्भ कर अमेरिका में कोलम्बिया विश्वविद्यालय, न्यूयार्क एवं स्टोनी वूक विश्वविद्यालय में कई वर्ष तक हिन्दी का अध्यापन। आठवें विश्व हिन्दी सम्मेलन, न्यूयार्क में उल्लेखनीय भूमिका। 'विश्व मंच पर हिन्दी' का सम्पादन और अमरीका के प्रवासी-हिन्दी साहित्यकारों की पुस्तक-प्रदर्शनी का आयोजन।

संप्रतिः अध्यापन ,गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद।

वे चाहती हैं लौटना - अंजना संधीर

ये गयाना की साँवली-सलोनी ,
काले-लम्बे बालों वाली
तीखे-तीखे नैन-नक्श, काली-काली आँखों वाली
भरी-भरी, गदराई लड़कियाँ
अपने पूर्वजों के घर, भारत
वापस जाना चाहती हैं।

इतने कष्टों के बावजूद,
भूली नहीं हैं अपने संस्कार।
सुनती हैं हिन्दी फ़िल्मी गाने
देखती हैं , हिन्दी फ़िल्में अंग्रेजी सबटाइटिल्स के साथ
जाती हैं मन्दिरों में
बुलाती हैं पुजारियों को हवन करने अपने घरों में।
और, कराती हैं हवन संस्कृत और अंग्रेजी में।

संस्कृत और अंग्रेजी के बीच बचाए हुए हैं
अपनी संस्कृति।
सजाती हैं आरती के थाल, पहनती हैं भारतीय
पोशाकें तीज-त्योहारों पर।

पकाती हैं भारतीय खाने , परोसती हैं अतिथियों को
पढ़ती रहती हैं अपनी बिछुड़ी संस्कृति के बारे में

और चाहती हैं लौटना
उन्हीं संस्कारों में जिनसे बिछुड़ गईं थीं
बरसों पहले उनकी पीढ़ियाँ।

- प्रवासी भारतीय समुदाय की पहचान, संस्कृति और जड़ों से जुड़ाव जैसे विषय

अंजना संधिर एक समकालीन कवयित्री हैं जो अपनी रचनाओं में प्रवासी भारतीय समुदाय की पहचान, संस्कृति और जड़ों से जुड़ाव जैसे विषयों को गहराई से उकेरती हैं। उनकी कविताएँ अक्सर उन भावनाओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को व्यक्त करती हैं जो लोग अपनी मातृभूमि से दूर, एक नई भूमि में अनुभव करते हैं। संधिर इस बात में विशिष्ट हैं कि वे सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और नई पीढ़ी में उसके हस्तांतरण के मुद्दों को संवेदनशीलता से उठाती हैं। उनकी भाषा में एक सहज प्रवाह और आत्मीयता होती है, जो पाठक को प्रवासी भारतीयों के अनुभवों से आसानी से जोड़ देती है।

'वे चाहती हैं लौटना' कविता गयाना में बसे भारतीय मूल की युवा पीढ़ी की अपनी पैतृक संस्कृति और भारत से पुनः जुड़ने की तीव्र इच्छा को व्यक्त करती है। यह कविता सांस्कृतिक विस्थापन और पहचान के द्वंद्व के बावजूद विरासत को सँजोने के प्रयासों को दर्शाती है।

शाब्दिक अर्थ

कविता उन गयाना की सांवली-सलोनी, काले-लम्बे बालों वाली, तीखे नैन-नक्श और काली आँखों वाली भरी-भरी, गदराई लड़कियों का वर्णन करती है जो अपने पूर्वजों के घर, भारत वापस जाना चाहती हैं।

- अपने संस्कारों को भूली नहीं

कवयित्री बताती है कि इतने कष्टों (शायद पूर्वजों द्वारा झेले गए प्रवासी होने के कष्ट) के बावजूद, वे अपने संस्कारों को भूली नहीं हैं। वे हिंदी फ़िल्मी गाने सुनती हैं, अंग्रेजी सबटाइटल्स के साथ हिंदी फ़िल्में देखती हैं, मंदिरों में जाती हैं, और अपने घरों में हवन करवाने के लिए पुजारियों को बुलाती हैं। वे हवन संस्कृत और अंग्रेजी में कराती हैं।

- अपनी संस्कृति को बचाए रखा है

संस्कृत और अंग्रेजी के बीच उन्होंने अपनी संस्कृति को बचाए रखा है। वे आरती के थाल सजाती हैं, तीज-त्योहारों पर भारतीय पोशाकें पहनती हैं। वे भारतीय खाना बनाती हैं और अतिथियों को परोसती हैं। वे अपनी बिछुड़ी हुई संस्कृति(संस्कृति/भाषा) के बारे में पढ़ती रहती हैं।

और वे उन्हीं संस्कारों में लौटना चाहती हैं जिनसे उनकी पीढ़ियाँ बरसों पहले बिछुड़ गई थीं।

आंतरिक अर्थ

कविता का आंतरिक अर्थ सांस्कृतिक विस्थापन के बावजूद अपनी जड़ों से जुड़ने की मानवीय आकांक्षा और पहचान के संरक्षण के लिए पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे संघर्ष को दर्शाता है।

▶ सांस्कृतिक और आध्यात्मिक वापसी

1. जड़ों की ओर वापसी की इच्छा: गयाना की इन लड़कियों का 'भारत वापस जाना' भौतिक वापसी से अधिक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक वापसी की इच्छा है। यह उस गहरे अवचेतन जुड़ाव को दर्शाता है जो प्रवासी समुदायों में अपनी पैतृक भूमि और संस्कृति के प्रति मौजूद होता है, भले ही उन्होंने कई पीढ़ियाँ विदेश में बिता दी हों।

▶ प्रवासी जीवन के संघर्ष

2. सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण: 'इतने कष्टों के बावजूद, भूली नहीं हैं अपने संस्कार' - यह पंक्ति प्रवासी जीवन के संघर्षों और नई भूमि में समायोजन की चुनौतियों के बावजूद, सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने के दृढ़ प्रयास को उजागर करती है। हिंदी फ़िल्में, गाने, मंदिर जाना, हवन करना, भारतीय पोशाकें, और भारतीय खाना बनाना - ये सब अपनी विरासत को जीवंत रखने के तरीके हैं।

▶ मिश्रित सांस्कृतिक पहचान

3. द्विभाषी पहचान और सांस्कृतिक मिश्रण: 'संस्कृत और अंग्रेजी में हवन', और 'अंग्रेजी सबटाइटल्स के साथ हिंदी फ़िल्में' देखना यह दर्शाता है कि ये पीढ़ियाँ पूरी तरह से अपनी मूल संस्कृति में नहीं जी रही हैं, बल्कि एक मिश्रित सांस्कृतिक पहचान विकसित कर चुकी हैं। वे नई भाषा (अंग्रेजी) और पुराने संस्कारों (संस्कृत) के बीच एक सेतु का काम कर रही हैं, जहाँ दोनों का सह-अस्तित्व है। यह एक लचीली सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक है जो खुद को नए वातावरण के अनुकूल ढालते हुए भी अपनी जड़ों से जुड़ी रहती है।

▶ आत्म-ज्ञान और सांस्कृतिक पुनस्र्त्थान की इच्छा

4. खोई हुई 'संस्कृत' की तलाश: 'पढ़ती रहती हैं अपनी बिछुड़ी संस्कृति के बारे म' - यहाँ 'संस्कृति' शब्द न केवल भाषा का, बल्कि समग्र भारतीय संस्कृति और जीवनशैली का प्रतीक है। यह उस भावना को दर्शाता है कि उनकी पीढ़ियाँ अतीत में कुछ महत्वपूर्ण खो चुकी हैं और अब वे उसे फिर से खोजना और आत्मसात करना चाहती हैं। यह आत्म-ज्ञान और सांस्कृतिक पुनरुत्थान की इच्छा है।

▶ पूरे समुदाय की सामूहिक आकांक्षा

5. सामूहिक स्मृति और आकांक्षा: यह कविता केवल व्यक्तिगत लड़कियों की इच्छा नहीं है, बल्कि एक पूरे समुदाय की सामूहिक आकांक्षा है जो अपनी पीढ़ियों से छूटे हुए सांस्कृतिक धागों को फिर से जोड़ना चाहता है। यह उन सभी प्रवासी समुदायों की कहानी है जो अपनी जड़ों से जुड़ने के लिए लगातार प्रयास करते रहते हैं।

SGOU

Summarised Overview / संक्षिप्त अवलोकन

इस इकाई अध्याय में हमने अस्मितामूलक विमर्श के विभिन्न प्रकार - पारिस्थितिक विमर्श, प्रवासी विमर्श, बाल विमर्श एवं वृद्ध विमर्श पर चर्चा की है। प्रत्येक विमर्श की महत्व और उसके अंतर्गत चर्चित बातों का परिचय दिया गया। साथ ही इनसे संबंधित तीन कविताओं का भी चर्चा हुई। ज्ञानेन्द्रपती की 'नदी और साबुन' कविता में प्रदूषण की समस्या पर चर्चा हुआ है। तेजेन्द्र शर्मा की 'मेरे पासपोर्ट का रंग' कविता एवं अंजना संधीर की 'वे चाहती हैं लौटना' कविता में प्रवासी जीवन के बारे में चर्चा किया गया है।

Assignment / प्रदत्त कार्य

1. अस्मितामूलक विमर्श के विभिन्न रूपों से परिचय कराइए।
2. पारिस्थितिक विमर्श पर टिप्पणी लिखिए।
3. प्रवासी विमर्श की अवधारणा समझाइए।
4. बाल विमर्श माने क्या है?
5. वृद्ध विमर्श की महत्व पर टिप्पणी लिखिए।
6. 'नदी और साबुन' कविता की आस्वादन टिप्पणी तैयार कीजिए।
7. लेखक का परिचय देते हुए 'मेरे पासपोर्ट का रंग' कविता का सारांश लिखिए।
8. 'वे चाहती हैं लौटना' कविता का विषय पर चर्चा कीजिए।

Suggested Reading / निर्धारित पुस्तक

1. प्रो जयमोहन एम एस - अध्यतन हिन्दी कविताएँ
2. संतोष कुमार चतुर्वेदी - काव्य सरगम
3. सत्यप्रकाश मिश्र - हिन्दी काव्य सोपान

Reference / संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी कविता प्रयोग से समकालीन तक - एम एस जयमोहन
2. साहित्य के विविध विमर्श - डॉ गीतू खन्ना

Space for Learner Engagement for Objective Questions

Learners are encouraged to develop objective questions based on the content in the paragraph as a sign of their comprehension of the content. The Learners may reflect on the recap bullets and relate their understanding with the narrative in order to frame objective questions from the given text. The University expects that 1 - 2 questions are developed for each paragraph. The space given below can be used for listing the questions.

SGOU

MODEL QUESTION PAPER SETS

SGOU

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

QP CODE: ……

Reg. No : .....
Name : …….....

Model Question Paper- Set-I

POST GRADUATE (CBCS) DISTANCE MODE EXAMINATIONS

M.A HINDI LANGUAGE AND LITERATURE

FOURTH SEMESTER -M23HD11DC- आधुनिक कविता : प्रयोग से समकालीन तक

CBCS-PG Regulations 2021
2023 Admission Onwards

Maximum Time: 3 Hours Maximum Mark: 70

SECTION A

I. किन्हीं पाँच प्रश्नों का उत्तर दो या दो से अधिक वाक्यों में लिखिए।

1. प्रयोगवाद क्या है?
2. तार सप्तक की सात कवियों का नाम लिखिए।
3. नई कविता का प्रयोगवादी कविता से क्या क्या समानताएँ हैं?
4. नकेनवाद क्या है?
5. समकालीन कविता की परिस्थितियाँ कैसी थी?
6. कविता में आम आदमी का चित्रण किसप्रकार हुआ है?
7. 'बच्चे काम पर जा रहे हैं' कविता में किस समस्या पर प्रकाश डाला गया है? व्यक्त कीजिए।
8. आदिवासी अस्मिता माने क्या है?

(5×2 = 10 Marks)

SECTION - B

II किन्हीं छः प्रश्नों का उत्तर एक पृष्ठ के अंतर लिखिए।

9. मुक्तिबोध का परिचय दीजिए।
10. 'मुझे कदम कदम पर' कविता पर टिप्पणी लिखिए।
11. 'बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है' - इस पंक्ति का आशय व्यक्त कीजिए।
12. नई कविता की उद्भव एवं विकास में दूसरे एवं तीसरे सप्तक की भूमिका क्या है?

13. नई कविता के प्रमुख कवियों का परिचय दीजिए।

14. 'अकाल में दूब' कविता में उम्मीद किस प्रकार दिखाया गया है?

15. समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियों पर टिप्पणी लिखिए।

16. 'मेरे साथ कौन कौन आता है' कविता का आशय लिखिए।

17. 'एकलव्य पुनर्पाठ' कविता में एकलव्य की कहानी को कवि किसप्रकार प्रस्तुत करते हैं?

18. 'वृद्ध विमर्श' की महत्व पर टिप्पणी लिखिए।

(6×5 = 30 Marks)

SECTION - C

III. किन्हीं दो प्रश्नों का उत्तर लिखिए। प्रत्येक उत्तर तीन पृष्ठों के अंतर्गत हों।

19. प्रयोगवाद की प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।

20. नई कविता एवं अन्य काव्य आन्दोलनों पर चर्चा कीजिए।

21. कवि का परिचय देते हुए 'मोचीराम' कविता का विस्तृत परिचय दीजिए।

22. 'नदी और साबुन' कविता के आलोक में पारिस्थितिक विमर्श पर चर्चा चलाईए।

(2×15 = 30 Marks)

SGOU

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

QP CODE: ……

Reg. No : .....
Name : …….....

Model Question Paper- Set-II

POST GRADUATE (CBCS) DISTANCE MODE EXAMINATIONS

M.A HINDI LANGUAGE AND LITERATURE

FOURTH SEMESTER -M23HD11DC- आधुनिक कविता : प्रयोग से समकालीन तक

CBCS-PG Regulations 2021
2023 Admission Onwards

Maximum Time: 3 Hours Maximum Mark: 70

SECTION A

I. किन्हीं पाँच प्रश्नों का उत्तर दो या दो से अधिक वाक्यों में लिखिए।

1. कवि अज्ञेय का परिचय दीजिए।
2. 'पंद्रह अगस्त' कविता का आशय लिखिए।
3. नए कवि 'नरेश मेहता' की संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. 'घर की ओर' कविता का आशय व्यक्त कीजिए।
5. समकालीन कविता के किन्हीं चार प्रमुख कवियों का नाम लिखिए।
6. लीलाधर जगूडी की किन्हीं चार काव्य संग्रहों का नाम लिखिए।
7. 'किन्नर' कवित्र में व्यक्त किन्नर जीवन की आशाएँ क्या क्या है?
8. साहित्य में पारिस्थितिक विमर्श की महत्व एवं भूमिका।

(5×2 = 10 Marks)

SECTION - B

II किन्हीं छः प्रश्नों का उत्तर एक पृष्ठ के अंतर लिखिए।

9. प्रयोगवाद की प्रमुख कवियों का परिचय दीजिए।
10. प्रयोगवाद की प्रवृत्तियों पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।
11. नई कविता की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।
12. 'पोस्टर और आदमी' कविता पर टिप्पणी लिखिए।

13. साठोत्तरी कविता में आम आदमी को कविता के केंद्र में किसप्रकार रखा गया है?

14. कवि धूमिल का परिचय दीजिए।

15. 'मैं तो यहाँ हूँ' कविता में ईश्वरीय सत्ता को किसप्रकार चित्रित किया हुआ है?

16. आधुनिक कविता पर भूमंडलीकरण की प्रभाव पर चर्चा कीजिए।

17. दलित जीवन की सच्चाईयों को 'बस्स बहुत हो चुका' कविता के आलोक में व्यक्त कीजिए।

18. प्रवासी जीवन की वेदना एवं घुटन पर प्रकाश डालिए।

(6×5 = 30 Marks)

SECTION - C

III. किन्हीं दो प्रश्नों का उत्तर लिखिए। प्रत्येक उत्तर तीन पृष्ठों के अंतर्गत हों।

19. 'कलगी बाजरे की' कविता की लेखक परिचय सहित विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

20. 'टूटा पहिया' कविता की आस्वादन टिप्पणी लिखिए।

21. समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।

22. 'स्त्री मेरे भीतर' कविता में चित्रित नारी जीवन एवं उसकी विडम्बनाओं पर आलोचनात्मक टिप्पणी लिखिए।

(2×15 = 30 Marks)

SGOU

NO TO DRUGS തിരിച്ചിറങ്ങാൻ പ്രയാസമാണ്

SCOU

ആരോഗ്യ കുടുംബക്ഷേമ വകുപ്പ്, കേരള സർക്കാർ

സർവ്വകലാശാലാഗീതം

വിദ്യയാൽ സ്വതന്ത്രരാകണം
വിശ്വപൗരരായി മാറണം
ഗ്രഹപ്രസാദമായ് വിളങ്ങണം
ഗുരുപ്രകാശമേ നയിക്കണേ

കൂരിരുട്ടിൽ നിന്നു ഞങ്ങളെ
സൂര്യവീഥിയിൽ തെളിക്കണം
സ്നേഹദീപ്തിയായ് വിളങ്ങണം
നീതിവൈജയന്തി പാറണം

ശാസ്ത്രവ്യാപ്തിയെന്നുമേകണം
ജാതിഭേദമാകെ മാറണം
ബോധരശ്മിയിൽ തിളങ്ങുവാൻ
ജ്ഞാനകേന്ദ്രമേ ജ്വലിക്കണേ

കുരീപ്പുഴ ശ്രീകുമാർ

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Regional Centres

Kozhikode
Govt. Arts and Science College
Meenchantha, Kozhikode,
Kerala, Pin: 673002
Ph: 04952920228
email: rckdirector@sgou.ac.in

Thalassery
Govt. Brennen College
Dharmadam, Thalassery,
Kannur, Pin: 670106
Ph: 04902990494
email: rctdirector@sgou.ac.in

Tripunithura
Govt. College
Tripunithura, Ernakulam,
Kerala, Pin: 682301
Ph: 04842927436
email: rcedirector@sgou.ac.in

Pattambi
Sree Neelakanta Govt. Sanskrit College
Pattambi, Palakkad,
Kerala, Pin: 679303
Ph: 04662912009
email: rcpdirector@sgou.ac.in

SGOU

आधुनिक कविता : प्रयोग से समकालीन तक

Course Code: M23HD11DC

SGOU

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

YouTube

ISBN 978-81-990686-8-1
9 788199 068681

Sreenarayanaguru Open University
Kollam, Kerala Pin- 691601, email: info@sgou.ac.in, www.sgou.ac.in Ph: +91 474 2966841